प्रकीर्णक-पुस्तकमाला नं० २।

कनक-रेखा।

(फूलोंका गुच्छा—द्वितीय भाग।)

अर्चना-सम्पादक

श्रीयुत केशवचन्द्र गुप्त, एम०ए०, बी०एल०की

बंगला-पुस्तकका हिन्दी अनुवाद।

अनुवादक—

श्रीयुत पण्डित ज्वालादत्त शर्मा।

प्रकाशक—

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

बम्बई।

द्वितीयावृत्ति] भाद्र, १९८५ वि०, [मूल्य एक रुपया।

सितम्बर, सन् १९२८

प्रकाशक—

नाथूराम प्रेमी,

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-कार्यालय,

हीराबाग, पो० गिरगाँव, बम्बई ।

मुद्रक—

विनायक बाळकृष्ण परांजपे,

नेटिव ओपिनियन प्रेस,

आंग्रेवाड़ी, गिरगांव—बम्बई ।

भूमिका।

(प्रथमावृत्तिसे)

छोटी गल्पें लिखनेका चलन नया नहीं है। पहले भी छोटी गल्पें लिखी जाती थीं; पर इधर कुछ दिनोंसे गल्पोंका बाजार खूब गर्म है। हर भाषाके साहित्यमें इसी तरहके साहित्यकी खूब वृद्धि हो रही है। अब, इनके सामने बड़े बड़े उपन्यासोंकी प्रभा क्षीणसी पड़ गई है। निस्सन्देह गल्प लिखना उपन्यास लिखनेसे ज्यादा मुश्किल है। उपन्यासका क्षेत्र खूब विस्तृत होता है। उसमें विविध प्रकारके विभिन्नगुणविशिष्ट पात्रोंकी भी कमी नहीं होती। किसी रसकी अवतारणामें, किसी पात्रके चरित्रसम्बन्धी सूक्ष्म विश्लेषणमें उपन्यासकारको गल्पलेखकसे अधिक सुभीता और अवसर प्राप्त होता है। उपन्यासमें बात बढ़ जानेका उतना भय नहीं होता; पर गल्पोंमें प्रत्येक शब्द खूब तौलकर रक्खा जाता है। इसमें बात बढ़ी नहीं और गल्पका सौन्दर्य नष्ट हुआ नहीं। उपन्यास यदि तेज तलवार है, तो गल्प एक छोटासा पर दिलमें चुभ जानेवाला नश्तर है। उपन्यासमें पात्रोंके चरित्रविश्लेषणके साथ बहुतसी अवान्तर बातोंका समावेश भी हो जाता है; पर गल्पमें किसी अवान्तर बातके लिए स्थान नहीं—फिजूल बात कहनेके लिए मौका नहीं। उसमें सिर्फ चरित्रविश्लेषणकी ही प्रधानता होती है। उसे पढ़नेमें समय कम लगता है, पर आनन्द अधिक प्राप्त होता है। यही कारण है कि पाठकों और लेखकोंकी रुचिका प्रवाह अब उपन्यासोंकी ओरसे हट कर गल्पोंकी तरफको दिन दिन बढ़ रहा है।

गल्पें लिखनेमें बंगालियोंकी समता करनेवाला भारतीय भाषाओंके लेखकोंमें तो मिलना कठिन नहीं असम्भव ही है; किन्तु अन्य विदेशी गल्पलेखकोंमें भी उनकी बराबरी करनेवाले बहुत अधिक नहीं हैं। बंगालके लब्धप्रतिष्ठ लेखकोंमें—नहीं उस भाषाके निर्म्माताओंमें—सबसे पहला नाम साहित्यसम्राट् स्वर्गीय बंकिमचन्द्र चटर्जीका है। बंकिमबाबूके विभिन्न विषयोंपर लिखे हुए ग्रन्थ बंगसाहित्यमें कभी न बुझनेवाले प्रभापूर्ण स्वर्गीय दीपक हैं। उनके स्निग्धालोकमें पाठक जिन स्वर्गीय विषयोंका प्रत्यक्ष करके चिरशान्तिको अनुभव करते हैं, वह लिखकर बतानेकी बात नहीं—मूलभाषामें पढ़कर अनुभव करनेकी चीज है। स्वर्गीय रमेशचन्द्र दत्तका शुभनाम भी बंगभाषाके साहित्यमें अमर रहेगा। पर यह बात साहसपूर्वक कही जा सकती है कि पद्य

कवियोंमें माइकेल मधुसूदनदत्त और गद्यकवियोंमें बंकिमबाबू जैसे साहित्यशिल्पी बंगालने ही नहीं—भारतवर्षने भी फिर पैदा नहीं किये ।

वर्तमान समयमें जिन लोगोंकी उपन्यास या गल्पसाहित्यमें धाक है, उनमें डॉक्टर सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर, बाबू प्रभातकुमार मुखोपाध्याय बी० ए०, बार-एट-ला, भारतवर्षसम्पादक श्रीयुत जलधरसेन, अर्चनासम्पादक बाबू केशवचन्द्र गुप्त, एम०ए०, बी०एल० और उदीयमान लेखक श्रीयुत शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय, बी० ए० के नाम विशेष रूपसे उल्लेख किये जा सकते हैं । रवि बाबूका चरित्रविश्लेषण प्रभात बाबूकी घटनापटुता, केशव बाबूकी भाषा और भावोंकी प्राञ्जलता, वृद्ध जलधर बाबूकी स्वाभाविक भाषा और स्वाभाविक वर्णन और शरत् बाबूकी अलौकिक वर्णनशैली ऐसी चीजें हैं, जिन्होंने इन स्वनामधन्य पुरुषोंके नाम साहित्याकाशमें सदाके लिए चमका दिये हैं ।

ऊपर जिनके शुभ नामोंका उल्लेख हो चुका है, प्रायः उन सभीके किसी न किसी ग्रन्थरत्नका अनुवाद हिन्दीमें हो गया है । प्रस्तुत पुस्तक भी केशव बाबूकी इसी नामकी गल्पपुस्तकका अनुवाद है । केशव बाबू बंगभाषाके प्रसिद्ध लेखक और सुविख्यात समालोचनपत्रिका 'अर्चना' के सम्पादक हैं । जो लोग 'अर्चना' पढते हैं, वे भले प्रकार जानते हैं कि केशव बाबू जिस तरह बढ़िया गल्पें लिखनेमें सिद्धहस्त हैं, उसी प्रकार साहित्यके अन्य अङ्गोंपर भी लेखनी सञ्चालन करनेमें खूब पटु हैं । सामयिक साहित्यकी निष्पक्षपात और मर्मभरी समालोचना जैसी आपकी पत्रिकामें होती है वैसी बंगभाषाके बहुत कम पत्रोंमें निकलती है ।

कनक-रेखाको हिन्दीमें अनुवाद करनेकी आज्ञा देनेके लिए हम केशव बाबूके बहुत कृतज्ञ हैं ।

किसरौल, मुरादाबाद
श्रावण, कृष्णसप्तमी,
सं० १९७३ वि०

ज्वालादत्त शर्म्मा ।

सूचना ।

इस संस्करणमें केशवबाबूकी 'प्रत्यावर्त्तन' और 'कटाक्ष' नाम की दो कहानियाँ और भी शामिल कर दी गई हैं, जो अन्य कहानियोंके ही समान सुन्दर और भावपूर्ण हैं ।

'कनक-रेखा' नाम हिन्दी पाठकोंके लिए कुछ दुरूहसा है, इस लिए इस बार यह गल्पगुच्छ 'फूलोंका गुच्छा' (द्वितीय भाग) नामसे भी प्रचारित किया गया ।

—प्रकाशक ।

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर ।

यह ग्रन्थमाला सन् १९१२ से निकल रही है। उपन्यास, नाटक, प्रहसन, काव्य, तत्त्वज्ञान, साहित्य, आरोग्यशास्त्र, समाजशास्त्र, आदि अनेक विषयोंके अब तक ६६ ग्रन्थ निकल चुके हैं। एक रुपया प्रवेश फीस भेजकर इसके स्थायी ग्राहक बन जाइए और अब तकके प्रकाशित हुए और आगे प्रकाशित होनेवाले तमाम ग्रन्थ पौनी कीमतमें मँगाइए। एक कार्ड भेजकर सूचीपत्र मँगा लीजिए। हिन्दीमें इससे अच्छी कोई ग्रन्थमाला नहीं है। अच्छेसे अच्छे लेखकोंके ग्रन्थ सबसे पहले इसीमें प्रकाशित हुए हैं।

मैनेजर—हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, पो० गिरगांव, बम्बई

यह अनुवाद

श्रीमान् बाबू गोविन्दस्वरूप, बी० ए०

मुंसिफ आगरा, के

कर-कमलोंमें

उनकी गल्पप्रियताके कारण

प्रीतिपूर्वक समर्पण

किया जाता

है ।

ज्वालादत्त शर्मा ।

सूची।

कनक-रेखा ।

चार्ली बाबा ।

खूनका जायका पाकर शेर ही उन्मत्त हो जाता है, यह बात नहीं—खूनके लिए मनुष्यकी सोई हुई पाशविक वृत्ति भी जग उठती है । शिवरात्रिके दिन शिवजीके मन्दिरमें जितनी भीड़ होती है उससे बहुत ज्यादा कालीके मन्दिरमें भैंसेके बलिदानके दिन होती है । उस समय यदि रक्तपात हो जाय तो कौन रोक सकता है ? हमारे अनेक मित्र उस दृश्यको देख आये हैं, पर हम उसको देखना नहीं चाहते । यदि हमारी भी सोई हुई शार्दूलवृत्ति जग उठी तो फिर हम उसको रोक न सकेंगे । बलिदान देखनेके हम जितने इच्छुक रहते हैं आरतीके उतने नहीं ।

आज कानपुरके जजकी अदालतमें जो इतनी भीड़ है उसका भी एक ऐसा ही कारण है । मरे साहबके खानसामा माताबदलने मरे साहबका खून किया है—इस अपराधमें सेशन जज फारेस्ट साहबके इजलासमें उसका विचार हो रहा है । ऐसे भारी अपराधमें फाँसी होनेकी पूरी संभावना है । फारेस्ट साहब बड़े कड़े हाकिम हैं, यह बात सारा शहर जानता है । एक मरे साहबका खून हुआ और अब माताबदलके रक्तपातकी सम्भावना है—क्या ऐसे 'तमाशे' को देखनेका चाव कोई रोक सकता है ?

पर इस भीड़में ऐसी भी दो आँखें थीं जो प्रतीक्षा, उत्कण्ठा, सन्देह और आशङ्कामें एक अनिर्वचनीय भाव धारण कर रहीं थीं। आसामीकी स्त्रीके कानमें सरकारी वकीलकी बहसका एक एक शब्द—यद्यपि वह उन शब्दोंका अर्थ नहीं जानती थी—काँटेकी तरह चुभता था। वह बार बार सोचती थी कि किसी तरह सरकारी वकीलकी जुबान बन्द हो जाय। उसने अपनी जंजीर बेचकर एक नामी वकील खड़ा कर दिया था। उस बूढ़े वकीलका कर्कश स्वर लैलीके कानोंमें मधु बरसाता था। वह मन-ही-मन सोचती थी कि ऐसी ज्ञानभरी बहस जरूर ही जज और जूरीके हृदयमें घुस जायगी। पर जजके चेहरेको देखकर उसका जी हिल जाता था। जज मानो पत्थरकी मूर्ति बने बैठे थे। गवाहोंका जब वे बयान लिख रहे थे उस समय लैलीने उनके चेहरेपर सन्देह या अविश्वासका कोई भाव नहीं देखा। लैलीको जजका चेहरा कुछ परिचित सा मालूम होता था। जजने किसी बातपर उसके अमृतभाषी वकीलको जब झिड़क दिया, तब उस गरीबके नेत्रोंसे जलधारा बहने लगी। उसने इस जोरसे आह खींची कि कचहरीमें जितने आदमी मौजूद थे सब उसकी ओर देखने लगे। जज साहबने भी उसकी ओर देखा। लैलीकी जजसे चार आँखें हो गईं। लैली चमक उठी—ऐं क्या यह चार्लीबाबा हैं—हे राम!

जज साहबके मनमें भी कुछ सन्देह सा हो गया। वे विचारासनसे बारंबार उस पगलीकी ओर देखने लगे। उनके हृदयमें बचपनके अनेक सुखचित्र खिंच गये। वे मनमें सोचने लगे—कहीं यह लैली तो नहीं है? जजने उस स्त्रीके गोदमें जो बच्चा था उसके भोले चेहरेमें लैलीके बचपनके चेहरेका दर्शन किया। साहबने मनमें सोचा—आसामी लैलीका कौन है?

२

पहले दिनकी पेशी समाप्त करके थके हुए जजसाहब अपने बंगलेके आगे आरामकुर्सीपर लेटे हुए चुरट पी रहे थे। चुरटका धुआँ वसन्त ऋतुके सान्ध्यसमीरमें मिलकर सैकड़ों बल खाता हुआ ऊपर चढ़ रहा था। जज साहब देखनेको यह तमाशा देख रहे थे, पर उन के मानसचक्षुके सामने एक और ही सुखमय चित्र खिंच रहा था। कृष्णनगरके जजके बंगलेमें वे बालक हैं और अपनी आयाकी लड़कीको मार रहे हैं। बुधिया आया उनका हाथ पकड़कर कहती है—" बाबा, छिः छिः औरतको नहीं 'मारना' होता है। "

लैली अपनी अभिमानभरी बड़ी बड़ी आँखोंसे कभी बालकको देखती है और कभी अपनी माताको देखकर फारेस्टको अस्थिर करती है। फारेस्ट कहता है 'लैली, क्या तुम गुस्सा हो गई?' लैली खुश हो जाती है, उसके आनन्दका ठिकाना नहीं रहता। वह उसका हाथ पकड़कर कहती है—' नहीं बाबा, हम घोड़ा बनेंगे और तुम सवार होना।' जज फारेस्ट इन सुखमय चित्रोंको देखकर काँप उठे। अवस्थाके भेदसे जीवनमें भी कितना पार्थक्य हो जाता है। क्या यह वही लैली है? कोमलहृदया, सरला सुन्दरी लैली क्या आजकी उत्कण्ठिता रमणी हो गई है? साहबको विश्वास नहीं होता कि यह वही लैली है। साहब न मालूम कितनी गर्विता अँगरेज महिलाओंकी लैलीके आदर्शसे मन-ही-मन निन्दा करने लगे। आज वही सरलहृदया बाल्यसखी लैली दरिद्रकी कन्या होनेके कारण एक नरघातक पुरुषकी अभागिनी स्त्री है और चार्लस फारेस्ट सिविलियनके बेटे और सुशिक्षित होनेके कारण जिलेके प्रधान विचारक होकर हजारों मनुष्योंके भाग्यके विधाता बन बैठे हैं।

साहबको फिर सन्देह हुआ। क्या यह बुधियाकी लड़की लैली ही है और वह नरघातक क्या उसका पति ही है? साहबको विशेष सन्देह न था, फिर भी उन्होंने अपने चपरासीको बुलाकर पूछा—खूनी मुकदमेके समय जो स्त्री बूढ़े वकीलके पास खड़ी थी वह आसामीकी कौन थी? फजलूने कहा—हजूर मातावदलकी औरत थी।

नाम?

फजलूको नाम मालूम नहीं था। मातावदलके गिरफ्तार होनेके बाद वह आरेके जिलेसे आई थी। साहबको अब सन्देह नहीं रहा। बुधिया आराके जिलेकी रहनेवाली थी।

३

लैलीको रातभर नींद नहीं आई। प्रातःकाल होते ही वह वकीलके यहाँ पहुँची। उसने वकीलको बहुत तरहसे बताया कि उसका स्वामी निरपराध है। दो चार बार वह चार्लीबाबाके बंगलेके फाटक तक भी हो आई। उसको भय हुआ कि कहीं मेरे जानेसे साहब नाराज न हो जायँ। उसने तेतीस करोड़ देवताओंमें प्रायः सबका प्रसाद बोल दिया था। वह रातभर रोती रही और अपने बाल्यकालका स्मरण करती रही। भाईके समान चार्लीबाबासे बाल्यस्नेहका क्या उसको प्रतिदान नहीं मिलेगा? आज उसकी मा बुधिया जीती होती तो वह उसको जरूर चार्लीबाबाके पास भेजती। चार्लीबाबाके माता पिता भी विलायतमें हैं। यह बात भी लैलीने मालूम कर ली थी। यदि वे कानपुरमें होते तो लैली जरूर उनके चरणोंमें गिरकर रोती और अपनी छोटी कन्याको उनके पैरोंपर डाल देती। उसके भाग्यमें क्या है, क्या होनेवाला है?

दूसरे दिनकी पेशीमें लैलीने देखा कि जजकी मूर्ति और भी

गम्भीर हो गई है। यह देखकर उसका हृदय काँपने लगा। करुणहृदय चार्लीबाबा किस तरह ऐसा निष्ठुर जज बन गया, लैलीकी समझमें कुछ न आया। गवाहोंके इजहार खतम हो गये। जजने आसामीके वकीलसे पूछा—आपको कोई गवाह पेश करना है?

आसामीका कोई गवाह न था। फिर भी बूढ़े वकीलने लैलीसे एक दफा पूछ देखा। जज साहबके मनमें बड़ा संग्राम हो रहा था। गवाहोंके बयान सुन चुकने पर भी वे कुछ निर्णय नहीं कर सके थे। इस बार लैलीके मुखको देखकर उनका हृदय दहल गया। उनको यह बात सन्देहरहित नहीं मालूम हुई कि आसामीने मेरे साहबकी हत्या की है। वे उसको छोड़नेकी कोशिश करेंगे। जूरियोंको समझावेंगे कि आसामी निरपराध है।

आसामीने कोई गवाह नहीं नहीं दिया। दोनों ओरके वकीलोंकी बहस भी खतम हो गई। आसामीकी तरफसे कोई जोरदार बात नहीं कही गई। दर्शकमण्डलीके मनका मानो भार कम हो गया। आसामीको फाँसीकी आज्ञा होनेमें अब उसको कुछ सन्देह नहीं रहा। पर, लैलीके मनमें न मालूम बार बार कौन कह रहा था कि उसका पति जरूर छुटकारा पायगा।

जज साहब जूरियोंको मुकद्दमा समझाने लगे। अदालतमें सन्नाटा छागया। मेरे साहबका मृतदेह स्नान करनेके एक टबमें मिला था। उनके शरीरमें चोटका कोई निशान नहीं था। दम घुट जानेसे ही उनकी मृत्यु हुई थी। घरमें उनके और आसामी मातावदलके सिवा और कोई नही था। एक खानसामाने बाहरसे आकर साहबकी लाश देखी थी और उसीने स्नानागारसे मातावदलको निकलते हुए देखा था। मातावदलसे जब पूछा तो पहले तो वह स्थिर रहा—पर पुलिसके

आते ही वह भाग गया। पुलिसने उसको कानपुर स्टेशनपर गिर-फ्तार किया।

जज साहबने कहा—यह सब कुछ सुनकर आसामीपर पहले तो खूब सन्देह होता है, पर बहुतसी बातें उसके पक्षमें भी बड़ी ज़ोरदार हैं।

यह सुनकर दर्शकमण्डली जरा विचलित हुई। जज साहब लैलीके मुखकी ओर एक बार देखकर फिर कहने लगे—आसामीने इतना गुरुतर अपराध क्यों किया, इसका कोई कारण भी हमको माल्रूम नहीं होता। मेरे साहबका वह विश्वस्त सेवक था। उनकी कभी कोई चीज उसने नहीं चुराई थी। मेरे साहबके साथ किसीकी शत्रुता भी नहीं थी। इसलिए यह ख्याल करना कि किसीने उत्तेजना देकर आसामीसे मेरे साहबकी हत्या कराई, बिल्कुल अमूलक है। बिना किसी कारणके कोई भी अपराध नहीं करता। उसने क्यों अपने मालिकका खून किया, इसका कोई कारण हमें दिखाई नहीं देता।

यह सुनकर सरकारी वकील कुछ सटपटाये। लैलीके वकील जरा हँस दिये। चार्लीबाबाने लैलीके नेत्रोंमें गहरी कृतज्ञता और आनन्दके भाव देखे।

जज साहबने इस बार और भी गहरी बात कही। सरकारी वकील और पुलिसके बड़े साहब उसको सुनकर जज साहबकी मानासिक निरामयतापर सन्देह करने लगे। फारेस्ट साहब कहने लगे—इस मुकदमेमें सबसे पहले यह विचारना चाहिए कि मेरे साहबकी हत्या हुई भी है या नहीं। शहादतसे तो यही माल्रूम होता है कि वे अपनी मौत ही मरे हैं।

इस बार तो अदालतका सन्नाटा कुछ टूट सा गया। उपस्थित जन एक दूसरेका मुँह देखने लगे। जज साहबके मुखपर वही गम्भीरता थी। सच्ची बात निकालनेका विजयगर्व जरूर उनके मुँहपर चमक रहा था। इस मुकद्दमेमें यदि वे लैलीको न देखते, तो शायद शहादतका इतना अच्छा विश्लेषण न कर सकते। उन्होंने जो कुछ कहा उसमें उनको जरा भी सन्देह नहीं था। उन्होंने खूब सोच समझकर कहा था कि मरे साहबकी स्वाभाविक मृत्यु हुई है। वे फिर जूरियोंसे कहने लगे—यदि कोई गला दबोच कर मरे साहबकी हत्या करता, तो उनके शरीरपर उसके निशान जरूर मिलते। मरे साहबने स्नान करनेके लिए जब डुबकी लगाई थी उस समय ऊपरसे यदि कोई उनको दाब रखता, तो वह आत्मरक्षाके लिए जरूर छटपटाते।

टबकी ऊँचाई पाँच फीट थी। वह मरे साहबकी लाश मिलनेके समय जलसे ऊपर तक भरा हुआ था। सिर्फ तीन इंच खाली था। यदि हम यह मान लें कि आसामी इतना जबर्दस्त है कि वह मरे साहबको ऊपरसे बहुत देर तक दाबे रह सकता है—तो बेशक उसको दोषी कह सकते हैं। आपमेंसे अनेकने मरे साहबको देखा है। आसामी भी आपके सामने खड़ा है—इसको एक बार गौरसे देखिए।

मार्कोनी साहबके जन्मसे लाखों वर्ष पहले आँखोंकी बिजलीके प्रभावसे लोग बिना शब्दके बातचीत करना जानते थे। जज साहबकी बातोंका मतलब लैली और मातावदल कुछ भी नहीं समझते थे। वे एक दूसरेकी ओर एकटक नजरसे देख रहे थे। इस भावपूर्ण कटाक्षका मतलब कौन बता सकता है? दोनोंकी आँखोंसे

आँसू निकल रहे थे। इस जन्ममें अब वे फिर नहीं मिल सकेंगे। उनकी भावभंगीसे यह बात अच्छी तरह प्रकट हो रही थी। उनका छोटा सा बच्चा कभी बापकी ओर देख लेता था और कभी माताकी आँखोंमें पानी भरा देख कर विस्मित हो जाता था।

अदालतमें उपस्थित आदमियोंकी एक साथ उसपर पड़ी आँखोंने इन प्रेमियोंका ध्यान तोड़ दिया। वास्तवमें माताबदल खूनी नहीं मालूम होता था। उसके चेहरेसे निर्दोषिता और निर्म्मलता झलक रही थी। जूरियोंके चेहरेपर प्रसन्नताके भावको देख कर जज साहबको और बल मिला। उन्होंने जूरियोंको अच्छी तरह समझा दिया कि माताबदलसे मरे साहबकी उपर्युक्त ढंगसे हत्या होनी असम्भव है। मरे साहब जलमें डूबते ही बेहोश हो गये—उनके हृदयकी गति बन्द हो गई—इसीसे उनकी मृत्यु हुई मालूम पड़ती है।

जूरी एक दूसरेका मुँह ताकने लगे। जज साहब कहने लगे-- एक बात आसामीके खिलाफ भी कही जा सकती है। वह उसका आचरण है। मरे साहबकी लाशके मिलते ही उसने बड़ा विचित्र आचरण किया था। पर उस विषयमें क्या आप उसके जवाबको ठीक नहीं मानते हैं? वह कहता है कि साहबकी लाश देखते ही उसने समझ लिया था कि दोष उसीके मत्थे मढ़ा जायगा। इसी लिए वह रेलपर चढ़कर अपनी स्त्री और बच्चेसे अन्तिम बिदा लेनेके लिए उनके पास चला गया था। उसके बयानपर अविश्वास करनेकी तो कोई बात मालूम नहीं होती। बात सच मालूम होती है, वह सहृदय मालूम होता है—प्रेमी मालूम होता है।

जज साहबने आध घंटे तक और वक्तृता दी। उनकी वक्तृता समाप्त होनेके आध घंटे बाद लोगोंने देखा कि छुटकारा पाया हुआ

मातावदल अपनी बालिकाको गोदमें लिए हुए बार बार उसका मुँह चूम रहा है। हर्षोत्फुल्ल लैली गाँठमें बचे दामोंको चपरासी, बेहरा और पहरेवालोंको बाँट रही है। उपस्थित जनोंका दल बड़ी निराशाभरी दृष्टिसे इन तीनों प्राणियोंको देख रहा है। उधर बूढ़े वकील साहब अपना पुराना शमला हाथमें लिये विजयी वीरकी तरह लोगोंकी ओर देख रहे हैं।

४

शामके समय फारेस्ट साहब बंगलेके सामने आरामकुर्सीपर लेटे हुए अपनी लंदननिवासिनी प्रणयिनीके मुखपद्मका ध्यान कर रहे हैं। इस समय उनका मुख खूब शान्त है। एक साथ उनका ध्यान टूटा। लैलीने उनके चरणोंमें अपनी कन्याको रखकर कहा —चार्लीबाबा, हजूर! भगवान् आपको सलामत—

चार्लीबाबा लैलीके मुखको देखकर कातर हो गये। उन्होंने लैलीके मैले कपड़े पहने हुए उस बच्चेको गोदमें उठा लिया। उसको बारबार चूम कर वे लैलीके कन्धेपर हाथ रखकर बोले—

लैली, बहिन लैली, तुम खुशी हुआ?

खुशी क्यों न होती? लैलीने साहबको समझा दिया कि कोई जज उसके निरपराध स्वामीको नहीं छोड़ता। लैलीने शुद्धान्तः-करणसे चार्लीबाबाको शीघ्र लाटगरी मिलनेकी आशा प्रकट की।

अन्तमें निश्चय हुआ कि दो महीने बाद जब चार्ली बाबाका विवाह हो जायगा, तब लैली उनकी मेमके पास रहेगी। कृतज्ञ लैली जब फारेस्ट साहबके पाँव चूमने दौड़ी, उसी समय साहब वहाँसे उठकर भाग गये।

चिकित्सा।

१

वैशाख पूर्णिमाका चन्द्र तरु-लता, जल-स्थल और घरके आँगन तकमें चाँदीकी धारा बरसा रहा है। नलिनीने उसकी तरफ आज एक बार भी नहीं देखा। और दिन वह अपने स्वामीके साथ बंगलेके बाहर हरी हरी दूबपर चाँदनी रातमें घूमा करती थी। कभी कभी वह कोमल तृणासनपर बैठ कर अपने पतिका मुख देखा करती थी, एकटक देखती रहती थी, कुछ बोलती न थी और किसी तरफसे किसीकी आहट पाकर भीता नलिनी अपने ज्योतिर्मय अङ्गको लेकर भाग जाया करती थी। कौमुदीके लावण्यको उषा समझकर बागके वृक्षोंपर बैठे हुए दो एक निर्बोध पक्षी जब चहचहाते थे तब उनकी मूर्खतापर नलिनी अपने स्वामीकी ओर एक बार देख कर मुसकरा देती थी। उस समय युवक धीरेन्द्रकी दृष्टिमें प्रकृतिका ज्योत्स्ना-कर-सिक्त सौन्दर्य और अधिक मधुर हो उठता था। पर आजका चन्द्र तो उनको वृथा प्रलोभित कर रहा है। एक पक्षसे वे घरसे बाहर नहीं निकले हैं।

इसका कारण—उनके शिशुकी पीड़ा है। चार वर्षका शिशु अमलचन्द्र संज्ञाशून्य पलंगपर पड़ा हुआ है। उसके छोटेसे देहमें जीवनप्रदीप अति क्षीण भावसे जल रहा है। पन्द्रह दिनके ज्वरने सदा प्रफुल्ल रहनेवाले बालकको बहुत ही अवसन्न कर दिया है। आजकी रात सन्धिकी है। डाक्टरने कहा है, आजकी रात बीतनेपर वे शिशुके जीवनसम्बन्धमें कोई स्थिर बात कह सकेंगे।

जमीनपर दो-जानू बैठी हुई नलिनी दोनों नंगीं बाहें पलंगपर रक्खे हुए स्थिर दृष्टिसे निद्रित बालकके मुखको देख रही है। उसके बड़े बड़े दोनों नेत्र कातर पर स्वर्गीय ज्योतिसे उद्भासित हो रहे हैं। उसके शरीरसे वस्त्र खिसक गया है—इस लिए घरके क्षीण दीपालोकसे उसकी भली मूर्ति और भी भली हो गई है। उसके गलेका स्वर्णहार उसके शरीरके वर्णके साथ प्रतियोगिता कर रहा है, किन्तु उसके रूपके उपासक धीरेन्द्रकी आज उस ओर दृष्टि नहीं है। वह बच्चेकी चारपाईके पास कुर्सीपर बैठा हाथ पर ठोढ़ी रक्खे हुए उसके पाण्डुवर्ण चेहरेकी ओर देख रहा है।

घड़ीने टन् टन् बारह बजाये। नलिनीने स्वामीकी ओर देख कर बड़े मीठे स्वरमें कहा—'औषध?'

स्वामीने कहा—'सो रहा है, नींदको तोड़ना अच्छा नहीं।'

युवतीने कुछ न कहकर एक दीर्घ निःश्वास त्याग किया। बाहर ज्योत्स्नाप्लावित बागमेंसे किसीने रात्रिकी निस्तब्धता तोड़कर गाना आरम्भ किया—

किन तेरो गोविन्द नाम धरयो।
लेन देनके तुम हितकारी मोसे कछु न सरयो॥
विप्र सुदामा कियो अजाची तंदुल भेट धरयो।
द्रुपदसुताकी तुम पत राखी अंबर दान करयो॥
संदीपनके तुम सुत लाये विद्या पाठ परयो।
सूरकी बिरियाँ निठुर है बैठे कानन मूँद धरयो॥

धीरेन्द्रको गाना बहुत ही बुरा लगा। उधर बालककी भी नींद टूट गई। वह रोने लगा। विस्मिता और चकिता नलिनी उठ खड़ी हुई। मानो उसके हृदयमें तीर लगा। विस्मयसे इधर उधर देखकर

डरी हुई हिरनीकी तरह वह स्वामीकी ओर देखने लगी। धीरेन्द्र झट बाहर आया, संगीत भी थम गया था।

बरामदेमें खड़े होकर वह चारों ओर देखने लगा। गायक उसको दिखाई नहीं दिया। बाईं तरफके लताकुञ्जमें फिर किसीने गाया—

किन तेरो गोविन्द नाम धर्यो।

धीरेन्द्र दौड़कर उधर गया और दोनों हाथ उठाकर गायकसे गाना बन्द करनेके लिए इशारा करने लगा। गायक जरा हँसकर फिर गाने लगा—

सूरकी बिरियाँ निठुर है बैठे कानन मूँद धर्यो।

धीरेन्द्रने गुस्सा होकर कहा—महाशय, गाना बन्द कीजिए।

गायकने फिर गाया—

किन तेरो गोविन्द नाम धर्यो।

गेरुए वस्त्र पहने हुए उस दीर्घकेश युवक संन्यासीने हँस कर कहा——क्यों ?

" माधव गत तेरी न जानी "

धीरेन्द्रने कहा—हमारा बच्चा मृत्युके मुखमें पड़ा हुआ है। चुप रहिए, यदि वह जग उठा तो फिर सर्वनाश—

" माधव गत तेरी न जानी "

धीरेन्द्रने कहा—आपके चरण छूता हूँ, चुप रहिए। नहीं तो—

संन्यासीने हँसकर कहा:—" पुलिसको बुलाओगे ? " गुस्सेमें भरे हुए धीरेन्द्रने कहा—" हाँ, जरूर, मैं यहाँका हाकिम हूँ "। सन्यासीने व्यङ्गपूर्वक कहा—तो बाबा बच्चेको क्यों नहीं बचा लेते ?

उसकी बात सुनकर क्रोध और घृणामें भरा हुआ धीरेन्द्र मकानकी ओर चलने लगा। बंगलेके बरामदेमें पहुँच कर उसने देखा

कि संन्यासी उसके पीछे आ रहा है। क्रोधमें अधीर होकर धीरेन्द्रने पुकारा—“ बेहरा ! बेहरा। ”

हँसते हुए संन्यासीने कहा “ छिः ! छिः !! हकिम बहादुर, ‘ अरावप्युचितं कार्य्यमातिथ्यं गृहमागते’ हिन्दू होकर इस तरफ जरा भी ध्यान नहीं देते।”

विस्मित होकर धीरेन्द्रने संन्यासीको देखा। उसकी उम्र अनुमानतः ३० वर्षकी होगी। वर्ण गौर, नासिका और ललाट उन्नत। गेरुए वस्त्र उसके देहमें असमीचीन मालूम होते थे। उसके मस्तककी सुदीर्घ कुञ्चित केशराशि उसके कंधोंपर पड़ी हुई थी। चन्द्रकी किरणें उसके घने केशजालको भेद न कर सकनेके कारण उसके मुखको बहुत उज्ज्वल नहीं कर सकी थीं। संन्यासी गले और दाहने हाथमें तुलसीकी माला पहने हुए था।

धीरेन्द्र उसकी ओर कुछ देरतक देखनेके बाद बोला--“ हमारा पुत्र मृत्युशय्यापर पड़ा हुआ है। ”

संन्यासीने कहा—तब तो ठीक समय पर ही आया हूँ। एक बार आपके पुत्रको देखूँगा। नारायण ! नारायण !!

नलिनी भी बातचीत सुननेके लिए दर्वाजेके पास आगई थी। वहाँसे उसने संन्यासीको देखा। संन्यासीके चेहरेको देखकर उसका हृदय काँप उठा। उसका सिर घूमने लगा। वह दीवारके सहारे खड़ी होकर फिर एक बार संन्यासीको देखने लगी। उसके चेहरेमें यद्यपि खूब परिवर्त्तन हो गया था--पर फिर भी नलिनीने विभूतिको पहचान ही लिया। जिस व्यथाको वह बहुत दिनतक छिपाकर भूलने लगी थी, आज उसी व्यथाने विराट् आकार धारण करके सुन्दरीके हृदयको दहला दिया। एक तरहकी अव्यक्त भीति उसको मालूम हुई। नलि-

नीको आज उसके पुत्रकी बीमारीका कारण मालूम हुआ। किसीके उन्नत हृदयको पीडित करके क्या कोई सुखी हो सकता है? धनसे भी उसको किसी तरह सुख नहीं मिल सकता। आजसे छः वर्ष पहले उसने इस नवयुवकके साथ नृशंस व्यवहार किया था। उसीके कारण उसने सदाके लिए घर छोड़ दिया था।

संन्यासीकी बात सुनकर धीरेन्द्रने इधर उधर करके कहा—"अच्छा आइए।" संन्यासीने उसके साथ घरमें प्रवेश किया। नलिनीने उनकी बात नहीं सुनी थी। वह उसी तरह घबराई हुई दर्वाजेसे लगी खड़ी थी। धीरेन्द्रने उसे न देखा, वह सीधा बच्चेके पलँगके पास चला गया। किन्तु संन्यासी दर्वाजेके पास खड़ी नलिनीको देखकर चकित हो गया। दोनोंकी चार आँखें हुईं। संन्यासीका सिर चक्कर खाने लगा। उसने समझा कि उसका छः सालतक घर घर भीख माँगना और हरिनाम गाना वृथा ही गया। उसके चित्तमें वह मूर्ति आज भी अङ्कित है। उसको अभी बहुत संयम करना है! नलिनी अर्द्धमूर्छिता होकर जमीन पर गिर पड़ी।

२

नलिनीकी ओर विशेष न देखकर संन्यासी सीधा शिशुकी शय्याके पास जा बैठा। कमजोर शिशु अर्द्धनिमीलित अवस्थामें रो रहा था। जोरसे रोनेकी ताकत भी उसमें नहीं थी। एक तरहकी भीति मिली गम्भीरता उसके मुखपर झलक रही थी। रोगीकी नाड़ी देखकर संन्यासीने जान लिया कि ज्वर उतर रहा है—ज्वरके शेष होते ही बालकका जीवन भी शेष हो जायगा। धीरेन्द्रकी ओर देखकर संन्यासीने धीरे धीरे कहा—आप जानते हैं, ज्वर उतर रहा है?

संन्यासीकी सहानुभूतिसे धीरेन्द्र संन्यासीको अपरिचित नहीं समझ सका; मानो संन्यासीसे उसकी बहुत दिनोंकी जान पहचान हो। धीरेन्द्रने समझा कि ईश्वरने ही इस संन्यासीको भेजा है। इस-लिए संन्यासीके मुखसे निराशाकी बात सुनकर बालकोंकी तरह वह उसका हाथ पकड़कर कहने लगा—" बचाइए। जिस तरह हो, बचाइए। ईश्वरने इसी लिए आपको भेजा है। "

बात नलिनीके कान तक भी पहुँची। पुत्रस्नेहकातरा जननीके स्नेहने और सकल भावोंको परास्त किया। नलिनी पागलिनीकी तरह बालकको हृदयसे लगानेके लिए दौड़ी। संन्यासी उठकर खड़ा हो गया और धीरेन्द्रसे कहने लगा—" आपके घरसे बाहर गये विना हम कुछ भी नहीं कर सकते। " युवतीने एक बार संन्या-सीकी ओर देखा। मानो उन प्रेमपूर्णपरिचित कोमल नयनोंमें उसने और भी अधिक स्नेह भरा हुआ देखा। स्वामीका हाथ पकड़कर वह दूसरे कमरेमें चली गई।

संन्यासीने अपने चित्तको संयत किया। उसने अपनी झोलीमेंसे कुछ औषध निकाली। औषध और कुछ नहीं थी—थी वृंदावननिवासी उसके गुरुकी पदरेणु। उसके बाद उसने बच्चेको गोदमें उठा लिया, फिर अपने गलेसे माला उतार कर उसको पहनाई, उसके बाद आँख मींचकर उसने आराध्य देवको पुकारना आरम्भ किया—" कंगालके धनी, विपन्नके सखा, क्या तुम इसी रूपमें व्रजके बालकोंकी रक्षा करते हो? हरि! तुम तो प्रेमके अवतार हो—तुम्हीं रक्षा न करोगे तो कौन बालककी रक्षा करेगा? हमारे पार्थिव प्रेमकी यही अन्तिम परीक्षा है। सामान्य पार्थिव प्रेममें विह्वल होकर, प्रेम-मयीके पार्थिव व्यवहारसे निराश होकर तुम्हारी शरण ली थी,

हृदयका बोझ दूर करके तुम्हारे अनन्त प्रेमकी सुधामें जीवनको मधुमय किया था । दयामय, प्राणनाथ, यह अन्तिम प्रेम भी दिखानेकी कृपा करो । जिसके प्रत्याख्यानसे तुमारे श्रीचरणोंकी शरण ली थी उसका भी एक उपकार कर दो । इस शिशुको प्राणदान दो प्रेममय, दो, यह तुम्हारा ही है । ''

इस तरह प्रार्थना करते करते संन्यासी ध्यानमग्न हो गया । उसने देखा कि " चन्दनचर्चित नीलकलेवर पीतवसनपरिहित वनमालीने आकर धीरे धीरे शिशुका चुम्बन किया । उसके बाद मधुर मुरली बजी । शिशु उठकर नाचने लगा । शिशुको छोड़कर तब संन्यासीने वनमालीके चरण पकड़ लिये । अहा ! क्या सुख था, क्या शान्ति थी ! क्या माधुर्य्य था और क्या तृप्ति थी ! संन्यासी उन्हीं पदों पर मन समर्पण किये हुए पड़ा रहा ।

३

पासहीके कमरेमें पलंगपर पड़ी नलिनी रो रही है । उसकी स्मृतिकी यातनाने उसको कातर बना दिया है । युवतीका धीरज छूट गया है । स्नेहसे पाले हुए कुमारकी जीवनरक्षाकी आशामें उसने धैर्य्य-धरकर प्राणसम पुत्रको दूसरेके हाथमें दे दिया है । एक एक मुहूर्त्त उसको युगयुगान्तरकी बराबर मालूम हो रहा है । यदि अवसर पाकर विभूतिने बदला लिया ? छिः ! छिः ! ! उसके लिए क्या यह सम्भव है ? नलिनी उसको बचपनेसे कोमल समझती रही है । नलिनीको अपने बचपनके समयका ध्यान आगया । उसके बाल्यकालके सकल सुखमय चित्रोंके साथ विभूतिकी स्नेहमय कोमल मूर्ति जड़ी हुई थी । उस समय बालिका नलिनी विभूतिको देवता समझती थी । नलिनीकी किशोर अवस्थामें भी विभूतिका प्रभाव उसपर कुछ

कम न था। वह उससे पढ़ती थी, उसका गाना सुनकर विह्वल हो जाती थी। उस समय विभूतिने उससे विवाह करना न चाहा। उस समय तो वह सब कुछ समझता था। उस समय उसकी माता भी जीती थी। नलिनीके पिता उसको जामाता बनाना कभी अस्वीकार नहीं करते। उसके बाद यौवनके ठीक प्रारम्भमें नलिनीने कलकत्तेमें अपने किसी आत्मीयके घर जाकर पार्थिव विलासिताकी मनोमुग्धकर छबि देखी। विलासिताके बाहरी चित्रको देखकर विभूतिका प्रकृत स्नेह उसको पागलपन मालूम होने लगा। उसको विभूतिका ग्राम्य जीवन बड़ी तकलीफोंका जीवन दिखाई पड़ने लगा। विद्वान् और धनवान् धीरेन्द्रनाथके साथ उसके विवाहकी बातचीत पक्की हुई। नलिनीके रूपकी सभी तारीफ करते थे। सुन्दर वस्त्रोंको पहनकर धीरेन्द्रनाथ स्वयं नलिनीको देखकर विवाहके लिए उन्मत्त हो गये। युवतीके गर्वका ठिकाना न रहा, गरीब विभूतिका ध्यान भी न रहा। परीक्षा करके उसने नहीं जाना कि उसके हृदयमें युवक विभूतिभूषणका कितना आधिपत्य हो गया था।

नलिनीके विवाहकी बातचीत पक्की हो गई है--यह बात विभूतिको मालूम नहीं थी। कलकत्तेसे वापिस आकर एक दिन नलिनी बागमें अकेली तालाबके किनारे आमके पेड़ोंपर बैठे हुए बगुलोंकी पंक्तिको देख रही थी। विभूतिने दूरसे देखा कि इन कई महिनोंके प्रवासमें नलिनीमें बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है। विभूति हरिदास बाबाजीके पास कीर्तन सीखा करता था। उसको किसी प्रसिद्ध कविकी पदावलीका ध्यान आ गया। वह गाने लगा--

ऐसो को उदार जगमाँहीं।
बिन सेवा जो द्रवै दीनपर रामसरिस कोऊ नाहीं॥

ऐसो को उदार जगमाँहीं।

कलकत्तेकी सभ्यताभिमानिनी नलिनी बालाको आज यह गान अच्छा नहीं लगा। विभूतिके निकट आनेपर नलिनीने तिरस्कार करके उससे कहा—छिः, पागलोंकी तरह रास्तेमें क्या गाते फिरते हो?

विभूतिने आजतक कभी नलिनीके मुखसे ऐसी बात नहीं सुनी थी। उसने उसका और ही अर्थ समझा—वह बोला—नलिनी, पागल क्यों न हूँगा? दर्पणमें कभी मुँह देखती हो?

नलिनीको गुस्सा आगया। उसने विभूतिको बता दिया कि अब वह बालिका नहीं है। धनीके घरमें उसका विवाह होनेवाला है, इस लिए उसके साथ ऐसी बातें करना अच्छा नहीं है।

यह बात कहकर नलिनी जब चली गई तब विभूतिके चेहरेका जो भाव हो गया था—आज वही भाव उसके मानस-चक्षुने प्रत्यक्ष किया। उस घटनाको स्मरण करते ही उसको सौ बिच्छुओंके एक साथ काटने जैसी यन्त्रणा मालूम होने लगी। आज वही दृश्य उसके स्मृति-पटपर फिर ताजा हो गया। उसके बाद विभूतिकी माताका देहान्त हो गया। उसके दस दिन बाद नलिनीका विवाह हुआ। विवाहसे एक दिन पहले उसने सुना कि विभूति घरबार छोड़कर कहीं चला गया। सबने समझा कि वह पागल था, कहीं चला गया होगा। पर उसके वैराग्यका प्रकृत कारण नलिनी सोलह आने जानती थी। यही कारण है कि आज घोर विपद्के समय, छः सालके बाद, संन्यासीके वेशमें विभूतिको देखकर वह विह्वल हो गई।

नलिनी पलंगपर पड़ी हुई जिस समय यह सब सोच रही थी, अधीर धीरेन्द्रने उसी समय उसको धीरे धीरे पुकारा। नलिनी दौड़

कर स्वामीके गलेसे लिपट कर रोने लगी। धीरेन्द्रने उसका स्नेहपूर्वक चुम्बन करके कहा—"छि: नलिनी, रोनेसे क्या होता है! चलो देखें।"

दोनोंने धीरे धीरे घरमें प्रवेश किया। संन्यासी आँख मूँदे निस्तब्ध बैठा हुआ था। उनको देखकर वह हिला तक नहीं। उसकी गोदमें लेटा हुआ शिशु अपने दुबले हाथसे उसकी ठोढ़ी पकड़े हँस रहा था। जनक, जननी अपने बच्चेको इस अवस्थामें देखकर आनन्दसागरमें डूब गये। शिशुने हँसकर माँको पुकारा। नलिनी दौड़कर बच्चेके पास बैठ गई। बच्चेने कहा—"माँ, यह कौन है?"

बहुत दिनोंके बाद शिशुके मुँहसे बात सुनकर नलिनीके आनन्दका ठिकाना न रहा, पर बच्चेकी बातका उत्तर वह न दे सकी। निर्बोध शिशु फिर बोला—"मा, इनको प्यार करो। मैं इन्हें प्यार करता हूँ।"

ठीक इसी समय संन्यासीका ध्यान टूटा। उसने आँखें खोलीं। फिर नलिनीके साथ उसकी चार आँखें हुईं। नलिनी रो पड़ी।

संन्यासीने उठकर धीरे धीरे शिशुको पलंगपर लिटा दिया। फिर मुँह चूमा। बच्चा संन्यासीके कण्ठसे लिपटकर क्षीण स्वरमें बोला—"मुझे प्यार करोगे?"

संन्यासी हँस पड़ा और वीणा जैसे कण्ठसे बोला—"तुम गोपाल हो, तुम्हें क्यों नहीं प्यार करूँगा?"

धीरेन्द्र संन्यासीके शयनके लिए शय्या आदिका प्रबन्ध करनेके लिए बाहर चला गया।

मूर्ख शिशुने फिर कहा—"माँको प्यार करोगे?"

संन्यासीने भूमिपर बैठी हुई उसकी माँकी ओर देखा। नलिनी भी उसकी ओर बड़े आग्रहसे देख रही थी। कोमल कण्ठसे संन्यासीने

कहा—"जिसके प्रेमने हमें विश्वप्रेमकी शिक्षा दी है उसको क्यों नहीं प्यार करेंगे?"

इस समय नलिनी स्थिर नहीं रह सकी। संन्यासीके चरण पकड़कर बोली—"मुझे क्षमा कर दीजिए!"

संन्यासीने 'विष्णु! विष्णु!' कहकर पाँव छुड़ा लिये और फिर वीणा कण्ठसे कहा "प्रेमकी सदा जय होती है। प्रेम था तभी तो असम बन्धुत्व किया था। श्रीकृष्ण हमसे प्रेम करते हैं तभी तो उन्होंने बच्चेको जीवन दिया। हरि! हरि!!"

संन्यासी बाहर आकर छिटकी हुई चाँदनीमें न मालूम किधर चला गया। वह बहुत दूर निकलकर मन-ही-मन कहने लगा—"बाबा! प्रेमके साथ अभी तक कामना चली जाती है। अभी और मँझनेकी जरूरत है। हरि! तुम कैसे बन्धु हो? तुम्हारा प्रेम भी कैसा है? उसमें और प्रेमोंकी गुंजाइश क्यों रहती है? तो क्या मेरी परीक्षा ली थी? तुम—जानता हूँ पुराने शठ हो! इस बार परीक्षा करनेके लिए फिर संन्यासी होना पड़ेगा! क्या मेरा प्रेम तुम्हें पसन्द नहीं?" संन्यासी प्रकृतिस्थ होकर ज्योत्स्नालोक-दीप्त पथपर चलने लगा।

धीरेन्द्रने वापिस आकर देखा कि शिशु अच्छी तरह लेटा हुआ है, नलिनी रो रही है। धीरेन्द्रके संन्यासीके विषयमें पूँछते ही शिशुने कहा—स्वामीजीके चले जानेसे माँ रो रही है।

धीरेन्द्रने कहा—संन्यासी निश्चय देवता हैं—क्यों नलिनी? नलिनीने स्वामीका मुख चुम्बन करके लम्बी साँस छोड़ी और कहा—"निश्चय।"

दूसरे दिन प्रातःकाल ही चिकित्सक महाशय आकर हँसते हँसते कहने लगे—वाह ! दवाने खूब काम किया। देखता हूँ, बच्चा बिल्कुल अच्छा हो गया है !

धीरेन्द्रने मनमें कहा—हाँ ठीक है, तू जैसा गधा है वैसा ही दाम्भिक भी है। आदमी आदमीको मार तो सकता है—बचाना उसकी शक्तिसे बाहर है।

अमलचन्द्र संन्यासी की दी हुई तुलसीकी मालाको देखकर, जब कभी संन्यासीकी बात चलाता तभी नलिनीकी आँखें डबडबा आतीं। यह देखकर उसने संन्यासीकी बात उठाना ही छोड़ दी। और धीरेन्द्र अपरिचित संन्यासीके उपकारके लिए अपनी स्त्रीकी इतनी कृतज्ञता देखकर नलिनीको मन-ही-मन देवी समझता; पर नलिनी मन-ही-मन अपनेको समझती—राक्षसी।

अनुवादमें प्रमाद ।

हमारा मित्र शचीन्द्रनाथ 'कुछ कामके लायक' न होनेपर भी बड़ा मतलबबाज़ था।

हमारे विलायत जानेसे कुछ दिन पहले एक दिन वह एक संवादपत्र लिये हुए हमारे पास आया। आते ही हँसकर कहने लगा—सुनते भी हो, जिसकी तलाश थी वह आज मिल गया।

शचीन्द्र जीवनभर गुलाबके फूल जैसी सुन्दर स्त्रीसे लेकर गीदड़के बच्चे तक न मालूम कितने दुर्लभ पदार्थ ढूँढ़ता फिरता था—इस लिए क्या चीज पाई—इस बातका हम निर्णय नहीं कर सके।

इसलिए हमारे कौतूहलको चरितार्थ करनेके लिए उसको कहना पड़ा कि रोज़गार करनेके लिए एक बड़े ही मार्केकी जगह उसके हाथ लगी है। हमने कहा—यह तो बड़ी अच्छी बात हुई। अब व्यवसाय आरम्भ कर दो। हाँ, वह स्थान है कहाँ?

शचीन्द्रने बड़े गर्वसे कहा—बड़े मार्केकी जगह है। कलकत्तेमें सबसे अच्छी जगह है। उस जगह चुरुटकी दूकान खोल देनेसे—बस रातदिन बड़े बड़े आदमी—

हमने कहा—इसमें सन्देह क्या है? ऐसा स्थान तो लोग सिर खपाकर भी नहीं पा सकते हैं। बड़ा अच्छा स्थान है।

शचीन्द्रने विस्मित होकर पूछा——तो क्या तुम उस स्थानको जानते हो?

हमने अन्दाज़से ही जान लिया था कि बड़े आदमियोंके आने जानेकी जगह कहीं चौरंगीके पास ही होगी। इसी लिए हमने बड़ी प्रतिभाके साथ कहा—हाँ? जानना कुछ मुश्किल है क्या?

शचीन्द्रने हँसकर कहा—क्या मज़ाक करते हो? अच्छा लो देखो।

एक अँग्रेजी संवादपत्रमेंसे उसने लाल रोशनाईसे दागी हुई नीचे लिखी लाईनें हमें दिखाई—

The office of the Lieutenant Governor of Bengal will shortly be vacant.

हम इसे पढ़कर उसके मुँहकी ओर देखने लगे। वह विजय-गर्व धारण किये हुए सैनिककी तरह या उत्तर ध्रुवसे लौटे हुए नूतन भूखण्डके आविष्कर्ता डाक्टर पेयरीकी तरह मुँह बनाकर बोला—जानते हो? Writer's Building कैसी जगह है? लाल दीघीके ठीक सामने तीन रास्तोंके मोड़पर।

हमने पहले तो समझा कि शचीन्द्र मज़ाक कर रहा है। अन्तमें हमने जाना कि वह अपनी भयंकरी थोड़ी विद्याके प्रतापसे समझ गया है कि Writer's Building नामक विशाल महलमें उसकी चुरुटकी दूकान—जिसमें रातदिन बड़े आदमी बने रहेंगे और वह जल्दी मालदार बन जायगा—जरूर खुल जायगी। हमने पूछा—"वह जगह कहाँ है?"

उसने कहा—"तुम्हारी समझमें नहीं आया—जानते हो छोटे लाटका ऑफिस कहाँ है?"

"वह तो राइटर्स बिल्डिंगमें है।"

"हाँ वहीं वहीं, वह अब शीघ्र खाली होनेवाला है। खाली होनेपर गवर्नमेंट उसे किरायेपर न उठायेगी तो क्या भूतोंका निवासस्थान बनायेगी?

हमने खूब जोरसे हँस दिया। अन्तमें हमने उसे बताया कि यहाँ आफिसका अर्थ मकान नहीं, पद है। छोटे लाटका पद खाली

होगा । अर्थात् दूसरे लाट उस पदको सुशोभित करेंगे । अँगरेजीमें आफिसका दूसरा अर्थ कार्य भी है । एक बार किसी स्कूल मास्टरने एक छात्रसे पूछा—What is the office of the liver? अर्थात् जिगरका काम क्या है? उस छात्रने शचीन्द्रकी तरह आफिसका अर्थ स्थान समझकर ऊँचे स्वरसे कह दिया—पेट साहब, पेट ।

बेचारा शचीन्द्र हमारी बातको सुनकर बहुत लज्जित हुआ ।

अँगरेजी शब्दोंका ठीक अर्थ न जाननेसे हमको प्रायः लज्जित होना पड़ता है । हमारे यहाँके अर्ध शिक्षित देशवासियोंकी अँगरेजी-में प्रायः भूलें हो जाया करती हैं । जब हम विलायतमें थे, एक दिन अपने एक पंजाबी मित्रके साथ टिकट खरीदनेके लिए डाकघर गये । वहाँ इस तरहका काम प्रायः स्त्रियाँ ही करती हैं । डाकघरकी खिड़कीके पास पहुँचते ही एक सुन्दरीने बड़े विनीत भावसे पूछा-क्या आज्ञा है?

हमारे मित्रने कहा—आनेवाले पाँच टिकिट—

"पेनि-टिकिट!" सुन्दरीने मधुर भावसे हँसकर कहा आप भूल करते हैं, यह डाकघर है ।

स्वाधीनतागर्वित इंग्लैंड-भूमिपर भी श्वेतांगी सुन्दरी काले आदमीसे घृणा करती है, उससे मज़ाक करती है यह बात हमारे मित्रको बुरी लगी । उन्होंने जरा रूखेपनसे कहा—"मैं खूब जानता हूँ कि यह पोस्ट आफिस है और आप पोस्ट आफिसकी क्लर्क हैं ।"

युवतीने अवमानिता होकर हमारी ओर देखा । उसके गाल लाल हो गये, पर फौरन ही उसने मनका भाव दबा कर कहा—आप ज़रूर भूल कर रहे हैं, यहाँ टिकट नहीं बिकते । ट्यूब रेलवेका टिकिट ट्यूब रेलवेके स्टेशनोंपर और ट्राम गाड़ियोंके टिकिट कंडक्टरोंके पास मिलते हैं और थियेटरके टिकिट—

बीचमें ही पंजाबी मित्र बोल उठे—हाँ, यह तो हम भी जानते हैं—और जहाजके टिकिट टामसकुकके दफ्तरमें मिलते हैं। पर हमें पोस्ट टिकिट चाहिए।

युवती विस्मित होकर हमारी ओर देखने लगी और बोली—क्षमा कीजिए, यहाँ टिकिट नहीं मिलते। विलायतमें पोस्ट चेञ्जका दस्तूर नहीं है।

बड़ी सफाईसे वह अपनी मेजके पास चली गई। हमने एकबार उस खिड़कीके ऊपर देखा कि वहाँ क्या लिखा है। उसपर लिखा था—यहाँ स्टाम्प बिकते हैं। हमने मित्रसे कहा—"हमें मालूम होता है, जरूर भूल हुई है।" भारतवर्षमें टिकिटके नामसे स्टाम्प बिकते हैं। अच्छा अब स्टाम्प माँगकर तो देखो।

मित्रने फिर खिड़कीके अन्दर ही मुँह करके रुपया खनकाया। सुन्दरी हँसती हुई फिर आ गई। बन्धुने कहा—"पाँच पेनि-स्टाम्प।"

युवतीने भौंहें चढ़ाकर 'ओः' कहा और रमणीजनसुलभ लज्जा या सरकारी-नौकरी-सुलभ सौजन्यको भूलकर वह हँसने लगी। हम भी लज्जासे नीचा मुँह किये हुए वहाँसे लौट आये।

एक बार लंडनमें मोजा खरीदनेमें भी हमारी ऐसी ही दुर्दशा हुई थी। दूकानमें पहुँचते ही एक आदमीने आकर कहा—"कृपा करके बताइए, क्या चाहिए।"

हमने कहा—Stocking

साहबने आश्चर्यसे हमारी ओर देखा जरूर, पर मुँहसे कुछ कहा नहीं। उसने हमको मिस डुक नामकी एक सुन्दरीके सिपुर्द करके उससे कहा—"आप स्टॉकिंग चाहते हैं।" सुन्दरी हमको कई बड़े कमरोंमेंसे निकालती हुई एक बड़े हालमें ले गई। उसके दर्वा-

जेपर लिखा था—"महिला--विभाग"। हमें भी कुछ कुछ सन्देह होने लगा। वह हाल स्त्रियोंसे भरा हुआ था। हम वहाँ " हंसमध्ये बकः—"बने हुए थे। वे सब स्त्रियाँ विस्मित होकर हमारी ओर देख रही थीं। हमने जान लिया कि जरूर कोई भूल हुई है। दिल मजबूत करके हम आगे बढे जाते थे—मन मनमें हम दृढ़ प्रतिज्ञा कर रहे थे कि युद्ध छोड़कर भागेंगे नहीं।

एक मेजके पास हमको खड़ा करके मिस टुकने एक दूसरी सुन्दरीसे कहा—आप स्टॉकिंग चाहते हैं। उस युवतीने भी हमारी ओर वैसा ही विस्मययुक्त कटाक्षपात करके कहा—"किस साइज़ और रंगका स्टॉकिंग आप चाहते हैं? क्या आप अपने लिए सॉक्स चाहते हैं?"

बिजलीकी तरह हमको अपनी गलती मालूम हो गई। हमने जाना कि स्त्रियोंके मोजेको स्टॉकिंग कहते हैं और पुरुषोंके मोजेको सॉक्स। कौन जानता था कि कलकत्तेकी अँगरेजीसे विलायतकी अँगरेजी इतनी भिन्न है। बहुत दिनोंसे, 'वर्ड बुक'में Stocking माने मोजा पढ़ते रहे हैं।

जो भी हो, उसदिन भूलका दण्डस्वरूप चार शिलिंगका एक जोड़ा सिल्कका जनाना मोजा Stocking खरीद कर सुन्दरियोंके मधुर हास्यके हाथसे छुटकारा पाया।

पहले मुन्शीजीके पास उर्दू पढ़ते समय भी एक ऐसी भूल की थी। उर्दूके प्रथम भागमें लिखा था—"माकड़ी जाला तन रही है।" मुन्शीजीने इसका हमसे अर्थ पूछा तो हमने कहा—"बन्दर लोग दिक करता है।" माकड़ा माने बन्दर और जालातन माने दिक करना—यह कौन बंगाली लड़का नहीं जानता। मुन्शीजीने बड़े विस्मयसे अपनी दाढ़ीपर हाथ फेरकर कहा—"बाबा! तोबा!" बादको हमें बताया कि इसका अर्थ है—"मकरी जाला बुन रही है!"

२

हम रात्रिकी ट्रेनसे पैरिससे दक्षिणकी ओर आते थे । हम और हमारे एक पंजाबी मित्र थे । हम लोग छुट्टीमें इंग्लैण्डसे फ्रांसकी सैर करनेके लिए आये हुए थे । गाड़ी छोड़नेके लिए स्टेशनपर टन-नन टननन हुई ही थी कि एक फ्रांसीसी हमारी गाड़ीमें चढ़ा । उसका कद लम्बा था और उसकी पोशाक आदि देखकर हमें उसके भद्र पुरुष होनेमें कुछ सन्देह हुआ । उसके साथ कुछ भी असबाब नहीं था ।

स्टेशनसे गाड़ी छूटते ही वह आदमी हमारे पास आ बैठा और फ्रेंच भाषामें न मालूम क्या कहने लगा । हमने उससे अँगरेजीमें बात चीत करना चाही । पर वह अँगरेजी नहीं जानता था, वह बराबर फ्रेंच भाषामें अनर्गल भाषण करता रहा । एक बार उसकी बातमें हमने हिन्दू शब्द ज़रूर सुना और समझा ।

हमने अपने मित्र मानिकरामसे कहा—क्यों भाई, यह क्या कहता है । मालूम होता है यह सारी रात बक बक जारी रक्खेगा ।

मानिकरामने हँसकर जवाब दिया—फरासीसियोंको बंगाली भी बक झकमें नहीं जीत सकते । उससे बातचीत मत करो, किताब खोलकर पढ़ने लगो । वह तभी चुप होगा ।

मानिकरामके कहे अनुसार हमने काम किया, पर उसने फिर भी हमारा पीछा नहीं छोड़ा । उसने चुरुटका एक बॅक्स हाथमें लेकर फिर व्याख्यान देना शुरू कर दिया । हमनें मनमें सोचा—'यह अच्छी विपत्ति पीछे लगी ।' हमें मालूम था कि फ्रेंच भाषामें कोसों (Cochon) का अर्थ है—सो रहो । इस दफा हमने उसका हाथ पकड़कर फ्रेंच भाषामें उससे कहा--कोसों, कोसों, कोसों ।

एक बक्स भर बारूदमें आग लगनेसे जो परिणाम होता है हमारी फ्रेंच भाषा सुननेसे वही हाल उसका हुआ । उसका मुँह लाल पड़ गया। उसकी छोटी छोटी आँखोंसे मानो आगकी चिन-गारियाँ निकलने लगीं। फ्रांसकी राज्यक्रान्तिके समय मेरियट, टाण्टन, आदि स्वदेशभक्तोंने जैसी जोशीली वक्तृतायें दी होंगी, उसी तरह यह फरासीसी भी फ्रेंच भाषा उगलने लगा। मोतियोंकी अस्थानमें बखेर होती हुई देखकर हमने हाथके इशारेसे फिर उससे कहा— कोसों। इस बार उसने कोट उतार कर फेंक दिया और घूँसा तानकर लड़नेके लिए हमारे सामने आ खड़ा हुआ। हमने अच्छी तरह जान लिया कि यह पागल है।

मानिकरामसे हमने कहा—क्यों भाई, क्या यह पागल है?

मानिकरामने कहा—इसमें अब भी कुछ सन्देह है?

हमने अपने कर्तव्यको खूब जानकर एक बार और उससे फ्रेंच भाषामें शयन करनेके लिए अनुरोध किया। हमें मालूम था कि वायुरोगसे शयनमें अनिच्छा हो जाती है।

इस तरहकी Monomania बातें हमने बहुत पढ़ी थीं। शेष रात्रि आरामसे बितानेके लिए हम दोनोंने उसे खूब मज़बूतीसे बाँध दिया और बादको विरामदायिनी निद्रादेवीकी गोदमें आश्रय ग्रहण किया।

३

सुषुप्ति और जागरणके बीचमें जो अवस्था है उसको हम कभी कभी अनुभव कर सकते हैं। उस समय हमें बाहरी शब्द सुनाई देते हैं। पर हम निर्णय नहीं कर सकते कि वह शब्द स्वप्नजग-त्का है या वास्तविक जगत्का। बात यह है कि उस समय हमारी इन्द्रियाँ अर्द्ध सुप्त अवस्थामें निचेष्ट सी होती हैं।

हमें ऐसा मालूम हुआ कि ट्रेन किसी स्टेशनपर खड़ी है। यह भी मालूम हुआ कि बहुतसे आदमी फरासीसी भाषामें बातचीत कर रहे हैं। उनमें हमने अपने साथी उन्मादग्रस्त फरासीसीका कण्ठस्वर भी साफ साफ सुना। एक आदमीने हमारे शरीरको छुआ। हमारी नींद काफूर होगई। आँखें खुल गईं।

आँखें खोलकर जो कुछ देखा उससे कुछ शान्ति नहीं मिली। हमने देखा कि हमारा उन्मादग्रस्त वही बन्दी, मुक्त हुआ हमारे पास खड़ा हुआ अपनी वाग्मिताका परिचय दे रहा है और सात फीट लम्बे दो पुलिस कांस्टेबिल हमारी ओर घूर रहे हैं। मानिकराम उस समय तक सो रहा था।

ज्येष्ठ मासके सूर्य्यका प्रकाश गार्ड़ीके अन्दर प्रवेश कर चुका था। हमें आँखें मलते देख एक पुलिस कर्म्मचारीने फ्रेंच भाषामें कुछ बातचीत कही और दूसरेने मानिकरामको जगाया।

मानिकराम भी हमारी तरह विस्मित हो गया। उसने हमसे पूछा "क्या मामला है।"

हमने कहा—मामलेका हाल कुछ कुछ तो मालूम होने लगा है। साम्य, मैत्री और स्वाधीनतागर्वित फारासीसीको बाँधनेके अपराधमें फ्रांसीसी प्रजातंत्रका कुछ दिन अतिथि होना पड़ेगा—उसके लिए इन्तजाम किया जा रहा है।

मानिकरामेन मुँह बनाकर कहा—नॉनसेन्स। हम बृटिश प्रजा हैं। हमें यहाँ कोई कष्ट नहीं पहुँचा सकता।

हमने कहा—बृटिश प्रजाके अनेक अधिकार हैं। हमें भी खबर है। पर दूसरे देशमें आकर उस देशकी प्रजाके हाथ पाँव बाँधकर कैद करनेका अधिकार भी बृटिश प्रजाको है या नहीं—हम नहीं जानते।

मानिकरामने कहा—आत्मरक्षाके लिए वैसा करनेमें भी क्या हानि है?

क्या हानि है—इसको बतानेसे पहले ही पुलिसने हम दोनोंको रेलसे उतार लिया और वह हमें थानेके ओर ले चली ।

४

हम आत्मग्लानिके मारे दग्ध हो रहे थे । दुभाषियेके न मिलनेसे पुलिस हमारे विषयमें दिनभर कुछ निश्चय नहीं कर सकी थी । दूसरे देशमें आकर इस तरह कैद होनेसे पहले ही मृत्यु हो जाती तो अच्छा था ।

शामके बाद एक अँगरेजी पढ़ा हुआ आदमी आया । उससे हमने सब वृत्तान्त कह दिया । वह सब कुछ सुनकर बोला—आपने किस भाषामें उससे शयन करनेको कहा था ?

" फ्रेंच भाषामें । "

" क्या कहा था ? "

" कोसों । "

दुभाषियेने आँखें फाड़कर हमारी ओर देखा । मानो हमारे जख्म-पर नमक मल दिया । बहुत बुरा लगा । कौन कह सकता था कि फ्रेंच जाति इतनी बे-अदब है ।

हमारा वही लम्बा उन्मादग्रस्त साथी "कोसों" सुनकर समझा कि हम दोष स्वीकार कर रहे हैं । उसने फिर हमारी ओर अंगुली उठाकर फरासीसी भाषाका फव्वारा खोल दिया ! उसकी वक्तृतामें " कोसों " शब्दहीको हम समझ सके ।

दुभाषियेने हमारी कहानी फ्रेंच भाषामें उसको और पुलिसके कर्म्मचारीको सुनाई ।

उसकी बात पूरी होते न होते वे चारों फरासीसी खिल खिला कर हँस उठे। बन्दी होनेका अपमान, उसके ऊपर भूँखका जोर और फिर इन पिशाचोंकी हँसी इन बातोंने हमको पागल बना दिया।

हमने दुभाषियेसे कहा—महाशय, आपके सभ्य देशमें बन्दियोंके साथ ऐसी ही दिल्लगी की जाती है?

क्षमा प्रार्थना करके दुभाषियेने कहा--आपने एक शब्दका अर्थ न जानकर उसका व्यवहार किया था, इसी छोटीसी बातके लिए आपको इतने झंझटमें पड़ना पड़ा। कोसोंका अर्थ शयन करना नहीं है; उसका अर्थ है—सूअर।'

हमारा सिर घूमने लगा। छिः! हमने भद्र पुरुषका अनजाने बड़ा भारी अपमान किया। तभी तो वह मारने तकको उद्यत हो गया था। हमने उसी समय क्षमा माँगी।

दुभाषियेने कहा—वे आपके ऊपर मामला नहीं चलावेंगे। कौसो (Couchons) का अर्थ है सोना और कोसों (Cochon) का अर्थ है सूअर।

हाय राम! पहले कौन जानता था कि फ्रेंच भाषामें शयन करनेके साथ सूअरका इतना घनिष्ट सम्पर्क है!

फ्रेंच कारागारसे निकल कर हमने कान पकड़ा और कसम खाई कि बिना भले प्रकार अर्थ जाने भविष्यमें किसी शब्दका व्यवहार नहीं करेंगे।

मंगल-कवच।

१

नरदेहमें चेचक रोगके बीज पहुँचा देनेसे जिस तरह चेचक रोगका भय नहीं रहता, हमारा अनुभव है–उसी तरह विवाहरूप टीका लगा देनेसे प्रेम-व्याधि नामक संकटमय वायुरोग भी युवकोंके हृदयमें प्रवेश नहीं कर सकता। प्रेमचित्रांकित और सुवासित चिट्ठीके कागजपर नये व्याहे हुए युवक 'रविबाबू' की कविता उद्धृत करके नव वधूको पत्र लिखनेके लिए आधी रातके समय दीपकके स्निग्ध प्रकाशका सद्व्यवहार करते हैं–यह हमको मालूम है। नूतन परिचयके बाद किशोरी भार्य्या जब अपने बापके यहाँ चली जाती है–उस समय युवकगण अपने मित्रोंको बता देते हैं कि जीवन कुछ भी नहीं है। उफ! और हाय! के सिवा उसमें सच-मुच कुछ भी नहीं है। पर उस पीड़ाके अन्दर–खैरियत यह है कि–कोई ज़हरीला पदार्थ नहीं है। उससे आदमी पागल भी नहीं बनता, दूसरोंके निकट उसको हास्यास्पद भी नहीं बनना पड़ता और वह संसारमें अपना या दूसरेका बिगाड़ भी नहीं करता।

आज बहुत दिनोंके बाद बाल्यबन्धु सहपाठी क्षितीशचन्द्रसे मिल-कर इस बातकी सचाई अच्छी तरह मालूम हो गई कि विवाह 'प्रेमका टीका' है। क्षितीशचन्द्र जब कालेजमें बड़ा 'प्रेमिक' था। जिस तरह कहानियोंका पथिक कुहेलिका भरे निशीथ कालमें, निर्जनस्थानमें विश्रामके लिए झूठ मूठ अग्निकी चमकके पीछे दौड़कर शक्तिका अप-चय करते हैं, प्यासा हिरन जिस तरह कल्पनाकी आँखसे मरुभूमिमें स्वच्छ सलिल भरा सरोवर देखकर इधर उधर घूमता है, क्षितीशचन्द्र भी

उसी तरह एकादशवर्षीया किसी बालिकाकी निरर्थक बात सुनकर और कभी झरोखेमें किसीके शंकाचकित नेत्रोंकी ज्योतिकी ओर आकृष्ट होकर और कभी भीगी साड़ी पहने और कलसी लिये आती हुई किसी सद्यःस्नाता ग्राम्यवधूकी लज्जाभरी चितवन निरख प्रेमसे विह्वल होकर अपनेको मन-ही-मन उपन्यासका नायक समझता, दिनरात हाय हाय करता, कभी हँसता, कभी रोता और कभी इस जोरसे श्वास छोड़ता कि उससे, 'प्राइमस नं० १००' का स्टोव जलते जलते बुझ जाय ।

कोई कोई उसको ' प्रेमिक क्षिति ' के नामसे ही पुकारा करते थे । उसका हृदय भावुक होनेपर भी बड़ा मधुर था । हम उसको 'माई डियर क्षितिदा' कहकर घनिष्ठताका परिचय दिया करते थे । आज चार वर्षोंके बाद उसको देखकर हृदयकी ' आर्ट गैलेरी ' में कालेज-जीवनके अनेक सुखचित्र दिखाई देने लगे ।

हमने उसकी परीक्षा करनेके लिए कहा--"दादा, उस समय तो मैं तुम्हारी हँसी किया करता था; पर हाय ! प्रेम कैसी बुरी चीज़ है, यह इस समय मेरी नस नस जानती है ।"

'माई डियर क्षितिदा' जरा हँसकर बोले--"दूर हो पागल ! क्या इस समय गृहस्थीकी ज्वालामें उन सब दुश्चिन्ताओंकी जगह है ?"

हमने झूठे आश्चर्यका भाव दिखाकर कहा--"दादा, यह क्या कहते हो ! तुम्हारे मुँहसे तो ऐसी बातें कभी सुनी नहीं । प्रेमकी दो चार कहानियाँ कहिए ।"

क्षितीश फिर मुस्कराया । हमने जरा अन्यमनस्क हो जेबमेंसे एक पत्र निकालकर भेजनेवालेका हस्ताक्षरमात्र दिखाकर कहा--"अच्छा दादा, यदि ऐसा हस्ताक्षरयुक्त कोई पत्र पाओ तो ?"

क्षितीशने पढ़ा—"अनुगता—श्रीमती माधुरिका दासी।" पत्रका मध्य भाग छिपाकर हमने पत्रका ऊपरी भाग दिखाया—वहाँ लिखा था "कृष्णनगर—६ आषाढ़।" उसके मुखका भाव ताड़नेके लिए हम उसे देखने लगे। उसके चेहरेपर आश्चर्यका भाव चमक रहा था। उसका नीचेका होंठ काँप रहा था। उसकी आँखें मानो उन अक्षरोंको निगले जाती थीं। हमें हठात् ख्याल आया कि 'माई डियर क्षितिदा' कृष्णनगरमें वकालत करते हैं। हमने अप्रतिभ होकर पूछा "दादा, क्या आप लेखिकाको जानते हैं?"

हमारी बातसे मानो उसकी नींद टूटी। उसने जरा हँसकर कहा—"मैं कहाँसे जानता? मैं दंग हूँ कि तुम्हारे अन्दर अभीतक ये भाव जीवित हैं। हमें तो भाई अब ये बातें एकदम अच्छी नहीं लगतीं।"

हमने विजयगर्वको दिखाते हुए उस पत्रमेंसे और एक पंक्ति दिखाई। उसमें लिखा था—"इस पत्रका उत्तर कृष्णनगर न दीजिए, कलकत्तेमें नं०४........स्ट्रीटमें दीजिए।" स्ट्रीटका नाम हमने अंगुलीसे दबा लिया। उस पंक्तिको पढ़कर वह हमारे हाथसे पत्र छीननेकी चेष्टा करने लगा। हमने अपना हाथ हटा लिया और मुँह बना कर कहा--"यह नहीं हो सकता।"

हमारी ओर एक कातर दृष्टि डालकर उसने कहा--"भैया, अब क्यों उन पुरानी भूली हुई वृत्तियोंको जगाते हो!"

हमने कहा—"अच्छा," और पत्रको जेबमें रख लिया। हाँ, तुम्हारी स्त्रीका नाम हम भूल गये, बताना तो?"

क्षितीशने हँसकर कहा—"यामिनी।"

हमने कहा—"तब क्या यामिनी बहूके प्रेममें तुम इतने मशगूल हो गये हो?"

उसने कहा—"दूर पागल । ये बातें छोड़; अब जाता हूँ । फिर मिलूँगा ।"

हम उसको इतनी जल्दी नहीं छोड़ते । पर उसका गाम्भीर्य क्रमशः बढ़ने लगा था । उससे कोई बात निकालनेकी सम्भावना न देखकर हमने उसे छोड़ दिया । मनमें हम सोचते रहे कि हाय रे विवाह, तेरे कारण ऐसा आदमी भी संसारी बन सकता है ।

२

उदयगिरिके शृंगका नीलिमामय ऊपरी भाग सिंदूरी रंगको धारण किये हुए खण्डगिरिकी ओर देख रहा है । मेघका एक काला टुकड़ा उसी हँसमुख नीलिमाके नीचेसे भागा जा रहा है, मानो किसीने उसके ऊपर भी सिन्दूरके छींटे लगा दिये हैं । पर क्या सिन्दूर उसका गहरा काला रंग छुड़ा सकेगा? प्रातःकालीन समीरकी सेवा ग्रहण करते करते हम भुवनेश्वरसे कई मील दूर पैदल ही यहाँ आ पहुँचे हैं । मार्गके दोनों ओर लगी हुई वृक्षश्रेणी बड़ी भली माळूम देती थी । किन्तु उदयगिरिके नीचे एक बंगलेमें चाय पीनेकी और उबले हुए आलू एवं पी. एस. ब्रदर्सके बढ़िया बिस्कुटोंसे जठराग्निको शान्त करनेकी आशा उससे कहीं अधिक प्रीतिकर माळूम होती थी ।

हमने भुवनेश्वरसे चलते समय एक गेरुए रंगका चोगा और एक उसी रंगकी पगड़ी साथ रख ली थी । उन दिनों हम लोग कई दिनतक मानो आमोदकी नदीमें बहे जा रहे थे । केवल एक 'तमाशे' के लिए ही हमने यह वेश बनाया था । खण्डगिरिके ऊपर चढ़कर हम एक गुहाके अन्दर जा बैठे । चाय बन जाने पर हमने सुना कि हमारे मित्र हमको पुकार रहे हैं । हम उसी एकान्त स्थानमें बैठे सुन रहे थे कि हमारे मित्र डाक बंगलेके पासवाली गुहाके रक्षक बूढ़े

चपरासीसे खूब दिल्लगी कर रहे हैं । पहाड़के पास हमने देखा कि एक बैलगाड़ी आ रही है।

मानव प्रकृतिके साथ बाह्य प्रकृति दृढ़ बन्धनमें बँधी हुई है। उस गुहाकी निर्जनता, खण्डगिरिकी ऐतिहासिक स्मृति और फिर साधुओं जैसा वेश धारण किये हुए भी हम सिर्फ अपने मित्रोंका रस-रंग ही देख रहे थे और साथ साथ ही चायके रसास्वादकी सुखचिन्तामें फूल रहे थे । हमें ऐसा माद्धम होता था कि अन्तर्जगत्‌का कोई सोया हुआ भाव धीरे धीरे हमको मनुष्य-जीवनका गुरुत्व समझानेका परामर्श दे रहा है और हमारी यौवन-सुलभ लघुता उस भावके साथ संग्राम करते करते क्रमशः तरंगोंसे विक्षिप्त तरणीके सदृश अब डूबी अब डूबी हो रही थी । हमारे मनकी वीणाके तारमेंसे मानो यह आवाज निकल रही थी—देख तो सही, कैसी सुन्दर सृष्टि है! शैल-शिखरपर किसके आदेशसे अकस्मात् यह मानस-मोहन बालारुण फैल गया है! जिन्होंने इस सौन्दर्यको बनाया है स्वयं उनका रूप कैसा होगा! हमारी आँखें बन्द हो गईं, हम सब सौन्दर्य्योंके आधार चिरानन्दमय परमात्माका स्मरण करने लगे। हमारी नस नसमें एक अनिर्वचनीय आनन्द मानो दौड़ने लगा। रोम-रोमसे मानो वह आनन्द बाहर आनेकी चेष्टा करने लगा। हम आनन्द-सालिलमें डूब गये!

३

जगतमें दुःख दीर्घस्थायी है, सुख क्षणभर ही रहता है। उस दिनके मधुर प्रभातमें उस अभिनव आनन्दमें हमारा प्राण मन तन्मय हो गया—वह भी मुहूर्त भरके लिए ही । हम फिर उसी आनन्दके प्रत्यावर्तनकी प्रत्याशामें क्षण कालके लिए स्थिर होकर आँख मूँदे रहे। पर किसानोंका गान, मित्रोंका रोला और पक्षियोंके स्वरके

सिवा और कुछ सुनाई नहीं दिया । तो भी आँखें खुली नहीं—कहीं वह आनन्द एक मुहूर्तके लिए फिर न आजाय !

किसीकी आहटसे हमारा ध्यान टूटा। देखा तो सामने दो बंगाली युवतियाँ खड़ी हैं । दूसरी तरफ दूर दो बूढ़ी स्त्रियाँ और जवान आदमी गुहाका शिल्पचातुर्य देख रहे हैं । हमारे देखते ही रमणियोंने सिर झुकाकर हमें प्रणाम किया और उनमेंसे एकने एक रुपया हमारे सामने रक्खा।

हम विस्मयमें पड़ गये । थोड़ी देरके लिए हम किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये। हमने समझा कि भगवद्चिन्ताकी ज्योतिसे हमारी बाहरी आकृति जरूर उद्भासित हो गई है । उसीसे आकृष्ट होकर ये दोनों रमणियाँ हमको साधु जानकर हमारे ध्यानभङ्गकी प्रतीक्षा कर रही हैं। क्या रहस्य है ! हम साधु नहीं हैं, यह बात भी साफ साफ कह देनेका हमें साहस नहीं हुआ । हमने अंगुलीसे उनका रुपया उनकी ओरको सरका दिया। युवतियाँ आपसमें एक दूसरेका मुँह देखने लगीं।

हमें कुछ साहस हुआ—हमने कहा—" मा, हम साधु नहीं हैं। हम रुपया नहीं लेंगे।"

उन दोनों युवतियोंमें—कहना होगा—एक गौरवर्ण थी। पर उसको देखकर मालूम होता था कि वह बीमार है । दूसरी रमणी खूब हृष्ट पुष्ट थी। रंग साँवला था और उसके कोमल मुखसे सन्तोषका भाव टपका पड़ता था । दुबली रमणीने एक बार हमारी ओर अपनी बड़ी बड़ी आँखोंसे कातर दृष्टि डालकर अपनी संगिनीसे कहा—" इनसे लेनेके लिए कहो।"

दूसरी रमणीने कहा—" बाबा, हम गरीब लोग हैं। जो श्रद्धासे देते हैं, ले लीजिए।"

हमने लज्जित होकर कहा—" नहीं, हम भिखारी नहीं हैं । भगवानकी कृपासे हमें भोजन मिल जाता है । "

हमने दुबली रमणीकी ओर देखा । उसके रोगक्लिष्ट सुन्दर चेहरेपर बड़ी बड़ी दो आँखें चमक रही थीं । उसके मुखपर किसी अव्यक्त वेदनाका भाव था । उसके हाथोंमें हमने सधवाका लक्षण देखा । हमने कहा—" आप कबसे बीमार हैं ? इस अवस्थामें आपको ऐसा रोग किस तरह हो गया ?"

बलिष्ठ रमणी बोली—" बाबा, आप ठीक कहते हैं । साधु देखनेसे ही मालूम पड़ जाते हैं। तीन महिनोंमें माधुरिकाका यह हाल हो गया—पहले तो खूब मोटी ताजी थी ।"

हमने माधुरिकाकी ओर विस्मयसे देखा। क्या उस पत्रकी प्रेषिका माधुरिका—यही है ? वह भी अपने वेदनाक्लिष्ट नेत्रोंसे हमको देख रही थी । हमने उसको लक्ष्य करके कहा—" क्या आप ज्यादा पढ़ा लिखा करती हैं ?"

दूसरी रमणीने बड़े आग्रहसे कहा " ठीक कहते हैं । बाबा, आप तो अन्तर्य्यामी हैं । यह दिनभर पढ़ती लिखती रहती है । माधुरिका हमारे चचाकी लड़की है । हमारे चचा और चाची इसको छः मासका छोड़कर मर गये थे । ....स्ट्रीटके ४ नम्बरवाले मकानमें हम रहते हैं । हमारे बहनोई—"

माधुरिका प्रगल्भा बहिनके ऊपर नाराज हो गई । उसने कहा—" क्यों बक बक कर रही हो, अब चुप रहो न सुर—"

हमने कहा—"क्या इनको मैलेरिया हुआ था ? इन्हें क्या कोई रोग हुआ था ?"

फिर एक लम्बी वक्तृतामें सुर (जिसका पूरा नाम सुरनलिनी था) ने हमें बता दिया कि डॉक्टर और कविराज कोई भी इसके रोगका निश्चय नहीं कर सके हैं । हमने विस्मयसे उसकी ओर देखा । सुन्दरीके चेहरेके प्रत्येक स्थलपर एक गंभीर मर्मवेदना छिपी हुई थी । हमने हँसकर कहा–'मा, आप कोई गंभीर मनःकष्ट पा रही हैं–कोई विशेष शोक आपको हुआ है ? "

माधुरिकाने नीचेको मुख कर लिया, उसकी सुन्दर देहलता काँपने लगी । सुरनलिनीने एक बार हमारी और एक बार युवतीकी ओर अर्थपूर्ण दृष्टिसे देखा । उन दोनोंको चुप देखकर हमने कहा–" मा, क्षमा कीजिए । हम देखते हैं, आप अपनी दुःखवार्ता कहा नहीं चाहतीं । हम साधु नहीं हैं, कुछ भी नहीं हैं, फिर भी आपको एक परामर्श देते हैं । आप शिक्षिता हैं । भगवान्‌के चरणोंपर आत्मसमर्पण करके शोकके कारणको भूल जानेकी चेष्टा कीजिए । आपने गीता पढ़ी है ? "

मधुरिकाकी आँखोंसे आँसू बह रहे थे । उनको देखकर हम बहुत विचलित हुए ।

हमने आवेगपूर्वक कहा–"हमारी अवस्था अधिक न होने पर भी जब हमने आपको माता कहकर पुकारा है, तब आप सब बातें हमसे खोलकर कह डालिए । हम आपको शान्ति देनेकी चेष्टा करेंगे । "

हमने मासिकपत्रिकाका सम्पादन करके नाम पैदा किया था । बी०ए० भी पास किया था । इतना पढ़ लिखकर क्या हम एक स्त्रीका शोक भी दूर नहीं कर सकते थे ? जब उसने हमको संन्यासी समझ रक्खा था, तब ज़रूर हमारी बातको साधुवाक्य समझ कर मानेगी, इसमें हमें जरा भी सन्देह न था । दोनों रमणियाँ हमारे सामने उसी

गिरिगुहामें बैठ गई । भगवान् मरीचिमालीने अपनी किरणोंसे उस स्थानको उद्भासित कर दिया ।

४

हमारे दोनों शिष्य सुरेश और कनाई (कन्हैयालाल) थोड़ी दूर बैठे हुए मौज उड़ा रहे थे । माधुरिकाके साथी दूसरी ओर चले गये थे । बन्धुओंके इशारेसे हमने जान लिया कि चाय तय्यार है । पर उन रमणियोंके सामने आलू खाने और चाय पीनेसे सब बात खुल जाती । हमने बड़े कष्टसे योगीकी तरह अपनी दृष्टिको बन्धुओंकी ओरसे हटाया । पर कनाईलालको यह बात अच्छी न लगी । हमारी पोल खोलनेके लिए वह आगे बढ़ने लगा । माधुरिकाने अपने शोकका कारण स्वयं कहना आरम्भ किया । कन्हैयालाल ज्यों ज्यों आगे बढ़ता था, त्यों त्यों हमारा हृदय जोर जोरसे धड़कता था । कैसा सङ्कट है ! हतभाग्य कन्हैयालालकी इतनी बड़ी कायामें क्या सभ्यताका लेश भी नहीं है !

कन्हैयालाल अपने बड़े भारी शरीरको लेकर गुहाके मुँहपर आ ही पहुँचा ! हमारा नाम ललितमोहन है, पर हमारे अन्तरङ्ग मित्र हमें नेलो कह कर ही पुकारते हैं । भेड़ोंके दलमें हमने सिंहका शुभागमन कभी नहीं देखा, पर दाना चुगते हुए चूहोंके पास कोयलेके पीपेसे निकले हुए बिलावके आने पर जो गडबड़ मच जाती है—उसको अनेक बार देखा है। इस समय कनाईके आगमनसे हमारे शान्त आश्रमकी भी वही दशा हुई । संन्यासीका हृत्पिण्ड तो मानो उसके शरीरके बलकी परीक्षा ही करने लगा । दोनों रमणियाँ भी भूमिपर्य्यन्त घूँघट निकालनेको विवश हुईं । हमारे कानमें कल्पना देवी कनाईलालके कण्ठस्वरमें जोरसे कहने लगी, " नेलो, पाखण्ड छोड़ कर चाय पियो, उठो ।"

कनाईलालने बड़ी मुश्किलसे हँसी रोककर गुहाके पास आकर हमें प्रणाम किया। हमने भी नारद मुनिकी तरह हाथ उठाकर उसको आशीर्वाद दिया। उसने भी अभिनयके सुरमें कहा "स्वामिन्, कुछ भोजन कीजिएगा? प्रभुका प्रसाद ग्रहण किये बिना हम कुछ भी न खायँगे।"

हमारा भय दूर हुआ, मोह नाश हुआ। हमने मुस्कराते हुए कहा-- "इतने सबेरे हम भोजन न करेंगे। भगवान्का प्रसाद दिए बिना हम भोजन न छुएँगे"

कनाईलाल इशारा करके चला गया। रमणियाँ फिर अपनी कहा-नी कहने लगीं। वह कहानी बड़ी ही करुण थी, बड़ी ही मर्म्मस्प-र्शिनी थी; वह उपन्यासकी तरह हृदयग्राहिणी थी। आद्योपान्त सुन-कर हमने कहा--"किसी भूलके कारण इस तरहका भाव हो गया है। आपके पास रहनेपर उसके हृदयसे यह भाव दूर होना मुश्किल मालूम पड़ता है। इसलिए आपको कुछ दिनोंके लिए अपने स्वामीसे दूर रहना चाहिए।"

माधुरिकाने चुप चाप हमारी ओर देखा। हमने जान लिया कि वह इस परामर्शको मानना नहीं चाहती। हमने फिर कहा--"ऐसी अवस्थामें साथ रहनेसे भी क्या लाभ है? आपको देखकर उसको शान्ति नहीं मिलती और उसके दुष्ट व्यवहारसे आपका हृदय भी खण्ड खण्ड होता है।"

माधुरिकाने कहा--"बाबा, उनको हम किस तरह छोड़ें? उनके दैनिक जीवनके प्रायः सारे आवश्यक काम हम अपने हाथसे करती हैं। तो भी उनको कुछ न कुछ कष्ट हो ही जाता है। इन पन्द्रह दिनोंमें ही उनको न मालूम कितने कष्ट उठाने पड़े होंगे।"

हमने सोचा, जो हतभाग्य ऐसी साध्वी स्त्री-रत्नके ऊपर अत्याचार करता है--वह बड़ा निर्दय है । हमने उसको समझा दिया--यह बात बिल्कुल ठीक है कि जबतक दाँत हैं उस समयतक दाँतोंकी कदर नहीं होती । हम रोज ही इस सचाईका प्रत्यक्ष करते हैं । अभाव होने पर ही तुम्हारा स्वामी जानेगा कि उसने कैसा स्त्री-रत्न खोया है । इसलिए तुमको चहिए कि कलकत्ता जाकर तुम उससे साक्षात्कार न करो । यदि वह साक्षात्कार करने आवे, तो सहजमें उसे दिखाई मत पड़ो । ऐसा करनेसे ही तुम्हारे स्वामीका पूर्व स्नेह फिर जग उठेगा । हमने जान लिया कि ऐसा करनेसे युवतीका हृदय फट जायगा; पर उसने हमारे आदेशको माननेका वचन दिया ।

हमने पूछा--"आपके स्वामी क्या करते हैं ?"

"विकालत ।"

"उनका नाम ?" हमने अन्यमनस्क होकर पूछा ।

सुरनलिनीने उत्तर दिया--"क्षितीशचन्द्र मित्र ।"

५

एक भीषण आत्मग्लानि द्वारा चित्त कष्ट पाने लगा । रमणियाँ गाड़ीमें चढ़कर दूर निकल गईं--तो भी हम उसी गुहामें बैठे उस आत्मग्लानि द्वारा दग्ध होते रहे । सूर्य्यदेव हमारे सामने आकर मानो हमारी अग्निपरीक्षा करने लगे । हमने अपने भीतर धधकती हुई अग्निसे सूर्य्यके तापको शीतल पाया । हमारे मित्र वहाँके प्राचीन शिल्पको देख दाखकर स्नान भी कर चुके और डाक बंगले पहुँच गये; यह संवाद पाकर भी हम वहाँसे हिल न सके । एक न्यायविगर्हित कार्य्यके लिए मनुष्यको इतना कष्ट भोगना पड़ेगा--हमने पहले कभी सोचा भी न था । हमारी जरा देरकी दिल्लगीसे यह प्रणयी दम्पती

तीन मासके लंबे कालसे कितना कष्ट पा रहे हैं—कुछ ठीक नहीं। बाल्यबन्धु सहपाठी क्षितीशचन्द्रने हमसे बन्धुत्व करके खूब हालाहल उपहार पाया—इस बातको सोचकर जीमें यही आता था कि पहाड़की चोटीसे गिरकर चूर्ण विचूर्ण हो जाना ही अच्छा है।

हम खाली समयमें साहित्यचर्चा करनेके लिए एक मासिक-पत्रिका निकाला करते थे। हर तरफसे अनेक व्यक्ति अपने अपने लेख, कविता और उपन्यास आदि उसमें छपानेके लिए हमारे पास भेजा करते थे। जिस दिन क्षितीशसे भेट हुई थी, उसी दिन श्रीमती माधुरिका दासीकी भेजी हुई एक कविता भी हमारे पास आई थी। उस समय वह कविता और उसके साथका पत्र हमारे पास ही था। लेखिकाने, मालूम होता है, अपना छपा हुआ लेख पतिको दिखानेके लिए पत्रका उत्तर आदि कलकत्तेके पतेपर मँगाया था। कलकत्तेसे दूसरे लिफाफेमें पत्रोत्तर मँगानेका उसने प्रबन्ध कर लिया होगा।

कुबुद्धिके वशमें पड़कर हमने केवल दिल्लगीके लिए उसी पत्रका विशेष स्थल क्षितीशको दिखा दिया। उस समय हमें क्या मालूम था कि माधुरिका उसकी स्त्री है और क्षितीशका मन इतनी ही सी बातपर अपनी साध्वी स्त्रीसे फट जायगा। यदि वह अपनी स्त्रीसे अपने सन्देहका कारण साफ साफ कह देता, तो झगड़ा वहीं निबट जाता। किन्तु उसने ऐसा किया नहीं। वह नित्य ही माधुरिकाकी अवहेला करने लगा। रोज ही उसको अवमानित और लांछित करके दग्ध करने लगा। हाय, सरला हिन्दू ललना चुपचाप स्वामीके संदिग्ध हृदयमथित कालकूटकी ज्वालामें जलने लगी। आज दैवयोगसे हमें उसकी स्त्रीकी बात सुनकर इस बातका पता लगा। उससे मुँह खोलकर हम कोई बात नहीं कह सके। धूर्त साधुकी तरह उसको आशी-

र्वाद और साधारण परामर्श देकर विदा कर दिया। किन्तु मनमें सङ्कल्प कर लिया कि जिस तरह होगा उसको सुखी करके अपने पापका प्रायश्चित्त करूँगा। अपरिचिता भद्र महिलाको माता समझकर उसके पत्रको हमने पवित्र क्यों नहीं माना—यह सोचसोचकर हम खूब जलने लगे। सिर्फ तमाशेके लिए जवानीमें हम अनेक गुरुतर पापोंका अनुष्ठान कर बैठते हैं।

६

हम अपनी मासिक पत्रिकाके आफिसमें बैठे हुए किसी पण्डितके भेजे हुए 'सांख्य-योग' नामक प्रबन्धको पढ़ रहे थे। इसी समय अकस्मात् हमारे कमरेमें क्षितीशचन्द्रने प्रवेश किया। उसकी अवस्था देखते ही हम काँप उठे। इन कई महीनोंमें उसके चेहरेपर विपत्तिके चिह्न दिखाई पड़ने लगे थे, वह दुबला भी हो गया था, उसका लावण्य नष्ट हो गया था, उसकी आँखोंमेंसे किसी भीषण यातनाका विषादभरा चिह्न प्रकट हो रहा था। हमने मनकी बात दबाकर उससे पूछा—"दादा क्या हाल है? पूजाकी छुट्टीमें कहीं बाहर नहीं गये क्या?"

उसने कहा—"तुम तो बनारस गये थे—सुना था। मैं एक दिन और भी आया था।"

हमने वास्तवमें कौतुक करनेके लिए उड़ीसा जाते समय कह दिया था कि बनारस जा रहे हैं। अब मालूम हुआ कि यदि उसको हमारी पुरीकी यात्राकी बात मालूम हो जाती तो, उसकी अवस्था और भी भीषण हो उठती। हमने बनारसकी दो एक बातें कहकर उससे पूछा—"दादा, यामिनी तो अच्छी तरह है?"

उसने विस्मित होकर कहा—" यामिनी, कौन यामिनी?"

हमने कहा—"तुम्हींने तो कहा था कि हमारी स्त्रीका नाम यामिनी है।"

उस समय उसने अपनी स्त्रीका नाम झूठ मूठ यामिनी बताया था। मनोभावको छिपाकर उसने कहा—"ओ! हाँ अच्छी तरह है।"

उसके बाद उसने कहा कि उसकी स्त्री अपने बड़े भाईके साथ पुरी आदि तीर्थ भ्रमण करने गई थी। उसके कहनेके ढंगसे हमने समझ लिया कि कलकत्ता आकर उसकी स्त्रीने उसके साथ साक्षात्कार नहीं किया है। हमने मेजकी दराजमेंसे कुछ प्रबन्ध निकालकर उससे कहा—"दादा, आप इस समय खूब आये, हमें अपनी मासिक-पत्रिकाके लिए प्रबन्ध पढ़ने थे। बड़ा कठिन काम है। भाई जरा मदद तो करो।"

हमने 'शिम्पैञ्जीकी अस्थिपरीक्षा' नामक प्रबन्ध उसके हाथमें दिया। उसको देखकर वह बोला—"नॉनसेन्स, क्या यह भी कोई प्रबन्ध है!"

हमने कहा—"यह न सही, कविता पढ़ोगे? देखो नायिका-नूपुरके सम्बन्धमें कैसी अच्छी कविता है! कैसा बढ़िया छन्द है—आहा पहला यह ही कैसा हृदयग्राही है—"

रुन रुन रुन रुन ढुन ढुन ढुन ढुन।

वह हँसकर बोला—"मुझे क्षमा करो, मैं सुनना नहीं चाहता।"

हम एक साथ ही उसके हाथमें 'बसंतमालिका,' 'चीनका गुलाब' आदि अनेक कविताओंके साथ माधुरिकाके पत्रसहित 'स्वामी' नामकी कविता देकर दूसरे प्रबन्धको पढ़ने लगे। दो तीन मिनटमें ही उसके चेहरेपर सुर्खी छा गई। हमने मानो उसको देखा ही नहीं—हम

बराबर अपना प्रबन्ध पढ़ते रहे । उसके हाथ काँप रहे थे । अपनी स्त्रीके पत्रको वह बार बार पढ़ रहा था । अन्तमें उसने कहा—

" तुमने यह चिट्ठी तो—"

हमने कहा—" सुनो तो सही, एक बड़ी बढ़िया रचना है! नाम है ' शर्वरी-चिन्ता '—लेखक—

" हाँ, यही चिट्ठी तो उस बार तुमने हमें दिखाई थी । "

"लेखक बड़ा भारी पण्डित मालूम होता है । देखो, कैसा अच्छा प्रबन्ध है । अहा--नीरेन्द्रमुक्त सुरेन्द्र नीलिम नभमें पूर्ण शशि--। "

उसने अधीर होकर कहा—"सुनते भी हो, मैं क्या कह रहा हूँ ।"

हमने कहा—"हाँ क्या कहते हो माई डियर क्षितिदा, प्रबन्ध तो—।"

" अरे तुम्हारा प्रबन्ध चूल्हेमें जाय—" इस बार हमारी दृष्टिको खींचनेके लिए उसने हमारा हाथ पकड़ लिया । हमने सोकर उठेकी तरह कहा—ऐं ! "

उसने कहा—"पिछली बार जब हम तुमसे मिले थे उस समय तुमने यह चिट्ठी हमें दिखाई थी न ?"

हमने चिट्ठीको हाथमें लेकर कहा—"होगी । ऐसी न जाने कितनी चिट्ठियाँ आती हैं! यह तो कृष्णनगरकी चिट्ठी है । क्या यह कविता तुमको नहीं दिखाई थी ?"

उसने अत्यन्त अधीर भावसे कहा—"भाई कविता नहीं—यह चिट्ठी!"

हमने कहा—" शायद दिखाई होगी । "

उसने पहली मुलाकातकी सब बातें कह सुनाईं । हमने हँसकर कहा—" भाई हमें याद नहीं, सम्भव है हमने तुम्हारे साथ दिल्लगी करनेके लिए वैसा कह दिया हो । "

भावप्रवण क्षितीशचन्द्रके मनसे बड़ा भारी बोझा उतर गया—यह हमने साफ देख लिया। उस समय उसके मनमें आत्मग्लानि और हमारे लिए क्रोधका भाव विद्यमान था। उसने हमसे कहा—"किसी भद्र महिलाके पत्रको लेकर इस तरह परिहास करना क्या बुरा नहीं है?"

हमने कहा—"क्षितीश, मालूम होता है तुम हमें भूल गये हो। तुम बाल्यकालमें कितनी भली महिलाओंके साथ प्रेम करके विह्वल होते थे। हमने तो किसी अपरिचिताका पत्र लेकर ही तुमसे दिल्लगी की थी। निस्संदेह काम तो बड़े भारी पापका—"

उसने बड़ी व्याकुलतासे कहा—"जानते हो माधुरिका कौन है?"

हमने कहा—"शीघ्र ही योगाभ्यास द्वारा सोऽहं बनकर नखदर्पणमें समस्त—"

उसने कहा—"सुनो, माधुरिका हमारी स्त्री है।"

"ऐं! क्या कहते हो? बड़ा अन्याय—"

"जानते हो क्या अन्याय हुआ है?"

उसने इन कई मासोंमें अपनी स्त्रीके साथ जो निष्ठुर व्यवहार किया था, कई दफे आत्महत्या करनेका विचार उसके मनमें आया था, जिस दुस्सह यातनाको वह कई मासोंसे भोग रहा था और हमको कई बार गोलीसे मार देनेका शुभ विचार कर चुका था—इन सब बातोंको उसने बड़ी ही आवेगमयी भाषामें हमसे कहा। अन्तमें उसने कहा—"पहले हमारी स्त्री हमको हर तरहसे प्रसन्न रखती थी—अब क्या करती है जानते हो?"

हमने कहा—"भाई, तुम्हारे चरण छूकर क्षमा चाहते हैं। हमारे कारण—"

"अरे चूल्हेमें जायँ हमारे चरण।"

हमने बड़े भयके साथ कहा--"तो हुआ क्या?"

उसने कहा--"हुआ क्या, हमारी स्त्रीने क्या किया, जानते हो? पुरीसे आकर वह कृष्णनगर नहीं गई। आज हम यहाँ आये, तो उसने हमसे मिलना पसन्द नहीं किया। हमें सूरत दिखाना नहीं चाही। इसी लिए आज तुमको 'आब्ज़र्व' करनेके लिए यहाँ आया था।"

हमने उसको खूब समझा कर कहा--"माधुरिकाका अभिमान करना आश्चर्यकी बात नहीं है। ऐसी अवस्थामें आत्महत्या तक--"

"ऐं! आत्महत्या! अरे कहीं वह ऐसा ही न कर बैठे! गुड बाई! मैं शीघ्र जाकर उसके चरण छूता हूँ। कहीं इतनी देरमें ही अफीम हाइड्रो सैनिक एसिड--"

यह कहता कहता क्षितीशचन्द्र भागनेको ही था कि हमने उसको समझाकर कहा--"भाई, जो उसने इतने दिनोंतक न किया--तो अब क्यों करेगी? और तुम्हारे वहाँ जाने पर भी माधुरिका तुमसे नहीं मिलेगी।"

"हाँ, यही तो मुश्किल है।"

"इसका उपाय भी है।"

"हाँ उपाय है, निश्चय है, अवश्य है, अलबत्ता है। सैकड़ों उपाय हैं। पर क्या उपाय है? बताओ तो सही।"

हमने कहा--"अबकी बार बनारसमें एक साधुसे मुलाकात हुई। उसने हमको एक मङ्गल-कवच दिया है। उसने कहा--जो कोई उस मङ्गल-कवचको तीन बार विष्णुका नाम लेकर किसी स्त्रीके हाथमें देगा, उसी समय वह स्त्री उस आदमीके चरणोंमें लोट जायगी। फिर वह प्रेम नष्ट नहीं होगा।"

अधीर प्रेमिक क्षितिने कहा—" अरे तो वह कवच मुझको अभी अभी दो । "

मैंने कहा—" तुम स्त्रीका साक्षात् कहाँ कर सकोगे । "

" जबरदस्ती साक्षात् करूँगा । "

उसको 'दो मिनट ठहरिए—' कहकर हम घरमें चले गये । हमने एक पुराने कागजके टुकड़ेपर लिखा—

" मा ! आपका स्वामी अब अपना दोष समझ गया है । अब उसको ग्रहण कीजिए । यदि सन्तानको (मुझको) देखनेकी इच्छा हो, तो अपने पागल स्वामीसे कह देना कि 'कवचदाताको बुला लाओ' । तब आप देखेंगी कि कवचदाता वही है—खण्डगिरिका (अ) साधु । "

" पुनश्च—रुपया वापिस करता हूँ । "

बाहर आकर क्षितीशसे कहा—" लो ।" हाथमें कागज देखते ही उसने उठकर कहा—"जल्द दो ।"

हमने कहा—" थमो, कवच इस लिफाफेमें बन्द है । तुम स्त्रीके सामने खड़े होकर तीन बार विष्णुका नाम लेकर कवचका कागज उसके हाथमें दे देना और उसको धीरे धीरे पढ़नेको कहना । जब वह पढ़ चुके तब इस सिन्दूर लगे रुपयेको उसके मस्तकपर छुआ-कर उसके हाथमें दे देना । "

कवच लेकर पागल भागा । हमारे भीतरका भी भारी बोझा हलका हो गया ।

७

दूसरे दिन प्रातःकाल ही सहास्यमुख क्षितीश हाजिर हुआ । हमने कहा—" क्यों बाबाजी ! "

उसने कहा—"तू बदमाश है, चोर है—"

हमने कहा—"स्टूपिड, गधा,—"

उसने कहा—"पूजाकी छुट्टीमें कहाँ गया था ?"

"क्यों, उदयगिरि वगैरह—"

"किस वेशमें ?"

"साधुवेशमें, तुम्हारी स्त्रीके साथ साक्षात् हुआ था।"

"उसको तूने ठगा भी था ?"

"क्यों भाई, जो एक रुपया ठगा था वह मंगल-कवचके साथ वापिस तो कर दिया।"

"मंगल—कवच ! तुम्हारा सिर ! चलो तुम्हारी तलबी हुई है।"

हम चादर लेकर 'भले मानुस' की तरह उसके साथ चल दिये।

लोमड़ीकी दुम।

हम जब कभी अपने साले अविनाशचन्द्रसे कहते—चलो भाई; शिमलेके मित्रोंके साथ तुम्हारा परिचय करा दें, तभी वह एक न एक उज्र पेश करता। कभी सिरदर्द और कभी शरीरकी गिरावट-का आश्रय लेकर वह हमारे अनुरोधसे पीछा छुड़ा लेता था। आज हमने उससे पूछा—"क्यों भाई, देशमें तो तुम मिलना बैठना खूब पसन्द करते थे, कलकत्तेमें तुम्हें सब कोई जानता है। पर यहाँ आकर लोगोंसे इतना क्यों बचते हो?"

हमारी स्त्रीके भाईने मूछोंपर हाथ फेरते फेरते हमसे कहा—"इसके पूछनेकी भी कोई जरूरत है? मसल है—तीसरा कुत्ता बहिनका भाई, अर्थात् जो बहनोईके अन्नसे अपनी सद्गति करता है वह सारमेय-श्रेणी-भुक्त है! तुम्हारे साथ जाकर किसी हँसोड़के हाथ पड़ गये, तो कुत्ता बने बिना छुटकारा नहीं मिलेगा।"

हमने कहा—"वाह, वाह खूब कहा? तुम हमारे गलेके हार तो नहीं हो। कलकत्तेमें प्लेगके प्रकोपके कारण सभी इधर उधर भाग रहे हैं। तुम हमारे पास हवा खानेके लिए चले आये हो।"

अविनाशने हँसकर कहा—"अच्छा, फिर हमें कोई यहाँ पहचानता नहीं, परिचयके साथ ही कहना पड़ेगा—"हम अमुकके साले हैं।"

हमने गर्वपूर्वक कहा—"फिर इसमें हानि क्या है?"

अविनाशने कहा—"सुना नहीं शास्त्रमें लिखा है,—

स्वनामा पुरुषो धन्यः पितुर्नामा च मध्यमः।
अधमःश्वशुरनामा च श्यालनामाधमाधमः॥

तो क्या अधमाधम बनानेका विचार है?"

हमने कहा-" तो क्या छुट्टीका दिन घरमें बैठे बैठे ही कटेगा ।"

अविनाशने कहा-" चलो मैदानमें घूम आयें । "

यही स्थिर हुआ । शिमला शैलकी स्वल्पजनाकीर्ण माल रोडके ऊपर होकर संजौलीकी ओर हम दोनो चल दिये। उस समय ज्येष्ठका महिना लगा ही था । पहाड़पर शीतका प्रकोप कम हो चला था । पहाड़के उत्तरीय शृङ्गोंपर धवल तुषार-राशि मध्याह्नभास्करकी किरणोंसे प्रज्वलित होकर कहीं कहीं सुनहरी रंग धारण किये हुए थी । हम चार सालसे इस दृश्यको देखते रहे हैं, पर देखकर तृप्ति नहीं होती । आगे होगी—ऐसा भी मालूम नहीं होता । रास्तेके इधर उधर साहबोंके बंगलोंसे स्टेट-बगीचोंकी प्राचीरपर गुलाब और चमेलीके असंख्य फूल खिलकर हिमालयकी शीतल मलयको सुवासित कर रहे थे । बीच बीचमें किसी धनाढ्य अँगरेज महिलाके घोड़ेकी टापोंसे उड़ी हुई धूलि हमारी सर्जकी पोशाकके रंगको बदल देती थी । "

संजौलीके मोड़पर पहुँचकर अविनाशने कहा--" चलो भाई, नीचे-वाली उपत्यकाकी सैर करें । हमने पहाड़ी खेती नहीं देखी है । एक बार इस हरे भरे मैदानकी सैर कर आयें । "

अविनाश जिसको मैदान समझ रहा था वह गढ़ेकी असमतल भूमिके सिवा कुछ नहीं था । किसी अँगरेज कविने कहा है—
'T's distance which lends enchantment to the view—
पृथिवीके सब द्रव्य ही दूरसे भले मालूम पड़ते हैं; करीबसे देखने-पर उनका वह सौन्दर्य नही रहता ।

जो भी हो, हमने राजपथ छोड़कर पगडंडीकी राह ली । वहाँ चीड़ और केलूके वृक्षोंसे शैलभूमि परिपूर्ण थी । बड़ी मुश्किलसे केलूके नीचे उतरे । सूखे पत्तोंमें कई दफे अविनाशका पाँव फिसला । सारा

जंगल अगस्तके फूलोंसे भरा हुआ था। आठ दस हाथ ऊँचा वृक्ष नीचेसे ऊपर तक सुन्दर लाल फूलोंसे लदा हुआ था। कहीं कहीं पहाड़ी गुलाब और चमेली अगस्तके वृक्षसे लिपटकर उसकी शोभाको और भी बढ़ा रहे थे।

नीचे पहुँचकर पहाड़ियोंका कोई ग्राम दिखाई नहीं दिया। शायद रास्ता छूट गया। पहाड़में रास्ता भूलना कोई असम्भव बात नहीं।

हम जहाँ खड़े थे वहाँसे २०—२५ हाथपर एक झरना बह रहा था। झरनेसे ज्यों ज्यों हम निकट होते गये, झरनेका दृश्य उतना ही अधिक मनोहारी दिखाई देने लगा। पञ्जाबमें सभी लोग बंगालियोंका आदर करते हैं, पहाड़ी झरना भी योग्य व्यक्तियोंको आदर देनेमें कुण्ठित नहीं हुआ और छोटे छोटे पत्थरोंपर नाचता हुआ हमारे आगमकी बातको लेकर न मालूम कहाँ तक चला गया।

अविनाश बोला—"भाई, यहींपर बैठो, कैसी अच्छी जगह है।" वास्तवमें वह स्थान बड़ा ही रम्य था। इस जगह दो पहाड़ आपसमें मिले हुएसे मालूम देते थे। उनके बीचमें झरना बह रहा था। उसका मध्यभाग अनेक वृक्ष और लताओंसे परिपूर्ण था। घासकी मानो कोमल शय्या पहलेसे ही किसीने हमारे लिए बिछा दी थी।

हमने कहा—"तुमको साथ न लाकर यदि तुम्हारी—"

अविनाशने कहा—"यहाँपर तो इन दिल्लगियोंको छोड़ो।"

हम चुप चाप बैठ गये। ऊपरसे पहाड़ी कोकिलने कूक भरी—हमारी चिर-परिचित चिड़िया भी बोल उठी—"बहू, कथा कहो।"

* * * *

अविनाश बोला—"देखते हो, बादल कहाँसे आ गये?"

मित्रोंसे सुन रक्खा था कि शिमलेमें शाम, पशम और चर्म्मावृता विडालाक्षी सुन्दरियोंके मनोभावका दो दिनमें ही परिवर्त्तन हो जाता है; पर उससे भी अधिक परिवर्त्तनशील है शिमलेकी ऋतु। अभी तो सूर्य्यकी प्रखर किरणें तरुलता और पशुपक्षियोंको खूब गर्म्म कर रही थीं और क्षण भरके बाद ही न मालूम कहाँसे मेघोंके कुछ टुकड़ोंने जल बरसा कर सबको सर्दीसे कँपा दिया।

" हमने कहा—भाई जितनी शीघ्र चल सकते हो, चलो। सामने एक घर दिखाई देता है, वहाँ पहुँचनेपर रक्षा हो सकती है। यहाँ भीगे नहीं और निमोनियाके पञ्जेमें फँसे नहीं। "

हम हाँपते हाँपते ऊपर चढ़ने लगे। एक एक करके अनेक काले बादल वहाँ आकर इकट्ठे होने लगे। होलिडक पहाड़के ऊपरसे एक बड़ा बादल उतरता हुआ दिखाई दिया। नीचे, दूसरे पहाड़पर खड़ा हुआ, दूसरा बादल मानो उसकी प्रतीक्षा कर रहा था।

जिस समय हमारा लक्ष्यस्थान १०–१२ हाथकी ऊँचाईपर रह गया था, उसी समय उस बड़े मेघने नीचेके मेघसे टक्कर खाई। हम लोग चौंक पड़े। कैसा भीषण शब्द हुआ! कड़ कड़ झड़ झड़ शब्दसे कान बहरे होने लगे। हम लोग भी हाँपते हाँपते ऊपर चढ़ने लगे।

जिस घरके सामने खड़े होकर हमने दम लिया वह एक छोटा सा पहाड़ी झोंपड़ा था। पहाड़ी झोंपड़ा फूससे नहीं छाया जाता है। उसपर स्लेट बिछी रहती है। उसके छोटेसे बरामदेमें लाड़ाक जातिकी एक युवती दो मेढ़ोंके साथ खेल रही थी।

आश्रय पाकर हमारा चित्त ठिकाने हुआ। तिब्बतके लाड़ाकवासी मुसलमान जातिकी यह युवती थी; ये लोग हिन्दी समझ लेते हैं, पर इनकी अपनी भाषा और ही है। ये लोग बड़े अतिथिसेवक होते हैं।

हमको देख कर बालिका झटपट खड़ी हो गई। जो पाजामा वह पहने हुए थी वह अपेक्षाकृत साफ था। उसके गलेमें पड़ी हुई मालामें तिब्बत और चीनके चाँदीके सिक्कोंके साथ एक सोनेका सिक्का भी था। उसके हृष्ट पुष्ट और सुगठित अंगपर पीले रंगकी एक ओढ़नी भी थी।

लाड़ाकी लोग फूलोंके बड़े प्रेमी होते हैं। झट पट उठनेमें लड़कीके सिरसे फूलोंकी माला जमीनपर गिर पड़ी थी। हम भी थोड़ी बहुत लाड़ाकी भाषा जानते हैं। बालिकासे परिचितकी तरह हमने कहा—"चिसों?" (अच्छी हो?)

युवतीने उत्तर दिया—"लेहे मोसों।" (जी हाँ, अच्छी तरह हूँ।)

हमने कहा—"गार दुपेत।" (कहाँ रहती हो?)

युवतीने कुटीको दिखा दिया। वर्षा भी आरम्भ हो गई थी। हमने उसके यहाँ आश्रय पानेकी प्रार्थना की।

रमणी मधुर मुस्कानपूर्वक बड़े आदरसे हमको घरमें ले गई। घुसते ही दर्वाजेपर हमने मुर्गोंके पर, मेढ़ोंके बाल आदि पड़े देख-कर समझा कि घरकी भीतरी अवस्था भी इसी प्रकारकी होगी, पर जाकर देखा कि घरका भीतरी भाग खूब साफ था।

हमारे बैठनेके लिए लाड़ाकी महिलाने चारपाईपर मेढ़ेकी खाल बिछा दी। हम उसपर बैठ कर रमणीके साथ कथोपकथन करने लगे। उसकी माताने भी हमारी बातचीतमें भाग लेना आरम्भ कर दिया। उसका छोटा भाई एक पक्षी लाकर अपनी मातासे बोला—"अम्मा वि।" (मा, पक्षी है।)

उसकी माताने उत्तर दिया—'बाबूजी मिओ' (चुप रह, बाबूजी मारेंगे)

बाहर मूसलधार पानी पड़ रहा था—घरके भीतर बातचीतकी झड़ी लग रही थी। बात चीत हिन्दी भाषामें ही हो रही थी। युवती अवि-

वाहिता थी, उसका पिता कुलियोंका सरदार था। उसका रोजगार अच्छा था। पूछनेपर मालूम हुआ कि युवतीका नाम गुलशन है।

हमने देखा कि हमारा सम्बन्धी अविनाश पहाड़ी ललनाकी सरलता और दयापर मुग्ध हो गया है। उत्तेजनाके साथ बातचीत करते समय गुलशनके पीले गाल जब लाल हो जाते थे, तब बंगाली नवयुवक उसके मुखके लावण्यपर मोहित हो जाता था। हमने दो एक बात लाड़ाकी भाषामें भी की थी, पर तो भी गुलशनका स्नेह अविनाशपर कुछ अधिक था।

अविनाशने कहा—"गुलशन बीबी, जरा अपना कोई गाना तो सुनाओ।"

बालिकाने बड़े मीठे गलेसे लाड़ाकी भाषाका एक गीत गाया। उसकी माताने भी उसका साथ दिया।

पूछनेपर मालूम हुआ, गानका अर्थ इस तरह था—

प्रथम पंक्ति—शीत कालके उपस्थित होनेपर तालाबका जल जम गया।

दूसरी पंक्ति—याक और लंगड़ीके (एक तरहकी भेड़के) बाल बढ़ने लगे—शीत आ गया।

तीसरी पंक्तिका अर्थ याद नहीं।

चौथी पंक्ति—रमणीके हृदयका प्रेम गाढ़ा हो चला, विदेशसे उसका स्वामी लौट आया।

बाहर आकाश खूब साफ हो गया। घड़ीमें देखा तो ४ बज गये थे। अविनाश उठना नहीं चाहता था, पर हमारे कहनेसे उसको उठना ही पड़ा।

गुलशनने कहा—"बाबूजी, हमारी स्मरणस्वरूप यह चीज लेते जाइए। यह लोमड़ीकी दुम है।"

अविनाशकी जेबमें रूमाल था। वह हँसकर बोला—"गुलशन बीबी, हमारी याद करनेके लिए यह रेशमी रूमाल रख लीजिएगा।"

गुलशनने सलाम करके कहा-"बाबूजी, आपका खुत्यों (साला) बड़ा दयालु है।"

उस उपहार द्रव्यको हाथमें लेकर हम ऊपर चढ़ने लगे। अविनाश फिर फिर कर पीछेकी ओर देखने लगा। वह हमसे बोला—

"भाई, रास्ता याद रखना। देखो गुलशन हमको देख रही है।"

घर आनेपर हमारे पाँच वर्षके लड़केने लोमड़ीकी दुम छीन ली और पूछा—"बाबा, यह क्या है?"

हमने कहा—"यह लोमड़ीकी दुम है।"

उसकी माता उस समय घरके काममें लगी हुई थी। बालकने उसके चेहरेपर उस दुमको ढुला कर कहा—"मा, देखो यह लोमड़ीकी दोमड़ी है।"

हमारी हृदयेश्वरीने भयके मारे मुँह फेर कर कहा—"ओ मा!—"

* * * *

अविनाश मकान जा रहा है। हमने पूछा—सब पैक हो गया?

उसने कहा—एक चीज दोगे?

हमने कहा—तुम्हारे लिए अदेय कुछ भी नहीं।

अविनाशने कहा—नाराज मत हो, हम गुलशनकी दी हुई वह चीज स्मारकरूपसे अपने पास रखना चाहते हैं।

हमने हँसते हँसते 'लोमड़ीकी दोमड़ी' को भी उसके बिस्तरके साथ बाँध दिया।

प्रतिदान।

लाहोरके मुट्ठीभर बंगालियोंमें दिवाकर बाबूकी जैसी समालोचना होती है, उससे माळूम पड़ता है कि वहाँपर उनकी प्रतिष्ठा साधारण नहीं हैं। धनमें तो दिवाकर बाबू बंगालियोंमें क्या अनेक पंजाबियोंमें भी बड़े हैं; पर उनकी समालोचनामें यह प्रसंग कभी न उठता था। उनकी जिन बातोंकी विशेषरूपसे समालोचना होती थी उनमें प्रधान थी उनका स्त्रीविद्वेष, अँगरेजद्वेष और बाल्यजीवनके इतिहासको गुप्त रखनेकी चेष्टा। दिवाकर बाबूका सौजन्य सुप्रसिद्ध था। दानमें भी उनका मुकाबला करनेवाले बहुत कम लोग होंगे। पर अँगरेजोंके साथ व्यवहार करनेमें वे जैसा रुखाईका परिचय देते थे या किसी स्त्रीके नामोल्लेखपर जैसी विरक्ति प्रकाश करते थे, उसको देखकर आदमी अनेक तरहकी बातें मनमें सोचा करते थे। यदि कोई इन बातोंका कारण उनसे पूछता था तो उनका चेहरा बहुत ही गंभीर भाव धारण कर लेता था। लाहोर-प्रवासी उर्बर-मस्तिष्क बंगालियोंमें हर एकने एक एक थियरी (सिद्धान्त) बना रक्खी थी और दिवाकर बाबूकी अनुपस्थितिमें वे अपनी थियरीको दूसरेके मस्तिष्कमें प्रवेश करनेकी खूब चेष्टा किया करते थे। इन सब थियरियोंमें आशुतोषकी थियरी सबसे अधिक संक्षिप्त और युक्तिपूर्ण है। वह कहता है, दिवाकर बाबू कुँआरे नहीं हैं; माळूम होता है उनकी स्त्री किसी अँगरेजके प्रेममें फँसकर उनको छोड़ गई है। इसीलिये वे अँगरेज और स्त्री जातिसे इतनी घिन करते हैं।

इस कुत्सित कथाके सत्य न होनेपर भी आशुतोषने इसको अभ्रान्त मान रक्खा था। दिवाकर बाबूके निराश प्रेमिक होनेमें तो किसीको

सन्देह ही नहीं था। उनका विहाग जिन्होंने सुना है वे जानते हैं कि दिवाकर बाबूको सौन्दर्य परखनेकी कुछ कम क्षमता प्राप्त नहीं है। विहागकी मर्मस्पर्शी लहर, मधुर झंकार, भैरवीकी आशामयी भाषा, किसी प्रेमिकके हृदयसे ही निकल सकती है—इसमें किसीको सन्देह नहीं हो सकता। इसके सिवा, घर सजानेमें, बातचीतमें, हावभावमें—प्रतिपदपर मालूम होता था कि प्रौढ़ दिवाकरका हृदय जवानीमें प्रेमका अभिनय करके जरूर जख्मी हुआ है।

२

अँगरेजीमें मसल है—राजा कभी नहीं मरता। दिवाकरका किसीको सच्चा इतिहास मालूम होता तो वह जान पाता कि दिवाकर बाबूका हृदयसिंहासन भी बाल्य और यौवन कालमें कभी शून्य नहीं रहा। वास्तवमें बंकिमबाबूके उपन्यास पढ़नेसे बहुत पहले ही वे एक तरहसे प्रेमके पन्थमें पड़ गये थे। सबसे पहले तो काठके लाल घोड़ेसे उनका प्रेम हुआ था। उस समय उनकी अवस्था चार वर्षकी थी। उनके पिताने कलकत्तेसे उनके लिए वह काठका घोड़ा ला दिया था। बालक दिवाकर उससे रातदिन प्रेम करता था। प्रातःकाल उठकर सबसे पहले वह बागका घास लाकर उसके सामने रखता था। बादको माँसे मिठाई माँगकर उसको दिक किया करता था। दिन भर घोड़ेके साथ खेलकर रातको उसे अपनी चारपाईसे बाँधकर वह सोता था। इस तरह ६ दिन बीत जानेपर सातवें दिन एक बड़े बालकने पूछा—"दिबू, तेरा घोड़ा तैरना जानता है?" गर्वित दिवाकरने उत्तर दिया-"हाँ।" उसके बाद उस बालकके कहनेपर दिवाकरने घोड़ा तालाबमें डाल दिया और जब वह घोड़ा तैर कर दिवाकरके पास नहीं आया तब बालक दिवाकर एक गहरी साँस छोड़कर एक

बिल्लीके प्रेमपाशमें बद्ध होगया। बिल्लीके बाद कई तरहके पक्षियोंसे उसका प्रेम हुआ और अन्तमें विद्यालयके एक बालकके साथ उसका प्रगाढ़ प्रेम होगया। उसी समयसे उसका हृदय मधुररससे भीगने लगा। उसी समयसे वह समझने लगा कि बिना दूसरे हृदयसे मिले उसका हृदय असम्पूर्ण है। दो हृदय एक सूत्रमें ग्रथित न होनेसे मनुष्यका हृदय ज्योत्स्नाहीन नीलिमाकी तरह निरर्थक और तमसावृत हो जाता है।

एन्ट्रेंस पास करनेके बाद दिवाकरको जब मित्रवियोग हुआ तब पास होनेकी प्रसन्नता भी उसके लिए कष्टका कारण हो गई। मनके साथ अनेक तर्क वितर्क करके अपने किसी सहपाठीके परामर्शसे उसने एक सितार खरीद लिया और उसके मधुरस्वरोंमें अपना प्रेम अर्पण कर दिया।

३

यौवनके द्वारपर पहुँचते ही दिवाकर कितनी कामिनियोंके गुणोंपर मुग्ध हुआ है और उनमें एक एककी अपने हृदय-मन्दिरमें प्रतिष्ठा करके पूजा कर चुका है--इसकी इयत्ता नहीं। अन्तमें जब बी०ए० की परीक्षामें अनुत्तीर्ण होकर वह वायु परिवर्त्तन करनेके लिए मधुपुर गया, उस समय उसके जीवनमें एक बड़ा भारी परिवर्तन हो गया।

यह बात आजसे बीस वर्ष पहलेकी है। उस समय मधुपुरमें इस तरहके महलोंके समान मकान नहीं थे। छोटे छोटे बंगले ही वहाँपर दिखाई पड़ते थे।

दिवाकर जिस बंगलेमें रहता था उसके पासवाले बंगलेमें मूर नामके एक श्वेताङ्ग वास करते थे। मधुपुरके चारों ओर मूरसाहबकी कोयलेकी कई खानें थीं। वृद्ध मूर स्वयं कामको न देखते थे--मधुपुरमें रहकर ही वे उनका इन्तजाम करते थे।

मधुपुरके बंगलेके बरामदेमें बैठे हुए और धूम्रपान करते हुए दिवाकर बाबूने पहले पहल युवती मिसेस मूरको जिस दिन देखा था उस दिन उसको वृद्ध मूरकी लड़की ही समझा था। कुमारीके साथ प्रेम करना कुछ बुरा नहीं—इसी लिए दिवाकर बाबू अपने चित्तको संयत न कर सका था। विदेशमें रहकर विदेशिनीके पदतलमें अपना प्रेम-पूर्ण हृदय अर्पण करके दिवाकर हर रातको निर्जन जगहमें बैठकर मर्मस्पर्शी विहाग-रागिनी गाया करता था और अवसर मिलते ही उस लावण्यमयीकी स्निग्ध रूप-राशिको देखकर अपना चित्त प्रसन्न किया करता था।

मूरकी युवती स्त्रीसे प्रेम करके दिवाकरने अपनी मूर्खताका परिचय दिया था—यह कहना बिलकुल ठीक है। जिसको पानेकी कोई आशा नहीं, जिस अग्निमें केवल जलानेकी शक्ति है, जिसमें संजीवनी शक्ति नहीं है--उसके लिए आत्मसमर्पण करना, उस वह्निमें भस्मीभूत हो जाना—पागलपन नहीं है तो और क्या है? किन्तु हम जिसे प्यार करते हैं वह यदि अपनी नील गम्भीर दोनों आँखोंसे हमको घूरा करे, देखनेके सुयोगके समय ही जो आराम कुर्सीपर बैठ कर पुस्तक पढ़े और बीचबीचमें हमारी ओर देखकर मृदु कटाक्षपात किया करे, हम जिस समय बेहालेपर संगीतालाप किया करें वह यदि उस समय अपने छोटेसे बायें पैरसे ताल दे--ऐसा होनेपर यदि हम उसके प्रेममें उन्मत्त हो जायँ तो भी क्या तुम हमें पागल कह सकते हो? दिवाकर जानता था कि अँगरेज रमणीकी नसनसमें रोमान्स भरा रहता है। इसी लिए निश्कर्मा दिवाकर, उस निर्जन कुटीमें रहकर सुन्दरी श्वेतांगिनीके प्रेममें उन्मत्त होकर मधुर बेहालेके स्वरोंमें अपनी मनकी बात बताता था--इसमें विचित्रता ही क्या थी?

उसके मधुपुर पहुँचनेसे कोई डेढ़मास बाद एक दिन मूर साहबके बंगलेमें बहुत शोर मचा। बूढ़ा मूर शेक्सपियरके शाइलॉककी तरह हाथ पाँव हिलाकर दुन्द मचा रहा था। पुलिसका दारोगा अपनी नोट बुकमें न मालूम क्या लिख रहा था। पुलिसको देखकर अनेक आदमी बाहर तमाशा देखनेके लिए जमा हो गये थे। दिवाकर बाबूके हृदय-गगनका सुधांशु भी सूखा मुँह लिये एक कोनेमें खड़ा था।

दिवाकरके मनमें आया कि साहबके यहाँ जाकर परिचय करनेका यह अच्छा अवसर है। पर बिना बुलाये किसी कार्य्यमें हस्त-क्षेप करना विलायती नीतिके विरुद्ध है। यह सोचकर उसने इस तरह जानेका संकल्प त्याग दिया। परन्तु मामला क्या है—यह जाननेके लिए दिवाकरको बड़ी उत्सुकता हुई। उसने अपने नौकरसे पूछा—मूर साहबके बंगलेमें कैसी गोल माल है?

नौकरने कहा—साहबके बहुतसे बहुमूल्य जवाहरात और नगद रुपये चोरी हो गये हैं। दारोगा तहकीकात कर रहा है।

कहनेकी जरूरत नहीं कि इस विपत्तिके संवादसे प्रेमिक दिवाकरका हृदय दुःखसे भर गया। जिस समय उसने पत्थरकी मूर्तिकी तरह खड़ी हुइ मिसेज़ मूरका रक्तहीन चेहरा देखा, उस समय दिवाकर बाबूके हृदयके भीतरी भागसे एक जड़ निःश्वासकी उत्पत्ति हुई। जिस प्रेममें सहानुभूति नहीं है उसको प्रेम कहना ही व्यर्थ है।

४

दिनमणि सूर्य्य धीरे धीरे पश्चिम गगनमें मुँह छिपा रहा है। सांध्य-समीर दक्षिण दिशासे सुसंवाद लाकर करासके फूलोंको हँसा रही है। आनन्दके मारे फूलकी दो एक पत्तियाँ टूटकर घासपर बैठे हुए प्रेमिक प्रेमिकाके उपर गिर पड़ीं। घोंसलेमें जानेसे पहले गुलगुचियाने एकबार खूब

जोरसे गाया । उसके प्रत्युत्तरमें काली कोयलने भी अपने कण्ठमें छिपाई हुई सुधाको वायुकी गोदमें उड़ेल दिया ।

मिसेज़ मूरने कहा—"फ़्लॉरेन्स, अब मुझसे और नहीं हो सकता । इस बार ही वृद्धने मुझपर सन्देह किया था । वहाँ रहना हमारे लिए कितना असुविधाजनक है, यह बतानेकी बात नहीं । न मालूम बूढ़ा मूर कब मरेगा ।"

जिस युवकके साथ मिसेज़ मूर बातचीत कर रही थी, उसकी अवस्था कोई तीस सालकी होगी । उसका शरीर खूब मजबूत था । फ़्लॉरेन्स हिलका मुखमण्डल यौवनकी कान्तिसे खूब उद्भासित था । हिल, मिसेज़ मूरके चचाका लड़का है । अर्थाभावके कारण वह बहिन क्लाराका पाणिग्रहण नहीं कर सका था । अर्थवान् बूढ़े मूरसे शादी करने पर भी युवती क्लारा फ़्लॉरेन्सके प्रणयको भूल नहीं सकी थी । सुविधा पाते ही वे दोनों एकान्तमें मिलते थे । वृद्धको इसका कुछ भी पता नहीं था ।

हिलने कहा—इस बार तुमने दया न की तो बेतरह अपमानित होना पड़ेगा । तुमने उस दिन जो दिया था वह सब जाता रहा । कमसे कम एक सौ रुपया बिना मिले इज्जतका बचना असम्भव है ।

क्लाराने कहा—" छिः फ़्लॉरेन्स, तुम जुआ खेलना बन्द नहीं कर सकते? इस बार कंजूस बूढ़ा ताड़ जायगा ।

बहुत वादानुवादके बाद निश्चय हुआ कि इस बार फिर क्लारा सौ रुपये देकर हिलकी मानरक्षा करेगी। उसके बाद वह फिर कुछ न देगी ।

५

उक्त घटनाके तीन चार दिनके बाद दिवाकर बाबू अपने बंगलेके पीछेवाले मैदानमें प्रातःसमीरका सेवन कर रहे थे । मूर साहब उस समय मधुपुरमें नहीं थे, खानका काम देखने बाहर गये थे ।

इसी लिए मिसेज़ मूर कई कुत्तोंको साथ लिए अकेली हवा खा रही थीं और बीच बीचमें अपने नील नयनोंके कटाक्षोंसे दिवाकरके हृदयका अन्तस्तल तक आलोडित कर देती थीं ।

दिवाकरको देखकर एक छोटासा कुत्ता भोंकने लगा । मेम साहबने विरक्त होकर उसको चुप करनेके लिए कहा । उस समय दिवाकर और क्लाराके बीचमें ५—६ गजका ही अन्तर था । दिवाकरने सोचा कि यह सुयोग छोड़ना ठीक नहीं । उसने बडे मुलायम भावसे विनयके साथ युवतीकी ओर फिर कर कहा "Thank you madam.'"

युवतीने हँस दिया । दिवाकरके बागमें आकर उसने गुलाबकी तारीफ की, कृतार्थ युवकने झटपट कुछ गुलाब लेकर मेमसाहबको उपहारमें दिये । युवतीने उसको धन्यवाद दिया और इधर उधरकी बातें करके अन्तमें कहा—हमारे स्वामीका अन्तःकरण बड़ा सन्देहयुक्त है । ऐसा न होता तो मैं आपको अवश्य अपने यहाँ निमन्त्रित करती । निर्बोध दिवाकरने मानो स्वर्ग पा लिया । फिर मिलनेकी आशा देकर मूर-पत्नि विदा हो गई ।

उक्त घटनाके सात दिन बाद मूर-पत्नीने दिवाकरको फिर दर्शन दिये और उसको शामका भोजन करनेके लिए अपने स्थानपर निमंत्रण दिया । दिवाकरने सोचा आज वृद्ध स्थानपर नहीं है, इसी लिए क्लाराने शिष्टाचार दिखाकर मित्रता करनेके अभिप्रायसे यह अनुग्रह किया है ।

६

अनेक तरहकी बातें करते करते रातके दस बज गये । सिर्फ एक नौकर उनकी सेवा कर रहा था । दिवाकरने ऐसा सुख अपने जीवनमें कभी अनुभव नहीं किया था । प्रगल्भा क्लारा अनेक तरहकी बातें

करके दिवाकरको प्रसन्न कर रही थी । रातको सोते समय पहननेकी पोशाकसे युवतीका रूप सौगुना बढ़ गया था।

क्लाराने हँसकर कहा—"बाबू, आप तो जमीन्दार हैं। हमारी इस वृद्धके हाथसे रक्षा कीजिए। हमें कहीं ले चलिए।"

दिवाकरने चिन्तित होकर उत्तर दिया—"यह किस तरह हो सकता है मेम साहब?"

मेम साहबने कहा—"बाबू, रुपयेमें कुछ सुख नहीं है।" ठीक इसी समय बाहर सड़कपर घोड़ेकी टापका शब्द सुनाई दिया। विस्मित होकर क्लाराने कहा—"बाबू, सर्वनाश हो गया। मालूम होता है साहब आगया।"

भीत दिवाकर उठ खड़ा हुआ। क्लाराने कहा—"कुछ डर नहीं है। आप मेरे साथ आइए।" विस्मित दिवाकर अन्धकारको चीरकर पासके एक घरमें पहुँचा! क्लाराने चाबीसे ताला खोला। उसके बाद दिवाकरको उस घरमें खड़ा करके और चाबीका गुच्छा उसके हाथमें देकर कहा—"बाबू, इसी घरमें आप रुकिए। जब सब लोग सो जायँ तब इसमें ताला देकर चले जाना। इसी घरमें हमारे पतिकी सब सम्पत्ति है।" स्तब्ध दिवाकरने चाबी लेकर अन्धेरे घरमें प्रवेश किया।

युवतीने कहा—"बाबू, एक बात और है। हमारी चिह्नस्वरूप यह अँगूठी हाथसे न उतारिएगा।"

अँगूठी पहरकर दिवाकरके आनन्दकी सीमा न रही। बहुत दिनोंके परिचितकी तरह क्लाराको हृदयसे लगाकर वह बड़े स्नेहसे उसका मुँह चुम्बन करने लगा। बादको उसी घरमें सबके सो जानेकी प्रतीक्षा करने लगा।

७

मूर साहब जैसा कि उनका अभ्यास था आते ही अपने भंडार-घरके सामने खड़े होगये। बूढ़ेने सोचा कि क्या मैं स्वप्न देख रहा हूँ?

बूढ़ेने अपनी जेबमें हाथ डालकर देखा तो तालियाँ उसमें पड़ी हुई थीं–पर फिर भी दर्वाजेमें लगा हुआ ताला खुला था। यह काम किसने किया था, वृद्ध कुछ निश्चय नहीं कर सका। बूढ़ेने झटपट लैम्प जलाया और अन्दर जाकर उसने देखा कि जीवन भरमें पैदा की हुई प्रियतम सम्पत्तिके पास एक काला आदमी खड़ा हुआ है। बूढ़ेने उसे देखते ही जोरसे चीख मारी।

वृद्धके साथ उसका हेउड नामका मित्र काली पहाड़ीसे आया था। मूरकी चीख सुनकर वह और नौकर सभी वहाँ पहुँच गये। कहनेकी जरूरत नहीं कि भय, लज्जा और विस्मयके मारे दिवाकर बाबू किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये। जब उसका थोड़ा बहुत विस्मय दूर हुआ तब उसने अपना पहला कर्त्तव्य भागना स्थिर किया। इसी लिए वृद्धकी चीखको सुनकर उसने भागनेकी चेष्टा की। किन्तु हेउडके आ जानेसे उसको बन्दी हो जाना पड़ा।

उस समय मूर साहबके बंगलेमें बड़ी गोलमाल मची। उसी समय धीरे धीरे आँखें पोंछती हुई क्लाराने आकर कहा–"जोसेफ, प्रियतम, तुम कब आये? यह गोलमाल कैसा है?"

"मूरने कहा–प्रियतमे, सर्वनाश हुआ चाहता था। इस समय भगवानने बड़ी रक्षा की, नहीं तो हमारा सभी कुछ स्वाहा हो गया था। भंडारघरमें चोर घुस गया था।"

इस समय दिवाकर एकटक क्लाराकी ओर देख रहा था। मूरकी बात सुनकर क्लाराने बड़े भावसे आह खींची।

हेउडने कहा–"मि० मूर, इस आदमीके हाथमें यह अँगूठी किसकी है?"

मूरने कहा--"हाय राम ! यह तो मेरी हीरेकी बहुमूल्य अँगूठी है। यह तो मेरे बक्समें बन्द थी। मालूम होता है, इसने हमारे अन्यान्य द्रव्य भी चुराये हैं।"

इसके बाद हेउडने दिवाकरकी जेबकी तलाशी ली। उसमेंसे क्लाराका दिया हुआ चाबीका गुच्छा निकला।

वृद्धने सिरपर हाथ मारकर कहा—Great Heavens! This is a bunch of duplicate keys.

सभी आदमी बड़े आश्चर्यसे दिवाकरकी ओर देखने लगे। एक नौकरने कहा--"हजूर, यह बाबू बंगलेके बगलमें कोई महीना भरसे आकर ठहरा है।"

उस समय वृद्धने एक भारी रहस्यको मानो खोला। उसने समझा कि बीच बीचमें कौन उसका धन चुराता था। यह काला आदमी ही भद्रवेशमें पड़ोसमें रहकर उसका सर्वनाश किया करता था। भगवान्की अपार करुणाके बिना क्या आज यह चोर पकड़ा जा सकता था?

क्लाराने कहा—"जोसेफ, मैं गोलमाल पसन्द नहीं करती। किन्तु अब मैं समझती हूँ, तुम्हारा व्यवहार किस कदर नीच है! यह दुष्ट तो तुम्हारा धन चुराता था और तुम मुझको—अपनी प्यारी स्त्रीको—प्रेमके—"

वृद्धने उसको आगे कोई बात कहने न दी। चम्पेकी कलियोंके समान उन अंगुलियोंको चूमकर वह बोला--"प्यारी क्लारा, मुझे क्षमा कर।"

और हतभाग्य दिवाकर? वह मन-ही-मन कहने लगा--"ओ पिशाची, शैतानी! इसी लिए तेरा इतना प्यार था! पृथ्वी बड़ी कठिन है। इसका मुँह कैसा सरस और सरल है, पर इसके प्राण नारकी भावोंसे पूर्ण हैं। यह अँगरेज़ महिला है—यही इसकी सभ्यता है!"

सभी विस्मित थे । सिर्फ नाज़िरखाँ नामका नौकर—जिसने शामसे दिवाकरकी खातिर की थी—कभी कभी दिवाकरकी ओर दर्दभरी दृष्टिसे देख लेता था ।

८

जेलखानेके रोशन-दानसे चाँदनीकी एक क्षीण और मलिन रेखा दिवाकरकी दीन शय्यापर पड़ रही थी । जेलखानेके बाहर थोड़ी दूर गाँवमें एक कुत्ता भोंक रहा था । उसका शब्द झिल्लीकी झंकारके साथ मिलकर हतभाग्य बन्दीके स्मृतिपटपर बचपनकी, अपने ग्रामकी शान्त, स्निग्ध और मधुर छबि खींच रहा था । एक चिन्ताके बाद दूसरी चिन्ता, एक भावके बाद दूसरा भाव, भावुक दिवाकरके हृद-यको आलोड़ित कर रहा था, उसके सौ सौ टुकड़े कर रहा था । उसके अनजानमें दोचार आँसुओंकी बूँदें उसके नेत्रोंमें आगई थीं । युवक सोच रहा था—कैसा अपमान है, कैसा मनस्ताप है और कैसा अपयश मिला है । अच्छे घरानेमें पैदा होकर मिथ्या प्रलोभनमें पड़कर मिथ्या अपराधमें सच्चा दण्ड भोग रहा हूँ । चाहता तो बच भी सकता था। जजसे सब बात सच कह देता । घर चचाके पास संवाद भेज देता, तो शायद यह दुर्गति न होती । पर किस तरह इस जघन्य बातको प्रकट करता—किस तरह जेलसे निकलकर आत्मपरिचय देकर अपना काला मुँह दिखाता! चुप रहनेके सिवा--सच तो यह है मेरे लिए और कोई उपाय ही नहीं था ।

सच तो यह है कि दिवाकरके मौन भावको देखकर और उसके सुन्दर मुखकी श्रीको देखकर विचारकके मनमें उसके अपराधके विष-यमें सन्देह पैदा हुआ था । वह जान गया था कि इस मामलेमें ज़रूर कोई रहस्य है, पर चाक्षुष प्रमाणके सामने वह अपनी राय किस तरह

ज़ाहिर कर सकता था ? दिवाकर यदि विचारकके सामने सब बातें सच सच कह डालता तो कौन कह सकता है कि उसके भाग्यमें क्या होता ?

जिस समय जेलखानेकी निर्जनतामें दिवाकर घटनाके पूर्वापर पर विचार कर रहा था, उस समय उसने अँगरेज महिलाके कपटकी ही निन्दा की हो--यह बात नहीं। एक तरहकी गभीर आत्मग्लानि उसके चित्तको सैकड़ों जेलखानोंकी तकलीफोंके बराबर कष्ट देती थी। अच्छे वंशमें पैदा हुए, शिक्षाप्राप्त युवकके लिए जानबूझकर परस्त्रीके साथ व्यभिचारके पथमें अग्रसर होना कितना घृणित कार्य और नारकी आचरण है--धीरे धीरे युवकके मस्तिष्कमें ये बातें प्रवेश करने लगीं। वह कभी सोचता--क्या मुझे बिना अपराधके दण्ड मिला है? चोरीके अपराधमें निर्दोष होते हुए भी उसकी अपेक्षा अधिक पापाचरण करनेको क्या मैं उद्यत नहीं था? भगवान्के राज्यमें न्याय-विचारका अभाव है, ऐसी बातका सोचना पागलपन नहीं है तो और क्या है? बचपनसे केवल भावोंकी उत्तेजनामें कार्य करता आया; चरित्रगठनकी ओर जितना ध्यान देना चाहिए उतना कभी नहीं दिया! कभी स्थिरचित्त होकर विचार नहीं किया कि जो कार्य कर रहा हूँ उसका कैसा फल निकलेगा--अच्छा या बुरा। कल्पनाराज्यके वनमें, बागमें, महलमें, कुटीमें अनेक बार बिचरा हूँ उसीका यह फल है कि आज मुझे इस नारकीजीवपूर्ण वास्तव जगत्के घृणित और जघन्य जेलखानेमें वास करना पड़ा है।

९

समय किसीकी अपेक्षा नहीं करता। बात पुरानी होकर भी सच्ची रहती है। दिवाकरके कारागारका समय भी अनन्तके पथमें पिछड़ने लगा।

सात दिन बाद उसकी कैदके तीन मास पूरे हो जायँगे—फिर वह अपनी खोई हुई स्वाधीनता पालेगा । जेलसे छूटकर दिवाकर घर नहीं जायगा, यह सिद्धांत तो उसने स्थिर कर लिया है । कौन कह सकता है कि इतनी चेष्टा करनेपर भी घरपर किसीको इस बातका पता न लग गया हो? किस तरह उसका भविष्य जीवन कटेगा—यही चिन्ता दिवाकरके हृदयको हर समय लगी रहती है ।

इसी समय कर्म्मचन्दने उसके पीछेसे आकर 'रामराम' की । दिवाकर किसी कैदीसे बातचीत नहीं करता था । समय काटनेके लिए दो एकके साथ उसको बात करना पड़ती थी । उनमेंसे कर्म्मचन्द भी एक था ।

कर्म्मचन्दने कहा—"बाबू, आपका समय तो पूरा हो गया । पर हमारे समयमें अब भी पाँच वर्ष बाकी हैं ।"

दिवाकरने जबर्दस्तीकी विषाद मिली हँसी हँस दी । एक डाकूके साथ सुखदु:खकी कथा कहते हुए उसको कुछ नये प्रकारका आश्चर्यसा मालूम हुआ ।

कर्म्मचन्दने कहा--"बाबू नाराज़ मत होना । एक जगह हमारे कोई दश हजार रुपये रक्खे हुए हैं । कोई हर्ज न समझें तो जेलसे छूटकर उन रुपयोंसे कोई रोजगार शुरू कर दें । जब मैं जेलसे छूट कर आऊँ तो आप मुझे आपके पास जितनी सम्पत्ति हो, उसमेंसे आधी बाँठ दें । यह इकरार कीजिए ।"

इन तीन महीनोंमें दिवाकरके जीवनमें जितने आश्चर्यभरे व्यापार हुए थे, उनमें यह बात सबसे बढ़कर थी । प्रस्तावको सुनते ही उसका हृदय धकधक करने लगा । भय, विस्मय, नीतिज्ञान, उधर लोभका उल्लास बढ़ानेवाला सुमिष्ट स्वर--ये सब मिलकर एक साथ युवकके हृदयमें युद्ध करने लगे । वह सोचने लगा--" छिः छिः, क्या चोरीके

धनसे भविष्यजीवनके सुखरूप किलेकी भित्ति बनाना होगी? नहीं नहीं, मैंने तो चोरी की नहीं--मैं तो सिर्फ कर्ज ले रहा हूँ! फिर मेरा हृदय ताण्डव नाच क्यों नाच रहा है। हृदयकी दुर्बलताको अब करीब न फटकने दूँगा। पर यदि मालूम हो गया कि मैं चोरीका धन आत्मसात् करने चला हूँ तो फिर जेलखाना--ओ बाबा!"

दिवाकरने कर्म्मचन्दसे कहा--'भाई, मुझे तुम्हारा रुपया नहीं चाहिए।'

कर्म्मचन्द चुपचाप दिवाकरको देख रहा था। उसने देखा कि दिवाकरकी भीतरी मंत्री-सभामें उसके पक्षकी आवाज भी है। उसने दिवाकरको तर्कद्वारा समझाना शुरू किया। उसने कहा--"यदि तुम महाजनका कर्ज लेते, तो यह कैसे जान सकते कि उसका वह रुपया पापार्जित नहीं है? और कौन तुमसे कहता है कि कर्म्मचन्दका गुप्त धन चोरीसे प्राप्त किया गया है? यदि तुम्हें यह सन्देह ही है तो तुम इसका प्रायश्चित्त दान द्वारा कर सकते हो। दश हज़ार रुपयोंसे रोजगार करके यदि तुम लखपती बन जाओ, तो उसमेंसे बीस हजार या तीस हजारका दान करके सारा पाप धो सकते हो।" दिवाकर जब घर नहीं जायगा तो उसको यह रुपया ले लेनेमें आपत्ति भी क्या है?

जगत्में जो नित्य होता है--वही हुआ। जीत शैतानकी ही हुई। दुर्बल नरने लोभकी मोहिनी शक्तिसे पराजित होकर उसके सम्मुख अपना बलिदान दिया। विजयी कर्म्मचन्दने दिवाकरको बता दिया कि किस जगह उसका रुपया गड़ा हुआ है।

१०

कर्म्मचन्दसे दश हज़ार रुपयोंका लेना पहले तो दिवाकरको अच्छा नहीं मालूम हुआ; पर जब उसने देखा कि लक्ष्मीका अनुग्रह उसके ऊपर अविश्रान्तभावसे बरस रहा है तब विवेकके साथ उसका

मन माना निबटारा हो ही गया। उत्तर पश्चिमके दो एक शहरोंमें घूमकर दिवाकरने लाहोरमें आकर व्यवसाय शुरू किया। उसमें एक सालमें कोई तीन हजार रुपये मिले। पर फिर भी उसे शान्ति नहीं मिली। इसी लिए बहुत सोच विचार कर वह अपने देशको लौट आया। उसकी शोकातुरा माताके साथ उसके प्रथम साक्षातने इस पापपरिपूर्ण पृथ्वीमें भी स्वर्गीय दृश्य दिखा दिया। उसके घर लौट आनेकी खबर पाकर ग्रामके नरनारियोंके झुंडके झुंड आकर उससे प्रश्न पर प्रश्न करने लगे। उसके पुराने शत्रु भी उसकी अवस्थापरिवर्तनके विषयको लेकर उसकी अभ्यर्थना करने लगे। उन सब बातोंको लिखनेके लिए हमारे इस छोटेसे इतिहासमें स्थान नहीं है। एक सप्ताहके बाद दिवाकर अपनी वृद्धा माताको लेकर लाहोर चला आया और उस समयको आज बीस वर्ष गुजर गये, वह तभीसे लाहोरमें ही रहता है।

अपने कारागारसे छूटनेके पाँच वर्ष बाद दिवाकरने कर्म्मचन्दका पता लगाया था, पर उस हतभाग्यकी जेलमें ही मृत्यु हो गई थी!

११

दिवाकर जिस समय लाहोरमें आकर बसा था, उस समय कोई भी बंगाली वहाँ नहीं रहता था। विदेशमें आकर यौवनसुलभ अध्यवसायके साथ परिश्रमके द्वारा रुपया पैदा करके सभी बंगाली अपने देशको लौट गये थे। उनमेंसे कोई होता तो संभव था कि दिवाकरका रहस्य खुल जाता, पर उनमेंसे किसीके न होनेसे लाहोरवासी बंगाली दिवाकरके सम्बधमें मन माना सिद्धान्त बनाकर अपना अपना कौतुनिवारण कर लेते थे।

एक दिन आशुघोषने कहा-"आज कुछ ही क्यों न हो, दिवाकरका पूर्ण परिचय प्राप्त करेंगे ही!" इतना बड़ा कार्य अकेले सम्पादन

करना मुश्किल है, यह निश्चय करके आशुघोष सतीशचन्द्रके पास पहुँचा।

उसके प्रस्तावको सुनकर सतीशने कहा—"भाई, किसी बड़े आदमी-से इस तरहका व्यक्तिगत प्रश्न करना अच्छी बात नहीं है। दूसरे जब दिवाकर बाबू अपनी स्थिर और भावहीन आँखोंसे मुझे देखते हैं—सच कहता हूँ—तब मेरा दिल ठंडा पड़ जाता है।"

अपनी बड़ी बड़ी मूँछोंपर हाथ फेरते हुए आशुघोषने कहा—"क्या तुम मुझे निरा भोला बालक समझते हो? हमने पहलेसे ही बहाना बना रक्खा है।"

सतीशने कहा—"कैसा बहाना है? सुनाओ तो सही।"

आशुने कहा—"हम कहेंगे कि हमसे कलकत्तेके एक समाचार-पत्रने लाहोरके सबसे बड़े बंगालीका जीवनचरित माँगा है। हमारे लाहोरी बंगालियोंमें दिवाकर ही धनमें, मानमें, दयामें और सहृदयतामें सबसे बढ़कर हैं। यदि वास्तविक हाल मालूम हो गया, तो समाचार-पत्रमें छपवाया भी जा सकता है।"

सतीशचन्द्रने आशुके चातुर्यकी बड़ी तारीफ की और वह स्वयं वस्त्र पहननेके लिए चला गया।

१२

दिन भरके सब कामोंसे निवृत्त होकर दिवाकर बाबू अपने सजे हुए कमरेमें बैठे बेहाला बजा रहे हैं। बेहालाका स्वर क्रमशः उत्तरोत्तर चढ़ रहा है। इस संगीतसुधासागरमें दिवाकर बाबू खूब मग्न हो रहे हैं। एक काला बिलाव उनके चरणोंमें बैठा हुआ उनके चेहरेकी ओर एकटक दृष्टिसे देख रहा है। वह कभी कभी अपनी आँख मूँद लेता है। बाहर पिंजरबद्ध बुलबुल बेहालेके स्वरमें स्वर मिलानेकी व्यर्थ

चेष्टा कर रहा है । बुलबुलका स्वर जरूर आनन्दमय है । उसको सुनकर हृदय फड़क उठता है । दिवाकरके बेहालेका स्वर करुण और मर्म्मस्पर्शी है । उसको सुनकर हृदय स्तब्ध हो जाता है और चित्तकी वृत्तियाँ नीरस हो जाती हैं । इसीलिए आशु और सतीश खुशी खुशी घरमें आकर भी संगीत सुनकर स्तब्ध हो गये हैं । दिवाकरने उनको देखा तक नहीं ।

बिलाव भी अपने मालिककी निस्तब्धता भंग होनेके भयसे उनको देखकर फर्शपर लेट गया । दिवाकरने पीछे फिर कर देखा कि दो भद्रपुरुष उससे मिलनेके लिए बाहर खड़े हुए हैं ।

अप्रतिम दिवाकरने झटपट बेहाला रखकर कहा—"बड़े सौभाग्यकी बात है । एक साथ दोनोंने कृपा की है । क्षमा कीजिए, मुझे आपके आनेका शब्द भी नहीं सुनाई दिया ।"

आशुने कहा—"हम तो बाजा सुन रहे थे । आपने बजाना बन्द क्यों कर दिया ?"

दिवाकरने कुछ हँसकर कहा—"समय काटनेके लिए कभी कभी बजा लेता हूँ ।"

बातचीत होने लगी । दोनों युवक साहस करने पर भी अपना अभिप्राय नहीं कह सके । सतीशने चुपकेसे आशुसे कहा—"मतलबकी बात क्यों नहीं करते ?"

आशुने बड़ी मुश्किलसे अपने मनका भाव प्रकट किया ।

दिवाकरने हँसकर कहा—"धनवान् होनेसे—समाजमें भी बड़ा हो जाय, यह बात तो नहीं है । हम और हमारी जीवनी ही क्या ?"

इसी समय नौकरने आकर कहा कि "एक मेम और एक अँगरेज़ आपसे मिलना चाहते हैं ।"

काम पड़नेपर दिवाकर बाबू अँगरेज़ पुरुषसे तो कभी कभी मिल लेते थे, पर आज २० वर्षसे उन्होंने किसी मेमकी ओर देखातक भी नहीं था। नौकरसे कहा—जरूरत हो तो साहब आकर मिल सकता है; मेमसे मैं मिलना नहीं चाहता।

आशु और सतीशने एक दूसरेकी ओर देखा। नौकरने आकर कहा-"मेम साहब आपसे मिले बिना किसी तरह जाना नहीं चाहतीं।"

दिवाकर बड़ी झंझटमें पड़ गये। मौका पाकर आशुघोषने कहा-"हर्ज क्या है, मिल लीजिए, क्या कहती है!"

यदि ये लोग इस समय नहीं होते तो दिवाकर बाबू किसी तरह भी मेमसे मिलना पसन्द नहीं करते। पर इन दोनोंके सामने इनको मजबूरन मेम साहबको मिलनेके लिए बुलाना पड़ा। आशु और सतीशको जानेके लिए उठते देख दिवाकरने कहा--"महाशय, आप बैठिए। इन लोगोंसे एकान्तमें मिलना मैं अच्छा नहीं समझता।"

सतीशने आशुको बैठनेके लिए हाथसे संकेत किया। आशु मूँछके अग्रभागको मरोड़ते मरोड़ते साहबके कार्डको पढ़ने लगा, उसमें लिखा था—'फ्लोरेन्स हिल।'

धीरे धीरे फ्लोरेन्स हिलने कमरेमें आकर दिवाकरको सलाम किया। उसके पीछे एक अधेड़ उम्रकी स्त्री थी—जिसको देखनेसे मालूम होता था कि वह एक दिन जरूर सुन्दरी होगी। उसको देखते ही दिवाकर चकित हो गया। दिवाकरने मन-ही-मन कहा—मालूम होता है, यह वही पापिष्ठा है। पिशाची राक्षसी! आज भी तेरे शरीरमें सौन्दर्यका कुछ अंश बाकी है। क्या फिर किसी विपत्तिका सूत्रपात होता है?

क्लाराने दिवाकरको नहीं पहचाना। इन कई सालोंमें उसकी मानसिक स्थितिमें विशेष परिवर्तन हो गया था। उसके नवनीतसम

कोमल वक्षःस्थलपर एक लम्बा वस्त्र पड़ा था। उसके माथेपर चिन्ताकी रेखा स्पष्ट दिखाई पड़ती थी। उसके चंचल कमल-नयन इस समय स्थिर गभीर और एक प्रकारके दुःखभावसे पूर्ण थे।

दिवाकरके परिचित स्वरमें क्लाराने कहा—"बाबू, बड़ी विपत्तिमें फँसकर आज हम स्त्री पुरुष आपकी सेवामें उपस्थित हुए हैं। हमने सुना है, लाहोरमें आप जैसा कोई दानी नहीं है, इसी लिए आपके पास भिक्षार्थ आये हैं।"

मालूम होता है कि अपनी भूमिकासे दिवाकरके हृदयपर कुछ प्रभाव पड़ा या नहीं, यह बात देखनेके लिए वे दोनों कुछ देरके लिए चुप हो रहे। आशुघोष दिवाकरके मुँहकी ओर आश्चर्य्यसे देखने लगा। उनके मुँहकी ऐसी आकृति उसने कभी न देखी थी।

रमणीने फिर कहना आरम्भ किया—"बाबू, मेरा स्वामी रेलका गार्ड है। अपने पहले स्वामीके मरने पर मुझे बहुत धन मिला था। मुझे कहते लज्जा मालूम होती है कि जुएमें हिलने वह सब रुपया नष्ट कर दिया। अपनी फिजूल खर्चीके कारण वह इस समय इतना ऋणग्रस्त हो गया है कि सारी लाइनमें उसको एक पैसा भी कर्ज नहीं मिल सकता। अब एक आदमीकी पाँच सौ रुपयेकी डिग्रीमें उसको कल जेल जाना होगा। बाबू, इस अपमानके सामने आप जैसे महानुभाव सज्जनसे भीख माँगना अच्छा है। इसी लिए हम आपकी सेवामें आये है।"

हिल-पत्नी चुप हो गई। आशुघोषने देखा कि दिवाकरके चेहरे पर भी चञ्चल भावकी जगह गंभीर भाव आगया है। दिवाकरने तबीयतको सँभालकर कहा—"आपके स्वामीको सब कितना रुपया देना है?"

क्लाराने कहा—"बाबू, इसकी बात क्या पूछते हो; कोई तीन हज़ार रुपये।"

उसकी बातका उत्तर न देकर दिवाकर बाबूने चेक-बहीसे तीन हजारका एक चेक फाड़कर हिलसाहबको दे दिया। सभी विस्मित हो गये।

हिल साहबने कहा—"बाबू, मैं आपकी दयाका उपयुक्त पात्र नहीं हूँ। मैं बड़ा पापी हूँ—इस रमणीके प्रेममें पड़कर मैंने अनेक पाप किये हैं।"

क्लाराका चेहरा रक्तहीन हो गया। दिवाकरने कहा—"इसके पहले स्वामीका नाम मूर है?"

विस्मित क्लाराने कहा—"हाँ।"

"मधुपुरमें रहता था?"

हिलने कहा—"आपने किस तरह जाना?"

दिवाकरने क्लारासे कहा—"मेम साहब, मुझे पहचानती हो? झूठे अपवादमें, अपना पाप छिपानेके लिए जिसका सर्वनाश करनेमें जरा भी संकोच नहीं किया था, उसको अब भी पहचानती हो? इहकाल और परकाल माननेवाला मैं असभ्य हिन्दू हूँ। तुम्हारे आशीर्वादसे ही मेरे पास इतनी सम्पत्ति है। आज उसीका मूल्य स्वरूप यह साधारण प्रतिदान किया है।"

दिवाकरकी बात समाप्त होते न होते क्लारा पृथ्वीपर गिर पड़ी। दिवाकर उठकर दूसरे कमरेमें चला गया। हिलकी क्लाराके ऊपर विरक्ति दुगनी हो गई। उसने सोचा—इस बोझके बिना दूर हुए रक्षा नहीं है।

आशु और सतीशने बड़े यत्नसे क्लाराकी मूर्छाको दूर किया। क्लाराके चले जानेपर सतीशने कहा—"भाई, क्या मामला है?"

आशुघोष मूँछ मरोड़ते मरोड़ते बोले—"हाँ, दिवाकर वास्तवमें ही कुमार है। फिर भी हमारी थियरी एकदम निर्मूल नहीं है। मूलमें बंगाली और मेमका मिश्र प्रेम है जरूर।"

आशा।

१

छिः छिः क्या करते हो ?

युवक सुरेशचन्द्रकी बातपर उस आदमीने कुछ भी ध्यान नहीं दिया। उसके निर्मम और कठोर हाथसे रोती हुई बालिकाका कुसुमके समान कोमल हाथ अब चूर चूर हुआ मालूम होता था। अपरिचित सुरेशके मना करने पर भी उसने बालिकाके गालपर एक थप्पड़ मारा। बालिका बड़े जोरसे रोने लगी। उसका छोटासा शरीर शामकी वायुसे चम्पेके पेड़की तरह काँपने लगा। क्रुद्ध सुरेशचन्द्रने इस बार जोरसे उस आदमीको पकड़ लिया। बालिकाका कोमल हाथ इस बार उसके हाथसे छूट गया। बालिका भयसे विह्वल होकर सुरेशकी कमरसे चिपट गई। वह अपनी आँसुओंसे धुलकर उज्ज्वल हुई दृष्टिसे आगन्तुकके क्रोधसे तप्त चेहरेको देखने लगी। सुरेशचन्द्रने मुँहके भावको बदलकर मीठे स्वरसे कहा—"डरो मत।"

उसके मुखके उस भावने जन्मदुखिया आशाके हृदयके भीतरी भागमें एक गभीर रेखा खींच दी। कई सालसे यह पिशाच उसको अबाध रूपसे तकलीफ दे रहा था। आज पहला अवसर है जो इस करुणहृदय युवकने उसके अत्याचारके विरुद्ध अपना हाथ उठाया था। आशाके छोटेसे जीवनमें यह दिन उसे नवीन युगका परिवर्त्तन मालूम हुआ।

युवक मतिलाल भी अचम्भेमें हो गया। क्रोधसे, क्षोभसे, अपमानसे उसके हर रोंगटेसे मानो चिनगारियाँ बाहर निकलने लगीं। उसकी

छोटी छोटी दोनों आँखें मानो अपने निवासस्थानसे बाहर निकलनेके लिए बेतरह बेकल हो रही थीं। चारों ओरसे जब उसे सुरेशचन्द्रकी तारीफ सुनाई पड़ने लगी और उसे निश्चय हो गया कि इन लोगोंके हृदयमें सुरेशके लिए श्रद्धाका भाव उत्पन्न होगया है तब उसका क्रोध और भी अधिक बढ़ गया। लाञ्छित मतिलालने कम्पित हुए स्वरमें कहा—"तू कौन है, छोड़ इसको!"

सुरेशने हँसते हुए कहा—"मैं मनुष्य हूँ। तेरी तरह जानवर नहीं हूँ। बालिकाके शरीरपर हाथ लगाते ही तुझे मालूम हो जायगा कि मैं कौन हूँ।"

सुरेशके स्वरमें उत्तेजनाका भाव नहीं था। आशा अनिमेष दृष्टिसे उसकी ओर देख रही थी। उसकी बात सुनकर वहाँ खड़े सब आदमी हँस पड़े। क्रोधोन्मत्त मतिलालने आशाको मारनेके लिए अपना पाँव उठाया। पर क्या हुआ, कोई समझ न सका। सुरेशने इस जोरसे मतिलालको ठोकर मारी कि वह धड़ामसे जमीनपर चित हो गया। सुरेशने बायें हाथसे उठाकर आशाको गोदीमें ले लिया और उसकी ठोड़ी पकड़कर कहा—"डरो मत।" आशा उसके गलेसे चिपट गई। बालिकाके कोमल ओठोंके ऊपर वैशाखकी बिजलीकी तरह सान्त्वनाकी कुम्हलाई हुई हँसी क्षणभरके लिए खेल गई।

सुरेशने पूछा—"तुम्हारा मकान कौनसा है?"

बालिकाने हाथके इशारेसे रास्तेके दाहिनी ओर वाला मकान बता दिया। उसको गोदमें लिए हुए सुरेश उसी ओर चला।

मकानके पास जाकर उसने देखा कि आदमियोंका एक छोटासा दल उसकी अभ्यर्थनाके लिए आ रहा है। सबसे आगे चश्मा लगाये बाबू साहब हैं, जिनका वेश कुछ अस्त-व्यस्तसा है। उनके पीछे आनेवाली

बुढ़िया दासीने बड़े कर्कश स्वरमें सुरेशकी ओर अंगुली दिखाकर कहा—"बाबू चोर यही है । मामा बाबूको मारकर आशाको लेकर भागना चाहता है, हाय हाय !!"

बाबू महाशयने उसे चुप रहनेके लिए इशारा करके बड़े विस्मयसे सुरेशकी ओर देखा । बाबूके पीछे एक हिन्दुस्तानी चपरासी बड़ी मुश्किलसे मतिलालके धूलि-धूसरित शरीरको देखकर अपनी हँसी रोक रहा था । बाबू साहबको देखकर आशा बड़े जोरसे रोने लगी और बोली—"बाबू, इनका कोई दोष नहीं है ।"

दासीने मुँह बनाकर कहा—"कोई दोष नहीं है? और दोष किसे कहते हैं ?"

इस बार आशाके पिता बाबू साहबने क्रोधभरी दृष्टिसे दासीकी ओर देखा । सुविधा पाकर चपरासीने भी डाँट बताई—"चुप रह ।"

"क्यों चुप रहूँ । आज ही चली जाऊँगी । मैं यहाँ केवल माजीके कारण रुकी हुई हूँ । मुझे किसीका—"

चपरासीने कहा—" चुप ।"

बुढ़िया चुप हो गई ? मतिलाल आशाके बापके निकट आकर खड़ा हुआ । दासी आँखे मल मल कर रो रही थी ।

सुरेशने पूछा—"महाशय, बालिकाके पिता आप ही हैं ?"

बाबू महाशयने सम्मतिसूचक संकेत किया ।

सुरेशने मुस्कराते हुए कहा—"मालूम होता है आप खूब सुखमें रहते है । सोनेकी पुतली जैसी आपकी कन्याके ऊपर एक पशु हाथ उठाता है और यह कर्कश दासी आपपर प्रभुत्व करती है । फिर—"

बाबू महाशय सुरेशचन्द्रके पीछे खड़ी हुई मनुष्योंकी भीड़के मुँह-पर यदि प्रसन्नताके चिह्न देख पाते तो न मालूम उसकी इन बातोंका क्या

फल निकलता । बाबू महाशयके हृदयमें युवकके लिए श्रद्धा और कृत-ज्ञताके भावका उदय हुआ नहीं—यह बात कहनेसे सत्यका अवश्य अपलाप होगा । पर गाँवके आदमियोंके सामने १५ वर्षका लड़का उनका इस तरह अपमान करे—यह बात भी उनके हृदयमें बेतरह खटक रही थी । उन्होंने बहुत रूखेपनसे कहा—“लड़के, जानते हो किसके साथ तुम बातचीत कर रहे हो ?”

सुरेश उपेक्षाके साथ हँसकर बोला-“खूब अच्छी तरह जान गया हूँ ।”

आशा अबतक सुरेशकी गोदमें थी । अब वह पिताका हाथ पकड़-कर उनके पास जानेके लिए उनकी ओर देखने लगी । पिताने निरीह बालिकाकी आँखोंके अनिवर्चनीय कटाक्षके अर्थको जान लिया । उसकी अभीष्ट सिद्धि हुई । उसके उपकारी सुरेशके ऊपर बाबू साहबकी फिर श्रद्धा उत्पन्न हो गई । उन्होंने कहा—“तुम अच्छे घरके बालक मालूम होते हो । अच्छा हमारे घर आओ ।”

सुरेशने नमस्कारपूर्वक कहा—“क्षमा कीजिए । मेरा एक अनु-रोध है । इस सोनेकी पुतलीपर किसीको हाथ न चलाने दीजिएगा । यदि मेरे ऐसी बहन होती—”

आशा पिताके पीछे पीछे भाग गई । सुरेश चला गया । वह उसकी ओर देखती रह गई । उसके कानोंमें स्वप्नमें सुनी हुई वीणा-झंकारकी आखिरी तानकी प्रतिध्वनिकी तरह यह बात बार बार बजने लगी—“यदि मेरे ऐसी बहन होती—बहन होती—होती—”

२

कुछ दूर आगे बढ़कर सुरेशको मालूम हो गया कि आशाके पिताका नाम जलधर बाबू है और यह कि वे यहाँ डिप्टी मैजिस्ट्रेट हैं । आशा उनकी पहली स्त्रीकी कन्या है । आशाकी मा मर गई है । मतिलाल

डिप्टीसाहबकी दूसरी स्त्रीका पितृमातृहीन भाई है। मतिलाल नाम मात्रको किसी स्कूलकी चौथी कक्षामें पढ़ता है। सुरेशचन्द्र घूमनेके लिए कलकत्तेसे इधर आया था। वह कलकत्तेमें पढ़ता है।

एक दिनकी, एक पलकी घटना मनुष्य-जीवनका स्रोत किस रूपमें बहा देती है, इसको कौन सोच सकता है। इस घटनाका वर्णन करनेमें जितना समय लगा—उसकी अपेक्षा बहुत कम समयमें यह घटना सम्पादित हो गई। किन्तु इस स्वल्प-क्षण-व्यापी घटनाका फल यह हुआ कि कई जीवनोंके स्रोत बदल गये। उस दिनसे मतिलाल उस पर बेतरह नाराज होनेपर भी उसके शरीरको छू न सका। आशाकी विमाताकी वाक्ययातनासे दुर्बलचित्त जलधर बाबू मन-ही-मन अपनी मातृहीन कन्यासे यथेष्ट स्नेह करने लगे। सामान्य कारण पर भी जिस समय उनकी स्त्री आशाको कटु वाक्य कहती, उस समय जलधर बाबूके मनमें बड़ी चोट पहुँचती। एक दो बार कन्याका पक्ष लेकर उन्होंने अपनी स्त्रीको आशाके साथ ऐसा व्यवहार करनेसे रोका; परन्तु भार्याके कठोर वाक्य-स्रोतके बहावमें पड़कर बेचारे अपनी जगह स्थिर न रह सके।

और आशा? पहले जिस समय वह अकेली तालाबके किनारे बैठकर आकाशकी ओर देखा करती थी—एक मेघ दूसरे मेघ-खण्ड-को साथ लिये चला जाता है, प्रातःकाल आमके वृक्षपर बैठी बग-लोंकी पंक्ति, तालाबके जिस ओर देखती थी उसी ओर आशाको मालूम होता था कि मानों सिन्दूरकी नदी बहुत दूर तक चली गई है, उसी ओरसे सोनेके थाल जैसे बालारुणको उदय होता देखती थी, उसी समय वह मन-ही-मनमें निश्चय कर लेती थी कि जिस आका-शमें यह सब कुछ हो रहा है, उसीमें कहीं उसकी माता

रहती है और वहींसे वह उसको देखती रहती है। उसकी सौतेली मा या मतिलाल जब कभी उसपर अत्याचार करते थे, तब उसको बड़ा आश्चर्य्य होता था। उसकी माता ऊपरसे ग्रीष्मकालके दोपहरकी शरीरको झुलसा देनेवाली धूप इनपर क्यों नहीं बरसा देती? परन्तु उस दिनके बाद आशाने फिर कभी अकेलेमें बैठ कर माताका स्मरण नही किया। उस आगन्तुकका नवयौवनोत्साहस्फुरित वीरत्वव्यञ्जक अथच कोमल मुख ही अब दिन रात उसकी शिशु-कल्पनामें विराजा रहता है। जब विमाता उसपर नाराज होती थी—बकती थी, तब वह मानो प्रतीक्षा करती कि अभी थोड़ी ही देरमें वह वीर पुरुष आकर उसकी भर्त्सना करेगा। उसकी माता जिस मकानमें रहती थी उस मकानकी ओर जिस समय वह एकटक दृष्टिसे देखा करती थी, उस समय यदि कोई पत्ता हिलता था तो वह बड़ी आशासे पीछे फिरकर देखती थी कि वह युवा पीछेसे उसको गोदमें उठानेके लिए आ रहा है। किन्तु आशा जन्मदुःखिनी है। उसकी माताके समान वह भी निष्ठुर है—वह उसे बहिन बनानेके लिए कभी नहीं आया।

उस घटनाके छः महीने बाद एकदिन आशा रो रही थी। वह पलंगपर पड़ी हुई थी। आशाने रात्रिके अन्धकारमें देखा कि सुरेश वहाँ मौजूद है और मानो कहता है—"बालिका, मत डरो मत।" उस दिन आशाका कोई दोष नहीं था—आशाकी विमाताने फिर क्यों उसे बुरा भला कहा? आशा कुछ भी न समझ सकी। पिशाच मतिलाल भी उसे देखकर क्यों हँसा? आशा सोचने लगी कि यदि वे पास होते, मैं यदि उनकी बहन होती, मेरी तरह उनकी बहन होती—

इसी समय किसीने उसकी पीठपर हाथ रक्खा। आशाका बालिका-हृदय भर उठा। वह जल्दीसे उठ खड़ी हुई। उसके भौंरे जैसे

काले बाल उसके अश्रुसिक्त सोनेके कमल जैसे मुखमण्डलपर पड़े हुए उसको देव-शिशु बना रहे थे । कचहरीसे लौटकर पिता जलधरने अपनी कन्याके मुखदर्पणमें स्नेहमयी स्वर्गीया पत्नीके पवित्र आननका प्रतिबिम्ब साफ साफ देखा । उन्होंने आशाको गोदमें उठा लिया और कहा—"आशा! बेटी! क्यों रोती हो ? "

हतभागिनी आशाका मन और भर आया। आशा रोने लगी । पिता समझ गया--उसकी दुर्बलता थोड़ी देरके लिए दूर हो गई । देशके हाकिमने इतने दिनों बाद घरके न्याय करनेकी ओर ध्यान दिया । आशाके आनन्दकी सीमा न रही। आशा बार बार उसी अपरिचित युवकका स्मरण करने लगी । "वही पिताका गुरु है, उसीके वीरत्वसे पिताको भी साहस मिला है । वह कौन है? उसका नाम क्या है? उसके यदि बहन होती, मैं ही यदि उसकी बहन होती!"

एक दिन आशाने पितासे पूछा--"बाबा वे कौन थे?"

" किसे पूछती हो बेटी?"

" उन्हींको बाबा, जिन्होंने मुझे बचाया था।"

पिताने कहा—"वह किसी भद्र पुरुषका लड़का है। मैं उसे नहीं जानता । " आशाको इस उत्तरसे शान्ति नहीं हुई । उसने कहा—"बाबा भद्रपुरुषके लड़केका नाम क्या है।"

"बावली, उसे मैं जानता नहीं, उसका नाम कैसे जान सकता हूँ! बेटी तुझे उसकी खोज क्यों है?"

लड़की पिताके गलेसे लिपट गई—" बाबा, तुम मुझपर प्यार करने लगे हो। इसकी मुझे बड़ी खुशी है । वे भी यदि देख पाते, तो आपके ऊपर बहुत खुश होते।"

हा अदृष्ट! हाकिम सोचने लगे—हाय, आज, अपनी कन्याके आदर-प्यारको देखकर दूसरेको खुशी होगी! मोहमें पड़कर आदमी वानर हो जाता है। न मालूम किस मोहमें पड़कर यह दूसरा विवाह किया था!

आशाकी माताका मुखपद्म जलधरकी हृदय-सरसीमें खिल उठा, और उस पद्मपत्रमें उसकी आँखोंसे निकले हुए दो बूँद आँसू बहुमूल्य मोतीकी तरह चमकने लगे।

३

आशाकी अवस्था इस समय १३ वर्षकी है। उसके मुखका म्लान भाव अब और भी बढ़ गया है, पर उससे उसके चेहरेकी कान्ति कम होनेकी बजाय दूनी हो गई है। आज आशाका विवाह है। कलकत्तेकी किरायेकी हवेलीमें इस आनन्दके दिन आशा पाँच वर्ष पहलेकी गाँवकी उस घटनाकी याद कर रही है। इन पाँच सालोंमें आशा पिताके साथ न मालूम किन किन शहरोंमें फिर आई; परन्तु वह उस चेहरेको न भुला सकी। बड़ी मुश्किलसे जलधर बाबूने आशाके लिए एक एम्०ए० पास वर तलाश किया है। आशाने सोचा, उन्होंने भी एम०ए०पास कर लिया होगा। यदि आज इस शुभ अवसरपर वे आ जाते, तो यह जानकर कि मेरा विवाह अच्छे वरके साथ हो रहा है बहुत खुश होते।

दोपहरीके बाद आशाको नींद आगई। उसके कानोंमें उसके पिताका स्वर पहुँचा। पिता बड़े विरक्तिके साथ कह रहे थे—"अब तो मत दुःख दो। मैं उसको अब बिदा कर दूँगा।"

उसकी विमाता बड़े रूखे स्वरमें बोली—"मैं दुःख देती तो आज लड़की विदा करने योग्य न हो सकती थी। मेरे अपने भी तो कोई बालक नहीं है। फिर मैं क्यों किसीको दुःख दूँ?"

उसके पिताने कहा—"आज शुभ दिन तो यह झगड़ा मत करो।"

आशाकी विमाताका स्वर एकदम सप्तममें चढ़ गया। उसके साथ क्रन्दन भी शुरू हुआ। घरमें और रिश्तेदार भी निमंत्रित होकर आये थे। वे भी वहाँ पहुँच गये। गृहिणीने मरनेकी इच्छा प्रकट की। आशाके पिताने भी उन्हींका अनुकरण किया। अन्तमें झगड़ा मिट गया।

किन्तु इस घटनासे आशाको बड़ी तकलीफ पहुँची। उसके विवाहके दिन भी शान्ति नहीं! मालूम होता है कि पिता जबतक मेरा आदर न करते थे, शान्तिमें थे। उसके दुर्भाग्यका कुछ ठिकाना है! जो उसका आदर करता है—वही तकलीफ पाता है। इसी लिए आशाने तकियेमें मुँह छिपाकर अपने जीवनके साथी अश्रुस्रोतका आश्रय ग्रहण किया।

किन्तु विवाहके समय उसका हृदय एक नवीन उत्तेजनासे भर गया। मानो किसीने उसके कानमें कह दिया—आजका रोना तुम्हारा आखिरी रोना है। अब तुम्हें रोना न पड़ेगा। किन्तु आशाने अपनी आँखोंका विश्वास नहीं किया।

४

ससुरालका आदर-सत्कार आशाके जीवनमें बिलकुल नई चीज होनेपर भी आशाको किसी विषम सन्देहके कारण पहले दो दिनोंमें उसकी कुछ भी उपलब्धि न हुई।

नव वधूके रूपलावण्यकी तारीफोंने उसके कानमें प्रवेश नहीं किया। वह निर्लज्जा स्त्रीकी तरह फूलशय्यावाली रात्रिकी प्रतीक्षा करने लगी। वह मनमें बार बार अपने इष्ट देवताको पुकारने लगी। ईश्वर मेरा यह भ्रम भ्रम ही न हो। यदि भ्रम हुआ तो संसारमें मेरा कहीं ठिकाना नहीं है। ईश्वर, रक्षा कर।

फूलशय्याके फूलोंकी सुगन्धिने उसको शान्ति नहीं दी, वह स्थिर होकर पतिके आनेकी प्रतीक्षा करने लगी।

स्वामीने घरमें प्रवेश किया। आशा निर्निमेष-लोचन हुई उसकी ओर देखती रही। जिस चेहरेका वह पाँच सालसे ध्यान कर रही है, उसको पहचाननेमें क्या भूल हो सकती है? उस चेहरेपर मूँछें आगई हैं, वह और उज्ज्वल हो गया है, उसकी तेजस्विता और भी बढ़ गई है। अभागिनी आशा कभी सुखी हो सकेगी, यह बात भूलसे भी उसके मनमें नहीं आई थी। उन्होंने फिर दर्शन दिये। अब वे उसके स्वामी हो गये हैं। अब वह चिरकाल उनके आश्रयमें शान्तिपूर्वक रहेगी। क्या यह नहीं हो सकता? फूलशय्याके फूलोंमें अब उसको पारिजातकी सुगन्धि आने लगी। घरके दीपकके क्षीण आलोकमें मानो सैकड़ों सूर्य्योंकी आभा केन्द्रीभूत हो गई। सुरेशके साथ आँख मिलते ही उसको लज्जा हुई। उसने वस्त्रमें मुँह छिपा लिया।

विवाहके दिन सुरेशने भी जलधर बाबूको पहचान लिया था। वह समझ गया था कि उसके साथ उसी मातृहीन बालिका विवाह होनेवाला है। शुभदृष्टिके समय उसने आशाको पहचान लिया था, पर आशा उसको पहचान कर अपने सौभाग्यकी बातपर विश्वास न कर सकी थी।

सुरेन्द्रने धीरे धीरे शय्याके पास जाकर आशासे पूछा—"आशा! बालिका! पहचानती हो?"

आशाके हृदयमें भावसमुद्र होते हुए भी मुँहसे वह कुछ न बोल सकी।

उसने सिर झुकाकर उसकी बातका उत्तर दिया।

इसी समय सुरेशने उसके कनकसम अधरपर प्रणयका प्रथम चुम्बन अर्पण किया।

नाम-माहात्म्य।

१

तरुतलशायी संज्ञाशून्य युवकने धीरे धीरे आँखें खोलीं। अपनी परिचर्य्यामें लगी हुई सुन्दरीको देखकर वह उसके मुँहकी ओर देखता रहा। युवतीने मुस्कराते हुए पूछा—"जल चाहिए?"

युवककी समझमें कुछ न आया। युवतीकी बातका उत्तर दिये बिना ही उसने आँखें बन्द कर लीं। उसी समय उसको भीषण डकैतीकी याद आ गई। वही भीषण कोलाहल, वही विकट दृश्य, वही नृशंस व्यापार, उसके नौकरोंकी चिल्लाहट, उसके धनका लुटना, लड़ाई, अन्तमें हार—एक एक करके ये सब चित्र कोई उसकी स्मृतिके किवाड़ खोलकर उसके सामने रखने लगा। युवकके शरीरमें बची खुची रक्तकी बूँदें उबलने लगीं। उसका पीला चेहरा फिर सुर्ख हो गया। उसके घावोंसे फिर खूनकी धार बहने लगी।

युवती गौरी स्थिर दृष्टिसे उसकी ओर देख रही थी। उसने अनुमानद्वारा जान लिया कि युवक उत्तेजित हो उठा है। उसका मन बहलानेके लिए युवतीने वीणा-कण्ठसे कहा—"हेम बाबू।"

विस्मित युवकने फिर आँख खोलकर युवतीकी ओर देखा। कैसा सुन्दर मुख, कैसे बड़े बड़े नेत्र, कैसे घने घने काले बाल। उस सुगठित देहलतासे हेमचन्द्र आँखें न हटा सका।

गौरीने कुछ नाराज होकर कहा—"क्या सोच रहे हैं? उत्तेजित न हूजिएगा।"

युवक पुरानी उत्तेजनाको भूल गया। नूतन भावमें उत्तेजित होकर उसने पूछा—"क्या आप वनदेवी हैं?"

वहीं वृक्षपर बैठा हुआ एक पक्षी बोल उठा—वहीं दूरपर एक सूखी हुई नदीके किनारे गर्दन झुकाये एक बगला किसी गुरुतर विषयकी आलोचना कर रहा था। हेमचन्द्रके प्रश्नको सुनकर मुस्कराती हुई गौरीने जवाब दिया—"नहीं, मैं डाकूकी लड़की हूँ।"

हेमचन्द्रको गौरीकी बातपर विश्वास नहीं हुआ। उसने बड़े ही कातर भावसे कहा—"दुखीके साथ हँसी न कीजिए। ठीक ठीक बताइए, आप कौन हैं?"

गौरीने फिर कहा—"आप उत्तेजित न हूजिए। मेरे पिता डाकूदलके सरदार हैं। आपको आहत अवस्थामें वे कैद करके ले आये हैं।"

फिर युवकके हृदयमें पूर्वस्मृति जग उठी। उसने उत्तेजित होकर कहा—"एक एक—जुदा जुदा हमारे साथ लड़कर हमें जो कैद कर सके, हम उसके गुलाम बन जायँ। हमारे ऊपर सदल बल टूट पड़ना, हमारे नौकरोंको डराकर भगा देना, और अकेले हमको अन्यायसे पकड़ कर ले आना कायरताका काम है।"

युवकने गौरीके नेत्रोंमें अपनी बातको आगे बढ़ानेकी उत्तेजनाको नहीं पाया। मानो गौरी बेमनसे उन बातोंको सुन रही थी। युवकने भाव-स्रोतको रोककर कहा—"अच्छा, यह बताओ कि तुम्हारे पिता हमें क्यों पकड़ लाये हैं, वे हमारा करेंगे क्या?"

युवतीके मुखसे वह हँसीका भाव मानो दूर हो गया। जरा सोचकर उसने कहा—"पिता आपका क्या करेंगे? मालूम होता है खूब रुपया लेकर आपको छोड़ देंगे, शायद अपने दलमें भी शामिल कर लें—

युवकने उत्तेजनाके साथ कहा—"दलमें शामिल करेंगे?"

युवतीने स्थिर भावसे उत्तर दिया—" हाँ, दलमें मिला लेंगे—डाकू बना लेंगे।"

युवक काँप उठा। युवतीके फूलके समान सरल मुखको देखकर उसको बहुत सन्देह होने लगा। वह इन सब बातोंपर विश्वास न करके इसको स्वप्न समझने लगा।

युवती कहने लगी—" बाबा डाकू ही बनायँगे। वे जिसको वीर देखते हैं उसीको डाकू बनाते हैं। इस समय दल भरमें पिता प्रताप दादाको सबसे अधिक साहसी समझते हैं। उसको भी पिता किसी अच्छे घरसे पकड़कर लाये थे।"

युवकने पूछा—" वह साहसी वीर कौन है ?"

गौरीने कहा—" उसका नाम प्रताप है। उसकी वीरता और साहसकी बड़ी ख्याति है।"

वृक्षोंमें छिपा हुआ प्रताप इन बातोंको सुनकर बहुत आनन्द अनुभव कर रहा था—पर गौरीको इस बातकी खबर नहीं थी। उसकी बातके समाप्त होते न होते प्रताप वहाँ आ पहुँचा। उसको देखकर इन्दुवर्ण गौरीका चेहरा सुर्ख हो गया। लज्जाके भावको छिपाते हुए गौरीने बड़ी प्रतिभाके साथ कहा—" यही हमारे प्रतापदादा हैं।"

दोनों युवक कुछ देरतक एक दूसरेको ताकते रहे। वनदेवीकी तरह गौरी क्षणभरहीमें कहीं लीन हो गई।

२

देशविख्यात कृत्तिवास सरदार वृक्षके पीछेसे युवक हेमचन्द्रको देख रहा था। उसके सामने ही जलंगी नदी अपनी मौजमें बही जा रही थी। उसकी दाहनी ओर 'कल-कल' नामकी छोटीसी नदी कल-कल करती हुई पद्मासे मिलनेको जा रही थी। हेमचन्द्र दोनों नदियोंका जहाँ

संयोग होता है वहीं बैठा था। रोगमुक्त होकर अब वह खूब सबल हो गया है। तो भी उसके चेहरेपर वेदनाका भाव साफ साफ झलक रहा था। कृत्तिवासको यह बात अच्छी नहीं लगती थी। वह उसे आन्तरिक विद्रोहका लक्षण समझता था।

सरदार कृत्तिवास निर्वाणोन्मुख नवाब या उदय होनेवाले अँगरेजोंके प्रभावको नहीं मानता था। राष्ट्रविप्लवके कारण शासक लोग युद्धमें लगे हुए थे। राज्यकी भीतरी शान्तिरक्षाके लिए वे अधिक सचेत हो भी नहीं सकते थे। कृत्तिवासको दण्ड देना भी साधारण काम नहीं था। वह जहाँ रहता था, वह अत्यन्त दुर्भेद्य स्थान था। उस तिकोनी तीन कोस भूमिके एक ओर जलंगी नदी, दूसरी ओर पद्मा नदीकी एक शाखा कलकल नदी और तीसरी ओर इन दोनों नदियोंको जोड़नेवाली एक और छोटीसी पर तेज बहनेवाली नदी थी। इस जंगलमय द्वीपमें बसनेवाले प्रायः सभी कृत्तिवासके दलमें शामिल थे। वे सब सशस्त्र थे। नौकाओंपर चढ़कर तीनों ओरसे कृत्तिवासपर आक्रमण करके उसके दलको दमन करनेका अवसर उस समयके शासकोंको नहीं था।

जब धीरे धीरे गौरी वहाँ पहुँची तब कृत्तिवासने जाना कि हेमचन्द्र उसीके लिए वहाँ बैठा हुआ था। वे दोनों मिलकर खुशी हुए, यह बात दस्यु दलपतिने अच्छी तरह देख ली। हँसमुख गौरी वटवृक्षके नीचे बैठ गई। अर्द्धशायित अवस्थामें हेमचन्द्र उसके साथ बातचीत करने लगा।

सरदार जानता था कि हेमचन्द्रको डाकूदलमें मिलानेके लिए प्रधान आकर्षिणी शक्ति गौरी है। वह बूढ़ा हो गया था। अपने गठित दलको किसी योग्य पुरुषके हाथमें दे जानेकी इच्छा उसको बहुत दिनोंसे

तंग कर रही थी। हेमचन्द्रके यहाँ लूटमार करते समय वह हेमचन्द्रकी शूरता और वीरतापर खूब मुग्ध हो गया था। उसकी पालिता कन्या ब्राह्मणकुलमें उत्पन्न हुई थी। इस बातको और कोई नहीं जानता था। उसके साथ हेमचन्द्रका विवाह हो जानेसे सभी बातोंकी रक्षा हो सकती थी। सरदार इस बातको खूब जानता था। पर उसे यह मालूम नहीं था कि उसका पालित पुत्र प्रताप भी गौरीका प्रेमाभिलाषी है। गौरीको यह बात मालूम थी। गौरीने कई बार उसे बताया था कि वह उसको सहोदर भाईकी तरह समझती है। उसके साथ गौरीका अकृत्रिम प्रेम था। इस बातको जानकर ही प्रताप मानो आशासूत्रसे बँधा हुआ प्राण धारण किये हुए था। उसे विश्वास था कि एक दिन प्रेमकी जय होगी—एक दिन उस वन्य-कुसुमपर उसका अधिकार होगा। प्रताप साहसी था। किन्तु कृत्तिवासके दलके नेता बननेकी योग्यता उसमें नहीं थी। इसी लिए हेमचन्द्रको पाकर सरदार निश्चिन्त हुआ था।

उनकी बातें सुननेके लिए सरदार आगे बढ़कर एक वृक्षके पीछे छिपकर खड़ा हो गया।

गौरीने कहा—"उठिए।"

हेमचन्द्रने उसके मुँहकी ओर देखते हुए कहा—"क्यों, नदीकी हवा तुम्हें अच्छी नहीं लगती?"

गौरीने जरा हँसकर कहा—"तुम्हारे पास ज्यादा रहनेसे प्रताप दादा मुझपर नाराज होते हैं। उनको सचमुच दुःख होता है।"

यह बात सुनकर हेमचन्द्र और कृत्तिवास दोनोंहीकी मानो निद्रा टूट गई। बहुदर्शी कृत्तिवासने इतने दिनों तक जिस बातका सन्देह नहीं किया था—एक साथ वही बात सुनकर उसको बड़ी शङ्का

हुई। उसको बड़ी चिन्ता हुई कि इन दोनों युवकोंकी प्रतिद्वन्द्वि-तासे कहीं मेरा दल भी दो भागोंमें न बँट जाय।

हेमचन्द्रने कुछ देर चुप रहकर कहा—"अच्छा जाओ।"

गौरी उठ खड़ी हुई; पर हेमचन्द्रके मुँहकी ओर देखकर वह आगे न बढ़ सकी। कातर स्वरमें उसने पूछा—"नाराज हो गये?"

भावप्रवण हेमचन्द्रने उत्तेजित स्वरमें कहा—"नाराज हो गया? नहीं गौरी, नाराज नहीं हूँ। डाकुओंमें मैं किस लिए टिका हुया हूँ—कभी तुमने यह सोचा है? जमींदारका लड़का होकर मैंने इस वृत्तिको किसके लिए ग्रहण किया है? गौरी, अच्छी बात है, तुम अपने प्रतापको लेकर सुखमें रहो।"

गौरीका चेहरा उतर गया। उसकी बालिकासुलभ सरल हँसी उसके अधरोंमें छिप गई। उसने बहुत सोचकर कहा—"क्या तुम यहाँ सिर्फ मेरे लिए ही—"

युवती अपनी बातको साफ़ साफ़ कहना नहीं चाहती थी। हेमचन्द्रने दृढ़ भावसे कहा—"हाँ, इस जगह मैं सिर्फ तुम्हारे लिए ही पड़ा हुआ हूँ। गौरी, सिर्फ तुम्हारे लिए ही! तुम्हारे दर्शनके लिए! तुम्हारी मीठी मीठी बातें सुननेके लिए और समय पाकर तुम्हें अपनानेके लिए!"

गौरीके मस्तकमें अभीतक यह विचार नहीं आया था। वह इतनी बड़ी आत्मप्रकाशकी बात सुनकर वृक्षकी शाखाके सहारेसे स्थिर रह सकी। उस जगह अधिक देर ठहरना अनुचित समझकर चिन्तामग्न सरदार दूसरी तरफ चला गया।

३

सरदार कृत्तिवास घोड़ेपर चढ़े हुए आगे आगे जा रहे हैं। उनके पीछे घोड़ेपर सवार प्रतापचन्द्र है। उसके पीछे शस्त्रास्त्रसे सज्जित

डाकू हैं। वे लोग खूब खुश हैं, किसीके चेहरेपर चिन्ताकी रेखा तक नहीं है। पर स्वयं कृत्तिवास आज चिन्तामग्न है। वह मुर्शिदाबादके पास किसी मुसल्मान जमीन्दारका घर लूटने जा रहा है। अँगरेजोंके साथ नवाबकी ओरसे युद्ध करनेके लिए मुसलमान जमींदार अपने आदमियोंको लेकर राजधानी गया हुआ है। कृत्तिवासको यह बात मालूम हो गई थी। पर फिर भी आजका काम बड़ी जोखिमका है—यह बात उसके मनसे किसी तरह दूर नहीं होती थी।

पर उसके मंत्री प्रतापचन्द्रकी चिन्ताका कारण दूसरा ही है। आजके काममें योग देनेके लिए—सरदारने हेमचन्द्रको भी आज्ञा दी थी। पर उसने किसी लूटमें अभी तक योग नहीं दिया था, इसलिए आजके कामको जोखिम समझकर गौरीने पितासे उसको छुट्टी दिला दी थी। सरदारने हँसकर उसको घरकी रक्षाका भार दिया था। कहनेकी जरूरत नहीं कि इस घटनासे प्रतापचन्द्रको बड़ी तकलीफ पहुँची थी। उसने मनमें प्रतिज्ञा कर ली कि यदि आजके कामसे जीवित लौटा, तो हेमचन्द्रके प्राण नाश करके अपना मार्ग साफ कर दूँगा। सन्ध्यासे पहले उसने हेमचन्द्रको एकान्तमें बुलाकर कहा—"यदि तुम्हारा कोई इष्टदेव हो, तो उसकी आज रात्रिमें प्रार्थना कर लेना; क्यों कि कल प्रातःकाल होते ही मैं तुम्हें परलोक भेज दूँगा।"

हेमचन्द्रने उपेक्षाकी हँसी हँस कर कहा—"कायर डाकू, बौना होकर चन्द्रमाको पकड़नेका दुस्साहस करता है? इतने दिन चेष्टा करने पर भी गौरीको—"

प्रतापने बात काटकर कहा—"नहीं पाया। चेष्टा भी नहीं की। जो चीज अपनी है उसके लिए चेष्टा ही क्या? कल प्रातःकाल देखा करूँगा।"

हेमने कहा—"अभी क्यों नहीं? मैं अभी तेरे टुकड़े टुकड़े कर दूँ।"

प्रतापने कहा—"आज बड़ा जरूरी काम है। गीदड़ या कुत्तेको मार कर पेट भरनेका दिन आज नहीं है। कल ही तेरे मांसका स्वाद लिया जायगा!"

उस दिन अपने अपने कामोंमें घिरे रहनेके कारण दोनोंहीमें इससे अधिक कोई बातचीत नहीं हुई। प्रताप, घोड़ेकी पीठपर बैठा हुआ क्रोधके मारे काँप रहा था। सरदारके काममें विघ्न पड़ जायगा, इसी भयसे उसने हेमचन्द्रकी हत्याका शुभ सङ्कल्प कार्य्यमें परिणत नहीं किया!

ये लोग अपने स्थानसे करीब पाँच कोसकी दूरीपर आ गये थे। जंगलमें चाँदनी फैली हुई थी। घोड़ेकी टापका शब्द सुनकर डाकू-दल सचेत हो गया। कोई सवार बड़ी तेजीसे घोड़ा दौड़ाता हुआ उस तरफको आ रहा था। डाकू मार्गके दोनों ओर खड़े होकर आने-वालेकी प्रतीक्षा करने लगे। सवार करीब आ गया। सबने पहचान लिया, घोड़ेका सवार और कोई नहीं महेश है।

सरदारने घबरा कर पूछा—"महेश, क्या खबर है?"

महेशने हाँपते हाँपते कहा—"सरदार, सर्वनाश हो गया। चोरी हो गई। बड़ा भारी डाका पड़ गया!"

सरदारने घबराकर पूछा—"चोरी?"

"आपकी कन्याको हेम चुराकर ले गया। दो घोड़े चोरी गये हैं और रुपये पैसेकी चोरीका हाल मा काली जाने।"

यह बात सुनकर सब स्तम्भित हो गये। पूछने पर मालूम हुआ कि महेशने किसी कामके लिए जब हेमचन्द्रको ढूँढ़ा और न पाया तब उसने गौरीको तलाश किया। उसका भी पता न था। अन्तमें उसको

देखा कि नौका उसपार बँधी हुई है । उसपर सवार होकर युवक युवती और दोनों घोड़े उस पार पहुँचकर न मालूम किधर चले गये हैं। खजानेका द्वार खुला हुआ था—उसमेंसे बहुतसा कीमती सामान चोरी गया था।

सरदार पागलकी तरह सिर पीटने लगा। प्रतापने कहा—"सरदारने किसपर विश्वास किया? दुष्ट नारकी मनुष्य आपकी कन्या—डाकू सरदारकी कन्याको चुराकर ले गया। मैं क्या योग्य पात्र—"

सरदारने धीरे धीरे कहा—"चलो, सब लौट चलो। कुत्तेको अभी पकड़कर टुकड़े टुकड़े कर डालूँगा। और उस कुतियाको—यदि चाहेगी तो प्रतापको दे दूँगा, नहीं तो गर्म तेलमें डालकर उसके पापका दण्ड दूँगा।"

रात्रिके सन्नाटेको तोड़ते हुए, बादलोंकी तरह गरजकर सरदारने कहा—"हर हर महादेव।"

उसके मस्तकपर लाठी घुमाकर उसके साथियोंने भी कहा—"हर हर महादेव।"

वनमें सोते हुए पक्षी डरके मारे चीखने लगे।

४

"जय महाप्रभुजीकी जय—" नावके मल्लाह बड़े जोरसे बोल उठे—"जय महाप्रभुजीकी जय, जय गंगाजीकी जय।"

हेमचन्द्र झटपट नावसे बाहर आया। उस समय प्रातःकालका प्रकाश जलंगी नदीके ऊपर पड़ रहा था। पूर्वदिशामें सिन्दूरी रंग जम सा गया था, पर उस समय तक दिनमणि सूर्य्य उदय नहीं हुए थे। गंगा और जलंगी नदीका संगमस्थल दूर दिखाई देता था। हेमचन्द्रने लम्बी साँस भरकर पुकारा—"गौरी।"

आँखें मलती मलती गौरी नावसे बाहर निकल आई । मल्लाह गीत गाते जाते थे और नावको खेते जाते थे । बूढ़े मल्लाहने कहा—"फुर्ती करो ।"

हेमने कहा—"गौरी, अब हम निश्चिन्त हो जायँगे ।"

गौरीने कहा—"क्या मालूम । मुझे बड़ा भय हो रहा है ।"

हेमने गौरीके मुँहकी ओर देखा । इन कई दिनोंमें घबराहटके कारण वह उसको अच्छी तरह नहीं देख सका था । आजके मधुर प्रभातमें हेमको गौरीके रूपकी मधुर ज्योति बहुत भली मालूम हुई । उसने कहा—"गौरी, आज तुम कैसी भली दिखाई पड़ती हो, एक बार जलमें अपना मुँह देखो तो सही ।"

गौरीने जलकी ओर न देखकर उसके मुँहकी ओर देखा । उसके सारे शरीरमें मानों बिजलीका प्रवाह दौड़ गया । उसने सोचा—अहाहा—कैसा दिव्य चेहरा है ! कैसा मधुर रूप है ! छिः छिः, मैं भी कितनी नीच हूँ जो अभी कुछ देर पहले सोच रही थी कि स्नेहमय पिता, सहोदर भाईसम प्रताप और सारे ग्रामको छोड़कर कृतघ्नोंकी तरह इसके साथ क्यों भाग आई । ठीक ही हुआ है । डाकुओंको छोड़कर—निष्ठुर नरघातकोंको छोड़कर देवताके साथ भाग आनेमें मैंने कोई बुरा काम नहीं किया है ।

हेमने कहा—"गौरी, क्या सोचती हो ? मैं आज ही नवद्वीप पहुँच कर तुमसे विवाह करूँगा । तुम्हें अपनाकर अपना जीवन सार्थक करूँगा ।"

हेमचन्द्र ब्राह्मण-सन्तान है । वह गौरीको शूद्रा समझता है । उसे मालूम है कि नवद्वीपमें जातिभेद नहीं है । वैष्णवधर्मको अंगीकार करके वह गौरीके साथ विवाह करना चाहता है ।

गौरीने हँसकर कहा—"हेम, तुम पागल हो।"

हेमने आदरपूर्वक कहा—"गौरी, तुम्हींने तो मुझे पागल बनाया है।"

उसने आवेगमें आकर गौरीका हाथ पकड़ना चाहा। गौरीने पीछे हटकर बड़ी विरक्तिके साथ कहा—"फिर भूलते हो! क्या शपथ कर चुके हो? तुम्हारे लिए मैंने क्या क्या नहीं छोड़ दिया है? किन्तु—"

हेम शर्मा गया। उसने शपथ की थी कि विवाहके पहले गौरीका शरीर न छुएगा। उसने गौरीसे क्षमा-भिक्षा माँगी। गौरीने सिर्फ हँस दिया। उसकी नौका जलंगीके मोहानेपर आ लगी। मल्लाहोंने डाँड़ रखकर फिर कहा—"जय गंगा माईकी जय,—जय गंगा माईकी जय।"

५

वही द्वीप था, वही नदी नाले थे, पेड़ भी वही थे, आदमी भी वही थे। पर कृत्तिवासको किसी जादूगरनीके चले जानेसे वे सब बुरे मालूम होते थे। उसको पहले तो हेमचन्द्र और गौरीपर बहुत ही गुस्सा आया; पर अब गौरीपर उसका पहला स्नेह फिर नया होने लगा था। किन्तु ज्यों ज्यों गौरीपर स्नेह फिर कर आ रहा था त्यों त्यों हेमपर क्रोधकी मात्रा बढ़ती जाती थी। सुन्दरी पालिता कन्याको तैलके तप्त कढ़ाहमें डालनेका उसका पैशाचिक संकल्प अब ढीला पड़ गया था। सरला गौरीने दूसरेके कहनेसे यह काम किया है, यह बात उसके जीमें पक्की होती जाती थी। इस समय स्नेहवर्द्धित बालिका गौरीके लिए उसका मन अत्यन्त चञ्चल हो रहा था। उसके दुर्बल हृदयकी पैशाचिक वृत्तियाँ उच्छृंखल होकर प्रतिहिंसाके लिए बड़े जोरसे उदय हो रही थीं। निदान कृत्तिवास स्वयं इन दोनोंकी तलाशमें बाहर हुआ।

उनको पकड़नेके लिए चारों ओर आदमी छोड़े गये। प्रताप भी उसी दिनसे जहाँ तहाँ घूम रहा था। कृत्तिवास समझता था कि हेमचन्द्र किसी अँगरेज़ सौदागरका नौकर होकर कलकत्तेमें रहता होगा। उसके भयसे वह और कहीं नहीं रह सकता। कलकत्ता जाते हुए रास्तेमें नवद्वीपमें ढूँढ़नेके लिए सरदार नदियामें आकर उपस्थित हुआ।

६

उस समय नवद्वीपमें आजकलके समान बड़ी बड़ी अट्टालिकायें नहीं बनी थीं। उस समय नदियामें बहनेवाले श्रीगौरांग प्रभुके प्रेमस्रोतकी तरंगें साधक, वैष्णवों या तीर्थयात्रियोंको अनुप्राणित करती थीं। तुच्छ अर्थकी लालसामें चतुर लोग वैष्णव बन कर, बड़े बड़े महल बनाकर, उनमें गौराङ्ग महाप्रभुके जीवनकी कोई लीला होती है—यह कहकर और डंका बजा बजा कर धर्मप्राण सरल यात्रियोंसे रुपया वसूल नहीं करते थे। नवद्वीपमें प्रसिद्ध टोल और चतुष्पाटियाँ थीं जिनमें निःस्वार्थ भावसे वहाँ इकट्ठे हुए विद्यार्थियोंको पण्डितजन विद्या दान देते थे। साधक वैष्णव अपने अपने अखाड़ोंमें करताल बजा बजा कर हरिनामरूप सुधासे आगन्तुकोंको तर कर देते थे। उस समय रात्रिमें वृन्दावनका गुप्त खेल नहीं हुआ करता था— धूर्तताकी नारकी लीलाका अभिनय नहीं किया जाता था।

कृत्तिवासने लोगोंके घरोंको फूँका था, मनुष्योंको मारा था, गाँवों-को लूटा था, नवाबके सिपाहियोंके साथ युद्ध किया था, अपने छोटे से द्वीपमें नरपतियोंकी तरह स्वाधीनतासे राज्य किया था, उसने वैष्णवोंकी कथायें भी सुनी थीं; किन्तु धर्ममें मतवाले होकर सिर्फ कौपीन पहन कर मृदंग बजा बजा कर वास्तवमें आदमी पागल बन जाते हैं, यह बात उसने आजसे पहले कभी नहीं देखी थी। नवद्वीपमें जब

कभी वह आता था तो सङ्कीर्त्तन सुनकर बड़ा दुखी होता था; पर कार्य्याभावके कारण उसको सङ्कीर्तन सुनना पड़ता था । कथकोंके मुँहसे गौरांग-लीला भी सुननी पड़ती थी । जगाई और माधासे मार खाकर चैतन्य हरि हरि कह कर नाचते थे, उनसे प्यार करते थे, अन्तमें प्रेमके द्वारा ही उनको जीत लेते थे—यह देख कर कृत्तिवासने मानो एक नया ही स्वप्नराज्य देखा । वह जीतनेका एक ही उपाय जानता था—अर्थात् बाहुबल । प्रेममें भी जीतलेनेकी शक्ति है, यह बात उसे सबसे पहले उसी दिन सुनाई पड़ी ।

गंगास्नान करके, शामके समय, कृत्तिवास कीर्त्तनदलके पीछे पीछे जा रहा था । गायक खूब आनन्दभरे स्वरमें गा रहे थे—

"प्रेमहीसे पाये जायँ हरी ।
प्रेम ही द्वारा जगत् चले,
प्रेमहीकी जड़ हरी ।"

सरदारने अकस्मात् सोचा कि बात तो बिल्कुल सत्य है । अबतक उसको यह बात क्यों मालूम नहीं हुई ? एक बालिकाको पकड़नेके लिए वह किस लिए घूम रहा है ? सरदारने सोचा कि जिस मानसिक वृत्तिके वशीभूत होकर वह अपनी कन्याको ढूँढ़ रहा है, वह नवाविष्कृत वृत्ति प्रेम ही है । जिस वृत्तिकी वशवर्त्तिनी होकर उसकी स्नेहमयी गौरी उसको छोड़कर भाग गई—वह भी प्रेम ही है । यह सीधी सादी बात आजतक वह क्यों नहीं समझ सका—यह बात सोचकर वह बहुत विस्मित हुआ । गायकोंने फिर गाना शुरू किया—

" प्रेमके वशमें हरी ।"

इस बार सरदारकी पैशाचिक आँखमें आँसू आ गये ! वह भी उनके साथ नाच नाचकर गाने लगा—

"हरि बोलो भाई बोलो हरि ।"

७

"कौन, प्रताप ?"

"सरदार !"

"पता लगा ?"

"हाँ, अभी पता लगा है ।"

सरदारका हृदय खुशीसे भर गया । उसने कहा--"अच्छा तो अभी चलो ।"

प्रतापने कहा--"इस समय चलनेसे सब काम बिगड़ जायगा । रात्रिको चलिएगा । पर मैं ही उस कुत्तेका गला काटूँगा ।"

इस प्रस्तावके विरुद्ध सरदारने कुछ नहीं कहा । उसकी प्रति-हिंसावृत्ति जब तक चरितार्थ न होगी, तब तक उसे शान्ति नहीं मिलेगी। उसकी रक्तपिपासा फिर लौट आई । उसकी चिरप्रतिपालित वृत्तियोंने फिर सिर ऊँचा किया । सरदार और शिष्य प्रतापने श्रीधामकी पवित्र मिट्टीपर लेट कर क्या करना है--इसका निर्णय किया । उन दोनोंकी आँखोंसे मानो आगकी चिनगारियाँ निकल रही थीं ।

८

घरके कोनेमें एक दीपक जल रहा है । उसी दीपकके क्षीण प्रकाशमें गौरीकी रूपराशि जगमगा रही थी । सोती हुई रमणीके अधरकी स्वाभाविक हँसीने दोनों नर-घातकोंके खूनको उबाल दिया । दोनों नर-शार्दूल शिकारपर एक साथ टूट पड़े । सरदारने गौरीका गला दबोच लिया । प्रतापने सोते हुए हेमचन्द्रकी छातीपर बैठकर छुरी बाहर निकाली ।

इसी समय कातर स्वरमें किसीने कहा--"बाबा ! छिः ! छिः ! ! बाबा !" दोनोंने आँख फेरकर नव वधूकी ओर देखा । उन्मत्ता

गौरीने स्वामीको मारनेकी इच्छा करनेवालेका हाथ पकड़ लिया । उसी समय दूरसे किसी साधकके गानेकी आवाज़ आई—

"प्रेमसम संसारमें नहीं दूसरी चीज ।
हरि बोलो हरि ।"

उसी समय सरदारने कल्पनाकी आँखसे मानो देखा कि दो भाई हैं, उनको पाखण्डी लोग जितना मारते हैं, वे उतना ही गाते और नाचते हैं।

यह सब कुछ क्षणभरमें हो गया । प्रतापने समझ लिया कि गौरीके हाथसे हाथ छुड़ाना आसान नहीं है । उसके हृदयकी प्रत्येक रक्तकी बूँद तप्त कढ़ाईमें तैलकी तरह जलने लगी । प्रतापने बाघिनी गौरीके हाथसे हाथ छुड़ानेकी चेष्टा न करके अपने बायें हाथसे कमरमेंसे पिस्तौल बाहर निकाला और हेमचन्द्रकी छातीपर रख दिया । सरदारने भी देखा । उसके पास ही खड़े हुए श्रीगौराङ्गने मानो उससे प्रेमपूर्वक कहा—

"प्रेमसम संसारमें नहीं दूसरी चीज ।"

सरदारने किसी मन्त्रकी प्रेरणासे उसी समय पिस्तौलको हेमकी छातीसे हटा दिया । उत्तेजनाके कारण हाथ एकदम ही घूम गया । ठीक इसी समय प्रतापने पिस्तौलका घोड़ा दबा दिया । आवाज हुई और खूनसे लथ पथ हुआ प्रताप पृथ्वीपर गिर पड़ा ! सरदारने समझा कि जल्दीमें हाथ घुमानेसे पिस्तौलका नल एकदम सीधा प्रतापकी ओर हो गया ।

आदमियोंकी भीड़ होनेसे पहले ही वैष्णव कृत्तिवास जामाता और कन्या दोनोंको गोदमें लेकर अंधकारमें न मालूम किस ओरको भाग गया । इस काममें कृत्तिवासकी बराबरी करनेवाला उस समय बंगालमें कोई नहीं था ।

लाल कुर्त्ता ।

१

बड़े विस्मयके साथ रायपत्नीने पूछा—"क्या कहते हो ? लाख बातें होती हैं, तब कहीं ब्याह होता है ।"

राय महाशयने कहा—"और यहाँ अभी लाख बातोंमें एक बात भी नहीं हुई ।"

गृहिणीने अधीर होकर कहा—"क्यों, ब्याहमें अब कौनसी बात बाकी है ? क्या क्या बातें हुईं, एक दफा मुझे सुनाओ तो सही ।"

ऐसे गुरुतर विषयमें स्त्रीकी बात न माननेसे पारिवारिक शान्तिमें जरूर व्याघात होगा—इस डरसे राय महाशयने उस किस्सेको एक दफा आदिसे अन्त तक दुहरा दिया । वे कहने लगे—"हम कलकत्तेके किसी बड़े घरानेके लड़केको नहीं चाहते । वसन्तको देखकर ही हम अब दूसरेकी खोज करेंगे । आज प्रातःकाल बड़के वृक्षके पास जब वह नमस्कार करके खड़ा हो गया, तब सचमुच हमें बड़ा डर मालूम हुआ ।"

गृहिणीने कहा—"यह क्यों ? भय कैसा ? न मालूम तुम किस तरहके आदमी हो जो जमाईको देखकर डरते हो ।"

किस्सेकी आदिमें ही स्त्रीको बाधा देती देखकर राय महाशय थोड़ी देरके लिए चुप हो गये । फिर बोले—"सुनो तो सही, जमाई जमाई कहकर उछलती क्यों हो ? भय और कुछ नहीं था, पर इज्जतका भारी भय था । हमसे एक बार कलकत्तेके एक लड़केने कहा था कि आपकी जेबमें दियासलाईका बक्स हो तो दीजिए, सिगरेट जलाऊँगा ।"

गृहिणीने कहा–" रहने दो, मैं सुनना नहीं चाहती—तुम्हारी ये बे-मतलबकी बातें ।"

मालिकने कहा–" अच्छा इस बातको छोड़ो । लड़केने हमारे पास आकर नमस्कार की और पूछा—अच्छी तरह हो ? हमने कहाँ– हाँ । वसन्तने कहा–आपसे एक बात कहना है । हम समझे, हमसे वह उस जमीनकी बाबत कुछ कहेगा पर उसने उस बातको न कहा, उसने हमसे साफ साफ ही कहा—महाशयकी जो अविवाहिता कन्या है, यदि आप उसका मेरे साथ विवाह कर दें तो मैं उसको यथासाध्य सुख दूँगा । "

गृहिणी कह उठी–"अरे, बड़ा ही बेहया जमाई है । ऐसी बात तो आजतक नहीं सुनी । अपने ब्याहकी बात अपने मुँहसे कौन कहता है ?"

राय महाशयने कहा-" मैं उसकी बातें सुनकर अवाक् रह गया । इतनी उम्र होगई, सात आठ फौजदारीके मुकद्दमे और पचास साठ दीवानीके मुकद्दमें लड़ चुका हूँ, पर ऐसा निर्लज्ज लड़का मेरे देखनेमें नहीं आया ।"

इस बार गृहिणीको क्रोध आगया । उसने कहा–"उसे निर्लज्ज क्यों कहते हो ? लड़का है, उसने अपने मनकी बात कह डाली तो हर्ज ही क्या हुआ । वह मामूली लड़का भी तो नहीं है । रुपयोंके पहाड़का मालिक है—बड़ा आदमी है ।"

राय-दम्पतीके दाम्पत्य-जीवनमें मतभेद हो जानेसे जो कलह होता था उसमें एक विशेषता थी । राय-पत्नीको वसन्तकुमार पहले तो निर्लज्ज मालूम हुआ, पर पतिका भी उसकी ओर वैसा ही भाव देखकर उसने अपना मत बदल दिया । स्वामी भी हार माननेवाले नहीं थे । उन्होंने कहा–"बड़े आदमी होनेसे ही तो भय लगता है । कौन जाने इस समय वह यह काम धुनमें आकर कर डाले और परिणाम–"

गृहिणीने बाधा देकर कहा—"परिणाम भी अच्छा ही होगा । हमारी कन्या साक्षात् लक्ष्मी है । वसन्त और गौरीका जोड़ा राम सीता जैसा रहेगा।"

धनवान् और निस्सन्तान मामाकी सम्पत्ति पाकर वसन्त खजूरी ग्राममें रहता है। मामाके सामने वसन्तके पिताके साथ उनका मेल नहीं था। इसी लिए वसन्तका इस ग्रामके साथ विशेष परिचय नहीं था। मामाकी मृत्युके बाद उसकी स्नेहमयी माता और गर्वित पिता भी एक एक करके शीघ्र ही मर गये। कलकत्तेके शून्य स्थानको छोड़कर शिक्षित वसन्त, मामाके गाँवमें आ बसा है। उसके आनेसे उसके मामाका बड़ा भारी महल मानो जादूके बलसे सुशोभित हो गया है। उसने अपने महलके पासवाले बागको बड़ी मेहनतसे ठीक कराया है। ग्रामके रहनेवालोंमें किसीके साथ वसन्तकुमारने मित्रता नहीं की; पर उसके मामाके मिलनेवालोंमेंसे यदि कोई उसके पास जाता था तो वह असन्तुष्ट होकर न लौटता था। हाँ, उससे जो लोग नहीं मिले थे वे उसको जरूर अविनयी समझते थे।

वसन्तकुमारने राय महाशयसे कहा था कि वह दो चार दिनमें उनकी लड़कीको देखने आयेगा। जिस समय वह आये उस समय उसकी अभ्यर्थना किस तरह करना चाहिए जिससे वह उनके प्रस्तावको स्वीकार कर ले—इस विषयवर राय-दम्पतीमें तर्क चलने लगे। उसी समय उनके ज्ञातिभ्राता मुकुन्दराम बहरामपुरसे आ गये जिससे उन दोनोंमें शान्ति स्थापित हो गई।

२

ज्ञातिभ्राता होनेपर भी मुकुन्दराम राय महाशयके सुख-दुःखमें, आमोद-उत्सवमें प्रधान सहचर थे। मुकुन्दरामके सगे भाईके साथ राय

महाशयने एक बीघा जमीनके लिए हाईकोर्ट तक मुकदमा लड़ाया था। उस समय भी राय महाशयको छोड़कर मुकुन्दरामने अपने भाईकी सहायता नहीं की थी। यही कारण था कि नित्यानन्द रायके परिवारमें मुकुन्दरामकी चलती खूब थी। बसन्तकुमारके सम्बन्धमें सब बातें सुनकर मुकुन्दरामने कहा—"बहुत ठीक।"

रायगृहिणीने कहा—"यह क्या बात है? जमाईकी बात सुनकर तुम खुशीके मारे उछल न पड़े बल्कि बड़ी गम्भीरतासे कहते हो—बहुत ठीक। मनकी बात साफ साफ कहो।"

बहू रानीकी बातसे आश्वस्त होकर मुकुन्दरामने मनकी बात कहना शुरू की—"हम गाँवके आदमी हैं, कलकत्तेके युवकोंकी बात हम कुछ नहीं जानते, इसलिए कुछ कहना भी नहीं चाहते। तो भी हमारा मत यह है कि असमान सम्पर्क अच्छा नहीं होता। हमने जिस लड़केको स्थिर किया है उसके साथ सम्बन्ध करनेसे दोनों पक्षवाले एक दूसरेको समझ सकते हैं। बस, हमें इतना ही कहना है।"

मुकुन्दरामने वर स्थिर किया है, यह सुनकर रायदम्पती अत्यन्त कौतूहलाक्रान्त हुए। मुकुन्दराम सचमुच ही राय महाशयके सहोदर भ्रातासे बढ़कर हैं—यह बात उन्होंने मुक्तकण्ठसे स्वीकार की।

राय-गृहिणीने कहा—"हमें दो जमाइयोंका क्या करना है। किसको छोड़ें, किसको ग्रहण करें—बड़ी मुश्किल है।"

गृहिणीको मीठी झिड़की देकर राय महाशयने मुकुन्दरामसे पात्रका परिचय प्राप्त किया। पात्र था, उनके परिचित जमींदार-बाबूका पुत्र योगेश। योगेशको राय महाशयने एक बार देखा भी था। युवक देखने भालनेमें अच्छा था। अब तीनों बड़ी कठिन समस्यामें पड़ गये।

बहुत तर्कोंके बाद रायगृहिणीने कहा—"तुम जितना चाहे कहो, लड़की मेरी है। जो मेरे जीमें आवेगा करूँगी। अपने ग्राममें ही बसन्तके सोनेके महलको छोड़कर लड़की दूर देशमें जाय—यह बात मुझे पसन्द नहीं।"

यह बात मुकुन्दरामको बुरी लगी। उन्होंने जरा कड़ा जवाब दिया। गृहिणी भी हारनेवाली नहीं थी। अन्तमें जब मुकुन्दराम गुस्सा होकर उठने लगे तब नित्यानन्द रायने कहा—"भाई, बसन्त लड़कीको पसन्द कर लेगा,—अभी इसका निश्चय भी तो नहीं है। इस समय दोनों पक्षोंको हाथमें रखना चाहिए। यदि बसन्त गौरीको नापसन्द करे, तो उपेन्द्र बाबूके संग बातचीत पक्की करना ही होगी।"

इस बातको सुनकर सब झगड़ा मिट गया। गृहिणीने भी इस प्रस्तावका समर्थन किया।

३

प्रातःकाल अपने बगीचेसे निकलकर युवक बसन्तकुमार न मालूम क्यों अपने महलकी छतपर टहल रहा है। उसके नौकर या मुंशी कोई भी इस प्रश्नकी मीमांसा नहीं कर सके हैं और सच तो यह है कि बसन्तकुमार स्वयं इसका कारण नहीं जानता है। पीछेकी दीवारकी ओर खड़े होकर उसने मनमें कहा—'नीचेसे यह शोभा नहीं दिखाई देती।' उसके महलकी सीढ़ियोंके आगे हरी घाससे भरा हुआ एक बड़ा मैदान था जिसको देखकर मालूम होता था मानो हरी मखमलका कोमल फर्श बिछा हुआ है। उसके मामाके सामने वहींपर कचहरी लगा करती थी। मैदानके चारों ओर देवदार और सुपारीके वृक्ष लगे हुए थे। मैदानके ठीक बीचमें बहुतसे फूलोंके पौधे लगे हुए थे। सीढ़ियोंके दोनों ओर अप्सराओंकी मूर्तियाँ

बनी हुई थीं और उनके हाथमें एक एक दीपक था। इन सब चीजोंको देखकर वसन्तकुमारने अपने मनमें बहुत आनन्द माना। इस शोभाके देखनेको ही वह ऊपर चढ़नेका कारण समझता था; परन्तु थोड़ी देर बाद उसे यह शोभा भी फीकी मालूम देने लगी। फिर उसने सोचा कि उसका बाग ग्रामके और बागोंके सामने कैसा मालूम होता है—यह देखना चाहिए। इस लिए और बागोंके साथ राय महाशयके बागपर भी उसकी दृष्टि पड़ी। उसे वह बाग पहले तो अच्छा नहीं मालूम हुआ। उसके बाद एक आम्रके वृक्षके नीचे उसकी दृष्टि पड़ी। उसका हृदय धड़क उठा। इस बार उसे अपने ऊपर चढ़नेका कारण मालूम हुआ। उसने मनमें कहा—मैं मनको कितना ही समझाऊँ, पर इसी लोभसे मैं छतपर चढ़ा हूँ। जो हो, कल प्रातःकाल वहाँ जाकर देखूँगा कि लड़कीकी सरलता स्वाभाविक है या नहीं।

वसन्तकुमार बहुत देरतक उस ओर देखता रहा। किशोरी गौरी बकरीको दुह रही थी। कमरमें आँचल बाँधे आमके पेड़के नीचे वह बकरीको दुह रही थी। अपने बच्चेको जिस तरह अकातर मनसे दूध पिलाती है, उसी तरह बकरी गौरीको सन्तोषके साथ दूध दे रही थी। वहींपर एक देशी कुत्ता बैठा हुआ किशोरीके लावण्य भरे मुखकी ओर देख रहा था। गौरीके पास ही उसका छोटा भाई खड़ा था।

गौरी भाईके हाथमें दूधका बर्तन देकर स्वयं चमेलीके पौधेके पास चली गई। चमेलीके पौधेने अपनी शाखाओंसे वह स्थान खूब घेर रक्खा था। गौरीने फूलोंसे अपना अञ्चल भर लिया। कुत्ता उसे अभीतक उसी तरह देख रहा था। उसके बाद गौरी अपने घरकी तरफ चली। वसन्तकुमारको कुछ कुछ दुःख मालूम हुआ। उसी समय उतर कर उसने पत्र लिखा—

" मान्यवरेषु,

कल आपसे जिस विषयमें निवेदन किया था उसी उद्देशसे मैं कल प्रात:काल आपके स्थानपर उपस्थित हूँगा। नमस्कार ग्रहण कीजिएगा।

वशंवद,

श्रीवसन्तकुमार सेन।"

पत्रको नौकरके हाथ राय महाशयके पास भेजकर वसन्तकुमार अपने घरका काम देखनेमें लग गया।

४

गृहिणीने कहा—" तुम समझते नहीं। जो जैसा चाहे उसका वैसा ही सत्कार करना चाहिए। ऐसा न करनेसे बहुत सम्भव है कि गाँववालोंके जैसा हमारा चलन देखकर जमाई बाबू बिगड़ जायँ और बना बनाया काम मट्टी हो जाय।"

राय महाशयने बिगड़ कर कहा—"तुम पागल हो, मैं तुम्हारी यह बात किसी तरह नहीं मान सकता। "

बात कुछ नहीं थी। गृहिणीने देखा था कि वसन्तकुमार उत्कल-बासियोंकी तरह बाल सँवारता है। उसे नहीं मालूम था कि सब तरफसे छोटे, सिरके मध्यभागमें बड़े, और बीचमें माँग निकली हुई—इस तरहके बाल रखना आजकल सभ्यताकी पहचान है। वसन्त-कुमारके बाल देखकर उसने वसन्तकुमारका उत्कलवासियोंकी ओर विशेष पक्षपातित्व समझा था। इसी लिए वह भी अपने पुत्रके वैसे ही बाल कटवानेका प्रस्ताव कर रही थी। परन्तु राय महाशयने इस बातको किसी तरह नहीं माना।

पुत्र कन्या और अपनी पोशाकके विषयमें भी दो एक दिन खूब कलह रहा। वसन्तकुमारके कारण ही उनके घरमें यह अशान्ति पैदा हुई

है और उसीके लिए वे अपनी सजावटकी चिन्तामें हैं, यह सोचकर कुमारी गौरीको वसन्तके ऊपर मन-ही-मन बड़ा क्रोध हुआ। वही क्यों उसके साथ विवाह करने आता है, विवाह होनेके बाद अपने माता पिताको छोड़कर उससे किस तरह वसन्तके घरमें रहा जायगा--गौरीको बहुत सोचने पर भी इन प्रश्नोंका उत्तर नहीं मिला। वसन्तके बाग और उसके महल सदृश बड़े मकानका ध्यान करके गौरीको बड़ी खुशी हुई। उसके बाद उसने वसन्तके मुखका ध्यान किया। उसे उसके चेहरेमें निष्ठुरताका कोई चिह्न नहीं मिला। तब क्यों वह उसके माता पिताको सजावटके लिए इतना दिक कर रहा है? इस समस्याका भोली लड़कीको कोई उत्तर नहीं मिला।

रायदम्पतीने देखा कि बसन्त उनके घरमें आ पहुँचा। उन्होंने अपने पुराने नौकर मधुसूदनको सलाम करनेकी विधि पहलेसे ही बता रक्खी थी। पर मधुसूदन वसन्तको देखकर वह विधि भूल गया और साथ ही नमस्कार तक करना भी उसे याद न रहा। गृहिणीने मन-ही मन बहुत बुरा माना। वसन्तकुमार आकर राय साहबके बड़े घरमें बैठा। राय महाशयके अनभ्यस्त शरीरमें अँगरखा ठीक न होनेसे वसन्तकुमारकी अभ्यर्थना करते समय वह बार बार बाहुसे बाहर आकर विघ्न डालता था।

कहनेकी आवश्यकता नहीं कि इन सब भूलोंके लिए नित्यानंद राय गृहिणीके निकट जिस बुरी तरह तिरस्कृत हुए, उसका प्रत्येक वर्ण वसन्तकुमारके कान तक पहुँच गया। घरकी साधारण शोभाको नष्ट करके रायपरिवारने उच्च श्रेणीकी जो सजावट की थी, वह वसन्तकुमारको जरा भी भली न मालूम हुई। वह ग्राम्य परिवारकी सरलता देखनेके लिए कलकत्तेकी अनेक सुमार्जित सुन्दरियोंको छोड़कर यहाँ विवाह

करनेके लिए आया था। अन्तमें जिस समय सादा चादर ओढ़नेवाले नित्यानन्द राय बे-बटनोंकी कमीज पहन कर झटपट बाहर आये, उस समय वसन्तकुमारने समझा कि जरूर रायमहाशयके दिमागमें कुछ खराबी आगई है। वसन्तकुमार राय-परिवारके जिन सुन्दर बालकोंकी रोज तारीफ करता था, उनको अपने शरीरसे बड़ा लाल कोट पहने देखकर उसे बड़ा आश्चर्य्य हुआ। भद्रताकी खातिर वह ऐसे अनूठे दृश्यको देख कर बड़ी मुश्किलसे अपनी हँसी रोके रहा।

राय-महाशयको चुप देखकर वसन्तकुमारने ही बात शुरू की। उसकी बातके उत्तरका कोई अक्षर भी उसके कानमें नहीं पहुँचा। गृहिणी दर्वाजेके पीछे खड़ी हुई सब कुछ देख रही थी। स्वामीके व्यवहारको देखकर उसका धैर्य्य छूट गया। उसके भीतर रहनेसे जमाई बाबू जरूर उसके हाथसे निकल जायगा, इस भयसे वह फौरन् घरसे बाहर निकल आई। उनको वसन्त पहले कई बार देख चुका था। इसलिए उनको लाल साड़ी पहने देख उसको बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने सोचा कि जिस मोहके हाथसे छुटकारा पानेके लिए वह सरल ग्राम्य ललनाके साथ विवाह करना चाहता था, वह मोह सारे संसारकी स्त्रियोंको घेरे हुए है। यहाँ भी शहरकी विलास-स्पृहा और भोगलालसा पूर्ण मात्रामें विद्यमान है। यदि कोई चीज नहीं है, तो वह शहरकी कमनीयता और सुघराई है। वह अपने स्वप्नके भ्रमको धीरे धीरे समझने लगा।

गृहिणीने कहा—"तुम तो घरके ही लड़के हो। तुम्हारे सामने आनेमें क्या दोष है? हमारे पिता बाल-बच्चोंको घरमें बन्द रखना बिल्कुल पसन्द न करते थे।"

अवश्य, उनके इस तरह आनेमें वसन्तकुमारको कोई आपत्ति नहीं थी । किन्तु गृहिणीने जिस समय हँसी दिलानेवाली पोशाकको पहन कर अनर्गल स्रोतसे बोलना शुरू किया, उस समय वसन्त उनको श्रद्धाकी आँखसे नहीं देख सका । उसने समझा कि उसने बड़ा भारी धोखा खाया है । अन्तमें जब कुमारी गौरी सभामें आई, तब उसने साफ साफ समझ लिया कि उसने अकारण ही अपने कई दिन इस खब्तमें नष्ट किये ।

गौरीके मुखकी वह सरलतापूर्ण मुखश्री, वह कमनीय देहलता, वनदेवीकी तरह सरल स्वच्छन्दताका वह भाव, उसकी माताके आग्रहातिशयसे एक बार ही नष्ट हो गया था । उसके सोनेके रंगवाले अधरों पर लाखका पानी फेरकर राय-गृहिणीने उसके मुखकी सरलताको एक साथ ही नष्ट कर दिया था । उसके खुले हुए केश-दामकी जो शोभा थी, वह बंधनके बाद उसमें नाम मात्रको भी नहीं रह गई थी । इनके सिवा गौरीको चमड़ेके जूतोंने—जिनको पहननेका उसे बिल्कुल अभ्यास नहीं था—बहुत तंग कर दिया था । सबसे बढ़कर लाल कुर्त्ता, पीली साड़ी और माताके ढीले आभूषणोंने मिलकर उसकी अंगश्रीपर डाका डाला था । गौरी भी मन-ही-मन वसन्तपर नाराज थी, क्यों कि उसके लिए ही उसका यह स्वांग बनाया गया था । उसके बाद वसन्तकुमारने कुमारीकी बात सुननेके लिए उससे प्रश्न करने शुरू किये । उधर गौरीकी माताने प्रश्नोंका उत्तर भद्रतापूर्वक देनेके लिए उससे अनुरोध करना आरम्भ किया । गौरी कुछ न बोल सकी । यह देखकर उसकी माता उसपर बहुत बिगड़ी । बेचारी गौरी मुँह फेर रोती हुई वहाँसे भाग गई । उसके इस आचरणसे वसन्तकुमारकी ही मोहनिद्रा टूट गई हो, यह बात नहीं; उसके साथ गृहिणीकी भी लखपती जमाई

पानेकी उच्चाशा, पितृमातृविहीन जामाताके घरपर आधिपत्य करनेकी वासना, ग्रामकी स्त्रियोंमें सर्वोच्च अधिकार प्राप्त करनेकी सुख-कल्पना भी आकाश-कुसुमकी तरह झूठी प्रमाणित हुई।

५

गर्वित मुकुन्दराम विजयी वीरकी तरह बोले—"हमें और क्यों कष्ट देते हो, अब हम इन सब बातोंमें नहीं पड़ सकते।"

गृहिणीने कहा—"अब कुछ विचार नहीं है। जो करना है उसका निश्चय हो गया। जिसके साथ हम मिल नहीं सकते उसके साथ सम्बन्ध कैसा?"

राय महाशय बोले—"सभ्य बननेके लिए मुझे कितना कष्ट उठाना पड़ा! मेरे कंइ दिन और रुपये नष्ट हो गये!"

अन्तमें मुकुन्दरामने उपेन्द्र बाबूके साथ विवाहकी बात पक्की करनेके लिए पत्र लिख दिया। पत्रको बहरामपुर भेजनेका बन्दोबस्त करनेके लिए नित्यानन्द बाहर चले गये।

मुकुन्दने पूछा—"उसने अन्तमें कहा क्या?"

गृहिणीने कहा—"अन्तमें उसने कहा कि हमारे साथ सम्बन्ध करनेसे किसी पक्षको सुख नहीं मिलेगा। हमारे पक्षमें भी यह अच्छा हुआ। मैंने भी उससे अन्तमें कह दिया—'भाई, कभी कभी घरके लड़कोंकी तरह इधर हो जाया करो।' यह बात उसने मान ली। हमसे भी अपने घर आनेके लिए उसने अनुरोध किया। कुछ हो, इस सम्बन्धसे उसके साथ परिचय ही हो गया। यही एक लाभ हुआ समझो।"

इसी समय वसन्तकुमार वायुसेवन करके राय महाशयके स्थानके पास पहुँचा। इन दो दिनोंमें उसके मनमें बड़ी विषम समस्या उठ

खड़ी हुई थी—उसकी कौन धारणा झूठी है । उसने रायकी भूलें देखी थीं; परन्तु उनका कौन भाव सच्चा था और कौन भ्रममूलक था, इसको वह निर्णय नहीं कर सका । रायके मकानके पास आकर उसको उन्हें देखनेकी एक बार और इच्छा हुई । बागमें घुसते ही उसने देखा कि गौरी बड़े स्नेहसे एक हाथपर किसी पक्षीके बच्चेको बिठाये दूसरे हाथमें एक हरी टहनीसे उसी देशी कुत्तेको मार रही है । गौरीको देखकर फिर उसका हृदय हिला, फिर उसने स्वप्नमें मानो वनदेवीके दर्शन किये । वह धीरे धीरे उसके पास जाकर बोला—"यह बुल-बुलका बच्चा है न ?" गौरीने नीची निगाह करके जवाब दिया—"हाँ, बेचारेको बड़ा डर लग रहा है ।"

सुन्दरीने बड़े स्नेहसे उसके परोंको कई बार चूमा । उसके स्नेहोद्भासित सुन्दर मुखने युवक वसन्तको पागल कर दिया—उसने धीरे धीरे हाथ बढ़ाकर कहा—"जरा मैं भी तुम्हारे पक्षीको देखूँ ।"

इस बार सुन्दरीने मुँह उठाकर वसन्तकुमारको पहचाना । लज्जासे उसका मुँह लाल पड़ गया । वह वहाँसे एक साथ भाग भी न सकी—किंकर्त्तव्यविमूढ़ हुई वहीं नीचेको मुँह करके खड़ी रही ।

वसन्तने कहा—"तुम फूलोंको प्यार करती हो ? हमारे बागमें हजारों फूल हैं ! तुम्हें पक्षी भले मालूम होते हैं ! मैं कलकत्तेसे तुम्हारे लिए सैकड़ों पक्षी मँगा दूँगा । मैंने बड़ी भूल की, मुझे क्षमा कर दो ।"

इसी समय पत्र भेजकर नित्यानन्द राय वहाँ आ पहुँचे । वे उनको वहाँ इस अवस्थामें देखकर बहुत विस्मित हुए ।

६

गृहिणीने कहा—"यह क्या बात हुई ! लड़का निरा पागल है क्या ?"
मुकुन्दने चुप चाप सब बातें सुनीं, कुछ उत्तर नहीं दिया ।

रायमहाशय बोले—“ दोनों एक साथ खड़े कैसे भले मालूम होते थे, तुमसे क्या कहूँ । तुम्हारा लाल कुर्त्ता देख कर वसन्त बिगड़ गया था । अब हमारा सीधा सादा चलन देखकर उसकी फिर हमारे ऊपर वही श्रद्धा उत्पन्न हो गई है । हमसे उसने उसके लिए क्षमा प्रार्थना की है । ”

गृहिणीने कहा—“ मैं दो जमाइयोंका क्या करूँगी ? इस समय-तक तो चिट्ठी पहुँच गई होगी । ”

इनकी बातके समाप्त होनेसे पहले ही पत्रवाहकने घरमें प्रवेश किया । उसको देखकर तीनों आदमी मस्तकपर हाथ रखकर सोचने लगे ।

पत्रवाहक बोला—“हजूर माफ कीजिए, मेरा कोई दोष नहीं है । ”

नित्यानन्दने कहा—“ अरे तेरा क्या दोष है, हमारे भाग्यका दोष है । एक जगह तो बात बिगड़ेगी ही—बड़ी लज्जाकी बात है । ”

मुकुन्दरामने कहा—“ तू इतने समयमें नौ कोस रास्ता किस तरह चल आया ? ”

पत्रवाहक बोला—“ बाबू, मैं अभी गया ही कहाँ हूँ । ”

मुकुन्दरामने कहा—“ तब चिट्ठी कहाँ दे आया ? ”

पत्रवाहक बोला—“ हजूर क्या कहूँ, बड़ी गलती हो गई । ज्यों ही मैं नौकापर चढ़ा, त्यों ही मेरे हाथसे वह चिट्ठी जलमें गिर पड़ी । ”

नित्यानन्दने झटपट पूछा—“ तब चिट्ठी वहाँ पहुँची नहीं ? ”

भीत पत्रवाहक उनके चरणको छूकर बोला—“ जी नहीं । अब मुझसे भूल नहीं होगी । मैं अभी जाता हूँ, आप चिट्ठी लिख दीजिए । ”

राय महाशयसे तिरस्कारके बदले एक रुपया इनाम पाकर पत्र-वाहक बहुत विस्मित हुआ ।

पासके घरमें बैठी हुई गौरी सब बातें सुन रही थी। उसने जब सुना कि उसका विवाह वसन्तके साथ होगा तब उसने मन-ही-मन कहा—"बागमें बहुत फूल हैं, कलकत्तेसे अनेक पक्षी ला देंगे, बातें भी बड़ी मीठी हैं, चेहरा अच्छा है,—नाम भी—"

इसी समय उसकी माताने आकर उसको गोदमें उठा लिया और उसके मुँहको चूमा। इसके बाद रायगृहिणीने उसके लिए जो लाल कुर्त्ता और जूता मँगाया था उसको ग्राम्यनदीको भेंट कर दिया।

जिस समय उसकी माता नदीमें फेंकनेके लिए कुर्त्ते और जूतोंकी पोटली बाँध रही थी, उस समय गौरीने भी उसको इस काममें यथा-साध्य सहायता दी थी।

शब्द-विभ्राट् ।

बाल्यकालके बन्धुत्वके बन्धनको और दृढ़ करनेके लिए सेन साहब अपनी स्नेहपालिता दोनों कन्याओं—रुणू और झुणूको—बसु महाशयके दोनों पुत्रों—नलिन और पुलिन—को समर्पण करना चाहते हैं। इन दोनों परिवारोंमें खूब बन्धुत्व था, इसी लिए इस सम्बन्धके लिए सभी लोग इन साहबी ठाठके परिवारोंकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे। कुल, शील, मान, मर्यादा आदि सभी बातोंमें ये दोनों परिवार कलकत्तेमें वलायतसे लौटे हुए बंगालियोंके समभावसे सम्मानित होते थे और उनकी दोनों कन्या मिस हेमलता सेन उर्फ रुणू और मिस कनकलता सेन उर्फ झुणू अपनी शिक्षा, विनय, सौन्दर्य्य और निष्कपटताके कारण समाजमें सबकी प्यारी थीं। मिस रुणू सेन उच्च शिक्षिता थीं और कलाविद्यामें अपनी उम्रकी मिसोंके हृदयमें ईर्षाग्नि प्रज्वलित करती थीं। मिस झुणू सेन उतनी शिक्षिता न होनेपर भी कवितारचनामें वलायतसे लौटे हुए धनवान् परिवारोंमें सबसे अधिक अभ्यास रखती थीं। मि० नलिन बसु कलकत्ता विश्वविद्यालयकी एफ० ए० परीक्षामें दो बार अनुत्तीर्ण होकर वलायतमें तीन वर्ष रहकर बैरिस्टर बन आये हैं और अब उनकी बड़े विद्वानोंमें गिनती है। मि० पुलिन बसु कलकत्ता विश्वविद्यालयकी एम० ए० परीक्षा पास करके वलायतकी बी० ए० परीक्षा भी पास कर चुके हैं और अब प्रोफेसरी करते हैं। बाल्यसखा डाक्टर सेन साहब और मिस्टर बसु साहब, गुप्त साहब, रायसाहब आदि कई एक साहबोंके साथ चुरुट पीते पीते

अपने पुत्र और कन्याके विवाहसम्बन्धको स्थिर करनेके लिए बैठे हैं। पुलिन प्रकृत विद्वान्, विश्वविद्यालयका उपाधिधारी था, इसलिए उसके साथ झुणूका विवाह स्थिर हुआ। क्योंकि झुणूने इंट्रेन्स भी पास नहीं किया था! और रुणू बी० ए० तक पढ़ी थी इस लिए उसके साथ नलिनका विवाह होगा—यह निश्चय हुआ। जोड़में दोनोंकी विद्या मिलकर समान हो जाय—इसी तत्त्वपर उनका सम्बन्ध स्थिर किया गया। जब सब बात पक्की हो गई तब गुप्त साहबने अवश्यम्भावी दम्पतियोंके स्वास्थ्यका पात्र कुछ अधिक मात्रामें पानकरके कहा—"हुर्रे! हमार विचार खूब ठीक हुआ है, महाकवि टेनिसनने भी कहा है—

"Seeing either sex alone
Is half itself, and in true marriage lies,
Nor equal, nor unequal; each fulfils,
Defect in each, and always thought thought,
Purpose in purpose, will in will they grow,
The single pure and perfect animal,
The two-cell'd, heart beating, with one full
stroke Life."

२

सुखके दिनकी अपेक्षा सुखके समयकी प्रतीक्षा बड़ी मधुर होती है। शारदीय पूजाके तीन दिनोंकी प्रतीक्षा बालकोंके लिए बड़ी उत्तेजक होती है। विवाहके दिनकी प्रतीक्षा भी वैसी ही मधुर होती है—विशेषकर उस समाजमें जहाँ भावी दम्पती विवाहसे पहले परस्परमें सख्य स्थापन करनेका अवसर पाते हैं। उस समाजमें कोर्टशिपकी अवस्था इतनी सुखकर और उत्तेजक होती है कि उसे कुसंस्कारग्रस्त पाठक पाठिका भी जान सकते हैं।

झम झम झम झम पानी बरस रहा है। घरसे निकलनेका कोई उपाय न देखकर प्रेमिक प्रेमिकाका अधीर हृदय किसी तरह धैर्य नहीं रख सकता। विरहकातर पुलिनने झटपट टेलिफोनके कमरेमें पहुँचकर दर्वाजा बन्द कर लिया और सेन साहबके टेलिफोनके साथ अपना टेलिफोन जोड़ देनेके लिए घंटी बजाई। घंटीका प्रतिशब्द सुनाई दिया। चोंगेको कानमें लगाकर पुलिनने पूछा—“कौन?”

उत्तर मिला—“रुणू।”

अधीर पुलिनचन्द्रने विरक्त होकर चोंगेको कानसे हटा लिया और वह स्वयं कुरसीपर बैठ गया। उधर वास्तवमें भी झुणू ही टेलिफोन घरमें आई थी। उसने बड़े मीठे स्वरमें अपना नाम कहा था, किन्तु पुलिनने उसको रुणू समझा। अभिमानिनी झुणूको यह बात मालूम न थी, इसलिए उसके नामको सुनकर जब पुलिनने विरक्त होकर कुछ उत्तर नहीं दिया तब उसको बड़ी व्यथा पहुँची। थोड़ी देर बाद उसने अपने आपको ही दोषी ठहराकर मन-ही-मन कहा कि शायद वहाँ कोई और आदमी मालूम होता है। इसलिए उसने फिर घंटी बजाई। पुलिनने बड़ी विरक्तिके साथ पूछा—“कौन?” उसने पूछा—“आप कौन?”

“पुलिन बसु।”

युवतीका हृदय अभिमानसे भर गया। उसने सोचा तब तो उसका सन्देह ठीक ही है। वास्तवमें मैं कुछ 'पास' नहीं हूँ, इस कारण पुलिन उपेक्षा करता है। तो क्या उसका दूसरा सन्देह भी ठीक है! यह बात सोचते ही उसके गाल लाल पड़ गये। उसने सोचा, जाँचनेमें क्या हर्ज है? पुलिनने अब दोबारा पूछा—“कौन?” तब उसने कहा—“झुणू।”

प्रेमिक पुलिनने इस बार कण्ठ स्वरको कुछ कुछ पहचाना, इसलिए उसने सुना--" झुणू।"

आनन्दित मनसे उसने कहा--" घरमें और कोई है ?"

" ना।"

पुलिनने लम्बी साँस लेकर कहा--"आः! प्रियतमे, तुम्हारे साथ--"

युवती और अधिक न सुन सकी। उसके हाथ काँपने लगे। उसके कान तक फैले हुए नेत्र आँसुओंसे भर गये। छिः छिः कैसा अपमान है! कैसी घृणा है! पृथ्वी भी कैसी बुरी जगह है!

फिर झुणूको सन्देह हुआ। उसने कहा यह नहीं हो सकता। सुननेमें जरूर भूल हुई है। उसने फिर पूछा--" क्या कहा ?"

पुलिन अपनी इतनी बड़ी और आवेगमयी वक्तृताको निष्फल देखकर मन-ही-मन बड़ा दुःखी हुआ और उसने टेलिफोनके बक्सके पास मुँह ले जाकर कहा--"प्रि-य-त-मे-डार-लिंग झुनू क-द-र्य्य-" युवतीसे आगे न सुना गया। वह टेलिफोनका चोंगा छोड़कर घरमें चली गई और घरके कोनेमें बैठकर रोने लगी। पुलिन सुशिक्षित है, बुद्धिमान् है, सुन्दर है--युवती इस बातको खूब जानती थी। पर इतना नीच भी है, इतना निष्ठुर और पाखण्डी भी है, यह बात उसे मालूम नहीं थी। बहनके लिए प्रियतमे, डार्लिंग आदि कहकर भी उसे सन्तोष नहीं मिला और उसने मुझे गाली तक दी--मुझको 'झुनू कदर्य्य' कहा--ओः! कैसा भयंकर आदमी है।

उसकी प्रेममयी मिस कनकलताने टेलिफोनका चोंगा कानसे हटा लिया है, इस बातकी पुलिनको खबर नहीं थी। इसलिए वह कहे गया--" प्रियतमे, डार्लिंग झुनू, कदर्य्य वृष्टिके मारे तुम्हारे स्थान पर

जाकर तुम्हारा दर्शन न कर सका। यह कुछ कम दुःखकी बात नहीं है। क्षमा करना। कल निश्चय आऊँगा।"

पुलिन चुप हुआ। इस बार भी कोई उत्तर नहीं मिला। उसने समझा लज्जाके कारण प्रणयिनी झुनू कुछ उत्तर नहीं दे सकी। भाषामें उन्मादकताकी मात्रा खूब थी। पास होने पर वह ऐसी नाटकीय भाषामें बात नहीं कर सकता था। पर टेलिफोन और पत्रकी बात दूसरी है। इस बीचमें अभिमानी झुणूने सोचा कि यह नारकीय व्यवहार कहाँ तक बढ़ सकता है—देखना चाहिए। इसलिए उसने धीरे धीरे उठकर टेलिफोनके पास जाकर कहा—"हाँ।"

उत्तर मिला—"इतनी बड़ी बातका इतना छोटा उत्तर। तुम बड़ी कपटिन हो। क्या तुम्हारे पिता मकान पर हैं? प्रियतमे, रुणू क्या—"

इस बार युवतीने साफ साफ सुना "प्रियतमे, रुणू—।" उसने टेलीफोनका चोंगा फेंक दिया और वह पलंगपर जा पड़ी।

पुलिन कहे चला गया—"—रुणू क्या जानती नहीं है कि आज भाई कलकत्तेमें नहीं हैं?"

पुलिन चुप हुआ। जब कोई उत्तर नहीं आया तब कहा—"झुणू प्रियतमे!" इस बार भी कोई जवाब नहीं मिला। उसने फिर घंटी बजाई।

ठीक इसी समय उड़िया खानसामा श्रीधर वहाँ आ गया। वह कभी कभी टेलीफोन करनेवालेका नाम पूछकर मालिकको खबर दिया करता था। उसने घंटी बजाई। पुलिनने कहा—"प्रियतमे!"

"श्रीधर।"

प्रेमान्ध पुलिनके कानमें स्वर कुछ कठोर प्रतीत हुआ। इसलिए उसने जरा जोरसे कहा—"प्रियतमे।"

श्रीधर बातको ठीक तरह न समझकर बोला--" प्रिय बाबू कोठी पर हैं ।"

पुलिनकी मानों नींद टूटी । उसने समझा कि प्रियतमा चली गई है । कोई बहरा खड़ा है । झुणू क्यों नाराज हो गई, वह इसका ठीक ठीक कारण निश्चय नहीं कर सका, इसी लिए चिन्तित होकर दूसरे कमरेमें चला गया ।

३

घड़ीने पाँच बजाये । उस समय तक मानसिक संग्राम बराबर चल रहा था । कनकलताने स्थिर किया कि मामला साफ कर लेना चाहिए । उसने विचारा, देखूँ तो सही पुलिन अपने बुरे व्यवहारके लिए क्या बहाना बनाता है । पर उसके मनके भीतरी भागमेंसे कोई कह रहा था कि ऐसे कपटीका मुँह भी नहीं देखना चाहिए । ठीक इसी समय बरामदेमें गाड़ी आकर खड़ी हुई । युवतीका हृदय बड़े ज़ोरसे धड़कने लगा । इच्छा न होने पर भी काँपते हुए शरीरसे उठकर खिड़कीसे कनकने देखा कि उसकी माकी गाड़ी है । उसके हृदयका कम्पन रुक गया । उसने स्थिर किया कि वह माताके साथ वायुसेवन करने जायगी । पुलिमसे मुलाकात न करेगी ।

गाड़ीके पास अपनी कन्याको खड़ी देखकर मिस सेनने कहा--" झुणू, कैसी तबीअत है ?"

कन्याने बड़े आवेगसे कहा,--" मा, आज मैं आपके साथ वायु-सेवन करने जाऊँगी । तबीअत अच्छी नहीं है ।"

जननीने बड़े स्नेहसे कन्याके कन्धेपर हाथ रखकर कहा--"क्यों झुणू, पुलिनसे मिलनेके लिए तुम्हें मकानपर न रहना चाहिए? वह आयेगा, सुकुमारको लेकर उसके साथ हवा खाने चली जाना।"

मिस कनकलता इस बातपर कुछ भी ध्यान न देकर धीरे धीरे गाड़ीपर चढ़ गई। उसकी माताको निश्चय हो गया कि भावी जामाताके साथ कन्याकी कुछ अनबन हो गई है। मिसेस सेनको अपने अतीत जीवनकी अनेक घटनाओंका स्मरण हो आया, उसके मानस-चक्षुके सम्मने अनेक मधुर चित्र खिंच गये। इन्हीं कारणोंसे उसके ओठोंपर अस्फुट हँसीके चिह्न प्रकट हो गये। वह कुछ न कह कर गाड़ीमें सवार हो गई।

युवती कनकलताके दृष्टिपथमें अनेक चित्र पड़ने लगे। अनेक घर, बाग बगीचे और सजे हुए स्थानोंको मोटर गाड़ी पीछे छोड़ने लगी। भगवती भागीरथीके पवित्र तटपर मोटर बड़ी तेजीसे आगे बढ़ने लगी। पर इन सब चीजोंको देखकर कनकलताके हृदयमें विषादहीकी वृद्धि हुई। विलायतके बड़े बड़े जहाज गङ्गाके बीचमें खड़े हुए भारतीय सुन्दरीको देख रहे थे, किन्तु सुन्दरी कनकलताने आज उधरको दृक्पात भी नहीं किया। ईडन-उद्यानकी सङ्गीतसुधा कनकलताको हमेशा बहुत भली मालूम होती थी, किन्तु आज उसने कनकलताके चित्तको जरा भी आकर्षित नहीं किया। वह चुपचाप माताके पास बैठी रही।

घर आते ही उसने अपने कमरेमें भाई सुकुमारको बुलाया।

सुकुमारने पूछा—"छोटी बहिन, क्या कहती हो?"

कुछ इधर उधर करके उसने कहा—"यहाँ कोई आया तो नहीं था?

सुकुमारने कहा—"मि० पुलिन बसु आये थे। बड़ी बहिनने बहुतसे गीत गाये थे, उनको सुनकर पुलिन बाबू कहने लगे कि उसकी (बड़ी बहिनकी) तरह कोई नहीं गा सकता।"

कनकलताने अपने हाथमें एक पुस्तक ले रक्खी थी। उसके हाथ काँप रहे थे। उसने अन्यमनस्क होकर पूछा—"कौन आया था?"

भाईने बहिनका हाथ पकड़कर ऊँची आवाजमें साफ साफ बता दिया—" पुलिन बसु, पुलिन बसु । "

अब कनकलताको कुछ सन्देह न रहा । वह पलंगपर लेट कर दुखियोंकी तरह रोने लगी ।

४

टन् टन् टन् टन् । सुकुमार दौड़कर टेलिफोनके पास पहुँचा । उसने पूछा—"कौन ?"

उत्तर आया—" तुम्हीं बताओ कौन हो ? "

" मैं सुकुमार हूँ । "

" अपनी बड़ी बहिनको बुला दो । "

सुकुमार कुछ स्थिर होकर बड़ी बहिनको बुलाने गया । हेमलताके आनेपर नलिनने कहा—" कौन ? "

" मनुष्य हूँ । "

" मैं देवता हूँ । "

हेमलताने जान लिया कि टेलिफोनके उस तरफ उसका भावी स्वामी है । उसने कहा—" उप नहीं ? "

फिर आवाज आई—" बताओ कौन हो ? "

हेमलताने कहा—" तुम किसको बुलाते हो ? "

" हेमलताको—रुणूको । "

" हाजिर है, कहिए आप कौन हैं ? "

"पुलिन ।" नलिनने दिल्लगीके लिए अपना नाम छिपाकर बताया —"पुलिन ।" पर हेमलताने भूलसे सुना " नलिन । " उसने कहा-"तब ठीक है, मैं समझी कहीं किसी पागलके हाथ न पड़ गई हूँ । "

नलिनके गाल लाल हो गये। तो क्या उसकी स्त्री उसके पास विश्वविद्यालयकी उपाधि न होनेसे उसके भाईसे प्रेम करती है! ओफ्, स्त्रीका चरित्र भी कितना भीषण है!

दो एक बातोंके बाद ही रुणूने जान लिया कि नलिनकी बातें कुछ रूखीसी हो रही हैं। इस लिए उसने बात बदलनेके लिए कहा-"भाई कहाँ है?" नलिनने अपने सम्बन्धमें इस प्रश्नको समझकर, मनके भाव न छिपा सकनेके जारण बड़े रूखेपनसे कहा-"कुछ डर नहीं है, वह मकानपर नहीं है।"

हेमलता उत्तरको ठीक न समझ कर बोली-"भय किसका है, मैं किसीका भय नहीं करती।"

नलिनने विरक्त होकर टेलिफोनका चोंगा छोड़ दिया और वह अपने कमरेमें जाकर समस्त स्त्रीजातिके सम्बन्धमें अँगरेजीमें शपथ करने लगा और साथ ही विलायती सुधाका पान कर मनकी ज्वालाको शान्त करनेकी चेष्टा करने लगा।

५

विवाहमें सिर्फ तीन सप्ताह बाकी हैं। अपनी कन्याओंके साथ भावी जामाताओंका प्रेम दिन दिन बढ़नेकी बजाय घटता देखकर मिसेज सेन बहुत चिन्तित हैं। पहले तो उनकी बातको मि० सेनने हँसीमें उड़ा दिया, पर जब एक सप्ताह तक एक दिन भी नलिन और पुलिन, सेन महाशयके स्थानपर नहीं आये, तब उनको भी चिन्ता हुई। अपनी स्नेहकी कन्याओंका मुखपद्म दिन दिन मुर्झाता हुआ देखकर उनको सचमुच बड़ा दुःख हुआ। इसी लिए वे रविवारके दिन दो पहरके समय सपरिवार मि० वसु महाशयके स्थानपर पहुँचे।

बसुसाहब और उनकी स्त्रीने अपने पुत्रोंके भावको लक्ष्य कर लिया था। इस लिए सेन-परिवारकी बात सुनकर बसु परिवारने भी अपनी उद्विग्नताका परिचय दिया।

सेनगृहिणीने कहा—" मैं एक और विशेषभावको लक्ष्य कर रही हूँ। दोनों लड़कियोंकी अवस्था समान है; किन्तु आपसमें बिलकुल सहानुभूति नहीं है। दोनोंमें, कहना चाहिए कि बातचीत होती ही नहीं। रुणूके ऊपर झुणूके विद्वेषकी मात्रा कुछ ज्यादा है।"

मिसेज बसुने कहा—" हाँ, मैं भी अपने पुत्रोंमें इसी तरहके विद्वेषके भावको देखती हूँ। फिर भी इनमें बड़ेका छोटेपर विद्वेष अधिक माळूम पड़ता है।"

विषय बड़ा गुरुतर है। माता पिताके द्वारा इसकी मीमांसा भी नहीं हो सकती। अनेक तरहकी सुयुक्ति कुयुक्ति और अयुक्तियोंका विचार करके अन्तमें निश्चय हुआ कि युवक रायसाहबके द्वारा वे पुत्र-कन्याके मनोभावको जाननेकी चेष्टा करेंगे। विज्ञान राय नलिन और पुलिन दोनोंका मित्र है और उसकी पत्नी क्षणप्रभा राय रुणू और झुणूकी बाल्यसखी है। इसलिए यह गुरुभार इस युवकदम्पतीके ऊपर रक्खा गया।

६

नलिनने कहा—" मैंने अपने कानोंसे सुना है।"

विज्ञान रायने कहा—" बताओ क्या सुना है?"

बात सुनकर उसे आश्चर्य हुआ। एक साथ मित्रकी धारणाके विरुद्ध भी वह अपनी सम्मति न दे सका और अपनी धारणाको भी उसने बिलकुल सच्ची नहीं माना।

नलिनने कहा—"भाई, क्या कहूँ, मुझे पहलेसे ही थोड़ा थोड़ा सन्देह हो गया था, पर जब अपने कानोंसे ही सुन लिया तब तो अविश्वास करनेकी कोई बात ही नहीं रही।"

अपने कानसे किस तरह सुना, यह बात जाननेको विज्ञानचन्द्र बहुत उद्विग्न हुए, इसलिए नलिनको उससे टेलिफोनकी सभी बातें कहनी पड़ीं।

रात्रिको भोजन करके राय-दम्पती सजे हुए कमरेमें बढ़िया पलंग-पर लेटे हुए बातें कर रहे हैं।

क्षणप्रभाने कहा—"उसने जो बात कही है वह मुँहपर लाने योग्य भी नहीं है। या तो झुणू पागल हो गई है या कुछ भूल हुई है।"

विज्ञानने कहा—"ठीक ऐसी ही पागलपनकी बात मैंने नलिनसे भी सुनी है।"

उन्होंने अपनी अपनी जाँचकी रिपोर्ट सुनाई। सब सुनकर विज्ञानने मुस्कराते हुए कहा—"देखो, विवाह तो पक्का हो गया है। यदि उनकी बातें सच हैं, तो रुणू और पुलिनमें जरूर प्रेम हो गया है। इसलिए उन दोनोंका विवाह कर देना चाहिए। और यदि झुणू और नलिन राजी हों तो उनका विवाह भी कर देना चाहिए। ऐसा करनेसे सिर्फ पात्र-पात्रीमें थोड़ासा फेरफार करना पड़ेगा, विवाहका बंदोबस्त वैसा ही रहेगा।

७

भावी दम्पतियोंके अभिमानका प्रकृत कारण मालूम हो जाने पर भाइयोंकी भ्रान्त धारणा दूर करनेके लिए रायदम्पतीने एक बढ़िया उपाय निकाला। एक दिन विज्ञानने टेलिफोन द्वारा नलिनको और

क्षणप्रभाने झुणूको सान्ध्य भोजनके लिए निमन्त्रित किया। नलिनके आनेपर उसके साथ बातचीत करके विज्ञानने कहा—"तुमने अपने भाईकी बात देखी?"

नलिनने ठीक न समझकर कहा--"क्या?"

विज्ञानने कहा--"भाई, तुम तो अपनी इच्छासे घूमते हुए आगये, पर उनको निमंत्रण दिया तो भी उन्होंने आनेकी कृपा नहीं की।"

नलिनने झेंपकर कहा—"आपने उनको कब निमंत्रण दिया था?"

"कल शामको, उसी समय टेलिफोन किया था और उन्होंने उत्तरमें कहा था—All right thank you"

यह बात नलिनने स्वयं कही थी। इसलिए उसने समझा कि टेलिफोनके शब्दमें नामकी गड़बड़ हो गई। उसने लज्जासे कुछ न कहा। उसके मनमें सन्देह हो गया कि टेलिफोनके शब्दोंके ऊपर निर्भर होकर कोई काम करना ठीक नहीं है। उससे उस दिन लज्जाके मारे भोजन भी न किया गया। उसने घर जाकर पुलिनको भेज दिया। जठरानल और अभिमानानल दोनोंने मिलकर उसके तन-मनको एक साथ झुलसाना शुरू कर दिया।

गाढ़ी मित्रता होनेपर भी मि० विज्ञान राय पुलिनसे जो कुछ उसके विषयमें मालूम हुआ था--साफ साफ न कह सका। उसने बड़े धैर्य्यके साथ थोड़ा थोड़ा करके इस विषयको कहना शुरू किया।

विज्ञानने कहा—"देखो, हमारा विश्वास है कि स्त्री और स्वामीकी अवस्था समान होना चाहिए, अर्थात् शिक्षिता स्त्रीका शिक्षित स्वामी और अर्द्ध शिक्षिताका अर्द्ध शिक्षित स्वामी।"

पुलिनने कहा--"विज्ञान क्षमा करो भाई, क्या इसके सिवाय और किसी बातकी चर्चा नहीं की जा सकती?"

विज्ञानने कहा–"क्यों ? क्या यह बात कुछ बुरी है ? तुम्हारा भी शायद यही मत है । "

पुलिनने कहा–" हमारा मत सुनना चाहते हो ? हमारी रायमें बुद्धिमानको विवाह ही नहीं करना चाहिए । स्त्री कितनी ही शिक्षिता क्यों न हो, वह भाव प्रवण जरूर ही होगी । तुम्हारे विषयमें अनेक तरहकी कल्पना करके तुम्हें दुःख देगी ही । क्षमा करना । क्षणप्रभा निस्सन्देह निष्कपट स्त्री है । "

विज्ञानने हँसकर उतर दिया–"Thank you, किन्तु मैं क्या कहता हूँ उसपर भी ध्यान दिया ? मैं कहता हूँ, सेन-बालिकाओंमें रुणू क्या झुणूसे अधिक चित्ताकर्षक नहीं है ? "

पुलिनने कहा–" भाई, उनकी बात छोड़ दो । मालूम होता है वे दोनों एकसी हैं । क्यों कि दादाकी अवस्था भी तो मेरे ही समान है । पर फिर भी यदि प्रसंगवश कहा जाय, तो हममें (between ourselves) रुणू अपनेको बहुत समझती है और अपनी विद्याके विषयमें उसकी ऊँची धारणा है ।

" एक बात कहता हूँ, क्रोध मत करना । "

" क्या ? "

" पहले स्वीकार करो । "

कई दिनोंके विवादके बाद प्रोफेसर पुलिन बसुको आज बन्धु-सहवास बड़ा अच्छा मालूम हुआ । उसने स्वीकार कर लिया । विज्ञानने बड़ी मुलायमीसे वह भयङ्कर विषय आधा बातोंसे और आधा इशारोंसे उसको बता दिया ।

ऐसी बुरी बातको सुनकर पुलिनका चेहरा सुर्ख पड़ गया । उसने कहा–" ओः कैसी असम्भव (absurd) बात है । छिः !

छि:! इसी लिए यदि मिस सेन मुझसे नाराज हैं, तो मैं कभी विवाह नहीं करूँगा ; वे मुझे इतना नीच समझती हैं ? ”

ठीक इसी समय श्रीमती क्षणप्रभा राय कुमारी हेमलतासे जिरह-कर रही थीं। झुणूने भी इसी तरह भूखी अवस्थामें घर जाकर बहिनको भेज दिया था। स्त्रियोंके उस मन्त्रणा-घरमें किसीको प्रवेश करनेका अधिकार न होने पर भी मि० विज्ञान रायने वहाँ जाकर सुना था कि उसपर इस तरहका सन्देह करनेके लिए कुमारी रुणू अत्यन्त क्रुद्ध हुई थी और यह भी कहा था कि कुछ ही हो, वह नलिनके साथ विवाह करके उसके चरित्रके लिए उससे अनुताप करायेंगी।

दोनों दम्पतीके विवाहके दिन इकट्ठे हुए सैकड़ों नरनारियोंमें मि० विज्ञान राय और उनकी पत्नीके सिवा टेलिफोनके शब्द-विभ्राट्‌की कथा किसीको मालूम न थी। वधू और वरका अभिनन्दन करते हुए विज्ञान और क्षणप्रभाने उनके कानोंमें जो कुछ कहा, उससे उनके मुँहका भाव बिलकुल बदल गया। उन्होंने उनको दो उपदेश दिये। पहला—यदि प्रेम करना तो मुँह दर मुँह करना, टेलिफोन-द्वारा अभ्रान्त प्रेमका होना असम्भव है। दूसरा—भूखी अवस्था ही भ्रमसंशोधनका बढ़िया अवसर है।

स्वामीजी।

१

स्वामीजी बोले—" कलकत्ता क्यों जाना चाहते हो? "

मैंने कहा—"महाराज, लोग कहते हैं—' भाग्यवान्की स्त्री मरती है। ' पर मेरी स्त्रीके मर जानेसे तो मुझे बड़ी ही विपत्तियोंमें फँसना पड़ा है। अब बिना कलकत्ते गये पेट भरना मुश्किल है।"

शान्त और गम्भीर भावसे स्वामीजीने पूछा—" क्यों? "

" महाराज स्त्रीका वियोग तो शोकप्रद घटना है, यह बात सभी जानते हैं, किन्तु मुझ जैसे घर-जमाईके लिए तो स्त्रीका वियोग शोक और अन्नचिन्ता दोनोंहीका देनेवाला है। जब मैंने देखा कि ससुरके घर रहना ठीक नहीं है, उसी समय मैं ईश्वरका नाम लेकर वहाँसे निकल पड़ा हूँ। कलकत्ते तक पहुँचनेके लिए भगवान् कुछ न कुछ सुविधा कर ही देंगे। "

स्वामीजीने कुछ सोचकर कहा—" तुम्हारे पितृकुलमें क्या कोई नहीं है? "

मैंने कहा—" महाराज पितृकुलमें कोई होता, तो ससुर-घरमें निवास कभी नहीं करता। आप तो साधु पुरुष हैं, सभी कुछ जानते हैं।"

बातें करते करते हम ग्रामके बाहर पहुँच गये। सूर्यनारायण पश्चिम दिशाके पल्लेमें मुँह छिपानेकी चेष्टा कर रहे थे। ग्वालेका एक लड़का इधर उधर दौड़ती हुई गौओंको एक स्थानपर इकट्ठा कर रहा था, पर बेचारेकी चेष्टा बार बार बेकार जा रही थी।

स्वामीजीने कहा—" हमारे देशके नेता जब हमारी जातियोंको इकट्ठा करनेकी चेष्टा करते हैं, तब भी यही दशा होती है। "

मैं ग्राममें रहता था। इसी लिए गो-जातिके साथ हमारे देशवासियोंका इतना घनिष्ठ सम्बन्ध हो सकता है, इस प्रकारके सन्देहने मेरे मनमें कभी स्थान भी न पाया था। इस कूट गवेषणामें प्रवृत्त न होकर मैंने स्वामीजीसे कहा—"ऐसा ही होता होगा। अब रात्रि हो गई, इस लिए आगे बढ़ना उचित नहीं मालूम होता।"

स्वामीजीने कहा—"परिव्राजकके लिए विश्राम करनेके लिए किसी स्थानकी क्या जरूरत है?"

मैंने कहा—"आप परिव्राजक हैं, पर मुझे इस तरह देशभ्रमण करनेका अभ्यास नहीं है।"

स्वामीजीने मेरी ओर देखकर कहा—"क्यों साधु-जीवनमें क्या कोई आकर्षण शक्ति नहीं है? थोड़े दिनोंके लिए साधु बनकर इस जीवनका भी आनन्द क्यों नहीं देखते?"

मेरे शोकभरे उदास प्राणोंमें स्वामीजीकी बातने मंत्र जैसा प्रभाव डाला। एक महीनेसे जिस चीजकी तलाश थी, कल्याणपुरके बाहर शान्त सान्ध्यसमयमें वही मिल गई। समुद्रकी तरंगोंमें पड़े हुए प्राणीके लिए जिस तरह समुद्रका किनारा देखकर शान्ति मिल जाती है, मुझे भी युवक संन्यासीकी बातसे अपने जीवनमें एक नया विश्रामस्थल दिखाई दिया। मैंने सोचा कि अच्छे मुहूर्तमें स्वामीजीसे साक्षात्कार हुआ है। मेरी भलाईके लिए ही भगवान्‌ने इनको मेरे जीवनपथमें भेजा है।

२

संन्यास ग्रहण करनेके दो मास बाद ही मुझे मालूम हो गया कि इस जीवनमें भी अनेक तकलीफें हैं। तो भी इस जीवनमें कोई विशेष

पाबन्दी न थी। मुझ जैसे नवीन साधुके जीवनमें कोई उच्चाभिलाषा भी नहीं थी। जो असली संन्यासी हैं उनकी बात मुझे मालूम नहीं। सिर्फ इतनी बात मैं जान सका था कि मेरे साथी और दीक्षा-गुरु नरोत्तम स्वामी धूर्त न होनेपर भी प्रकृत संन्यासी नहीं हैं। हम लोग सिर्फ गेरुए वस्त्र पहननेवाले उद्देशहीन परिव्राजक थे।

मैंने अपने गुरुके विषयमें और भी अनेक बातें मालूम की थीं। समाजमें रहकर जिन बातोंका जानना मुश्किल है, संन्यास लेकर उन बातोंको भी मैं जान सका था।

हम लोग जिन कारणोंसे भले गृहस्थोंके घर आश्रय नहीं पाते थे, उन सबका ब्योरेवार वर्णन देना बहुत मुश्किल है। कोई अपने लड़केकी बीमारीका बहाना करता था, कोई सीधा सप्तम स्वरमें तिरस्कार कर देता था, कोई लम्बी वक्तृता देता था और परिश्रम करके कमाने खाने-की शिक्षा तो हमें रोज ही मिलती थी। एक दिन एक भद्र पुरुषने कहा—बाबा, और जगह देखो, हमारे घोड़ेके नाल खुल गये हैं। गाम्भी-र्य्यकी मूर्त्ति स्वामीजीने कहा—आप भूल करते हैं महाशय, हमारा घोड़ेके नालसे कुछ सम्बन्ध नहीं है, हम घोड़ेके नालका आश्रय नहीं चाहते, आप-के स्थानपर टिकना चाहते हैं। बाबूने अग्निशर्मा होकर कहा—अच्छा, दिल्लगी हो चुकी, आगे बढ़ो। हम दोनोंने कहा—"हरे मुरारे।"

इस तरहकी दो एक विरक्तिकर घटनायें हो जाने पर भी मेरा जीवन आनन्दसे कट रहा था—इसमें कोई सन्देह नहीं। अवश्य ही किसी भले घरमें आतिथ्य पाकर गार्हस्थ्य जीवनके शान्तिप्रद मधुर चित्रको देखकर मुझे कभी कभी अपनी प्रेममयीका ध्यान आ जाता था और उसके कारण पीड़ा भी पहुँचती थी। मैं सोचता था कि गृहस्थोंके झंझट-मय जीवनमें भी एक तरहका आकर्षण है। कभी

कभी लेटे-लेटे मैं शान्तिमय जीवनकी कल्पनाका चित्र खींचने लगता था, पर दूसरे ही क्षण सोचता था कि मेरे जीवनमें इस तरहके जीवनकी सार्थकता असम्भव है। एक बार तो एक भले मानसकी लड़कीके रूपको देखकर चित्त कुछ चञ्चल भी हो गया था। जाने दो, साधुके लिए ऐसी बातका उल्लेख करना भी महा पातक है। चित्तका चाञ्चल्य महापातक है या नहीं, मालूम नहीं। क्योंकि चित्त किसीके वशकी चीज नहीं।

३

स्वामीजीने कहा—"चिदानन्द, चलो इस बार वृन्दावन हो आयें।"

मैंने कहा—"स्वामीजी, वृन्दावन बहुत दूर है।"

फिर स्वामीने कहा—"नारायणकी कृपासे उपाय हो ही जायगा।"

मैंने कहा—" बहुत अच्छा।"

उस समय हम पानागढ़ स्टेशनपर ठहरे हुए थे। एक मालगाड़ी स्टेशनपर खड़ी हुई थी। उसका गार्ड शीघ्र लाइन क्लियर पानेके लिए स्टेशनके बाबूसे नाराज होकर प्लेटफार्म पर टहल रहा था। हमें देखकर उस अधगोरे साहबको रसिकताका परिचय देनेकी इच्छा बलवती हो उठी। वह स्वामीजीके सामने हाथ फैलाकर बोला—"साधु, बोलो हमारा शादी कब होगा।"

स्वामीजी अँगरेजी बोल सकते हैं या हाथ देख सकते हैं, यह बात मेरे स्वप्नमें भी कभी नहीं आई थी। इसी लिए जब स्वामीजी गार्ड-का हाथ पकड़कर शुद्ध अँगरेजीमें कहने लगे कि विवाहके लिए क्यों चिन्तित होते हो? तब मुझको बहुत ही आश्चर्य हुआ। गार्डका मुँह लाल हो गया, उसने कहा—What do you mean?

स्वामीजीने कहा--"यदि यह बात जानना चाहते हो तो हमें गाड़ीमें साथ ले चलो, सब बातें सुना देंगे।"

गार्डने कहा--"मैं मुगलसराय तक जाऊँगा। उसके बाद आपको बनारस पहुँचानेका इन्तजाम कर दूँगा।"

स्वामीजीने धीरतासे गार्डके यानमें पदार्पण किया। मैं भी मृग-चर्म्म, कमण्डलु और उपनिषद् लेकर उनके पास बैठ गया।

गाड़ीके छूटते ही गार्डने कहा--"अब कहिए।"

स्वामीने कहा--"एक स्त्रीपर विश्वास करके आप ठगे गये हैं। इसी लिए कहता हूँ, अब क्यों फिर इस झगड़ेमें पड़ते हो।"

साहबने कहा--"क्यों बाबू, क्या पृथ्वीमें भले आदमी नहीं हैं।"

"अवश्य हैं, किन्तु अनेक आदमी एक बार ठगे जाकर सबको ही ठग समझने लगते हैं। दूसरा विवाह करके आपको शान्ति जरूर मिलेगी, पर अभी एक वर्षकी देर है।"

इस तरहकी अनेक बातें स्वामीजीने साहबके विषयमें कहीं। उनमें अनेक बातें ठीक मालूम होती थीं। कहनेकी जरूरत नहीं कि गार्डने भी हमारी कुछ कम खातिर नहीं की।

मुगलसरायके स्टेशनपर पहुँचकर साहबने कहा-"वृन्दावन पहुँ-चकर खुद आपका क्या होगा, इस विषयमें आप कुछ कह सकते हैं?"

स्वामीजीने कहा--"हमें सुख दुःख बराबर है। वृन्दावनमें हमारी जो अवस्था होगी उसे देखकर आप समझेंगे कि वह दुःखकी अवस्था है। हमारे साथीके जीवनमें एक बड़ा भारी परिवर्तन होगा, पर क्या परिवर्तन होगा, यह हम नहीं कह सकते।"

४

वृन्दावन जाकर वास्तवमें बड़ा भारी परिवर्तन हो गया। स्वामी-जीके ऊपर मेरा जो भाव था वह गम्भीर श्रद्धाके भावमें बदल गया।

उनके साथ ज्यों ज्यों परिचय बढ़ता गया, त्यों त्यों उनका महान् चरित्र विकसित होता गया और मुझे निश्चय हो गया कि मेरे साथी और गुरु सिर्फ रँगे हुए कपड़े पहननेवाले परिव्राजक ही नहीं हैं। उनके चरित्रमें एक तरहकी गभीरता है—यह बात दिन दिन मुझे सच्ची मालूम होने लगी। उनके पूर्व जीवनकी एक बात भी मुझे छः महीनोंमें मालूम नहीं हुई। मैं ने उनको योगाभ्यास या कोई विशेष साधना करते भी कभी नहीं देखा। हाँ, दोनों समय संध्या करना और किसी किसी रात्रिको चुपचाप बैठे रहना—ये दो बातें मैं जरूर देखता था।

हमारे वृन्दावन पहुँचनेके कुछ दिनों बाद ही एक ब्राह्मण सपरिवार वहाँ आकर बड़ी विपत्तिमें फँस गया। विदेशमें स्वजातीय बंगालीको विपत्तिमें पड़ा देखकर स्वामीजीने जिस तरह उसकी सेवा की, उसको देखकर मेरे हृदयमें स्वामीजीके लिए भक्तिका भाव और भी गाढ़ा हो गया। रोगीके कष्टको देखकर मेरा हृदय काँपने लगता है, मुझसे रोगीका दुःख नहीं देखा जाता, इसी लिए मैं उसकी शुश्रूषा नहीं कर सकता। किन्तु इस बार भूधर चट्टोपाध्यायकी सेवा करनेके लिए भगवान्‌ने मुझे विशेष बल दे दिया था। स्वामीजीके साथ मैं उसकी दिन रात सेवा करता था।

एक दिन मैंने स्वामीजीसे कहा—"रोगीकी हालतमें कोई विशेष परिवर्तन होता तो दिखाई देता नहीं, हमारा श्रम सफल होगा कि नहीं? भद्र पुरुषकी कुमारी कन्या और स्त्रीकी कातरता देखकर मेरा हृदय फटा जाता है।"

स्वामीजीने धीरभावसे कहा—"मृत्युके ऊपर हमारी कुछ भी क्षमता नहीं है; पर सम्भव है इस बार यह आदमी बच जाय।"

'सम्भव है' सुनकर मुझे बहुत भय हुआ। मैंने बड़े आग्रहके साथ कहा—"यदि ऐसा न हुआ तो सर्वनाश हो जायगा। बेचारेकी अनाथा स्त्री और कुमारी कन्याकी क्या दशा होगी?"

पहलेकी तरह गंभीर भावसे ही स्वामीजीने कहा—"हरे मुरारे! भगवान् ही उपाय निकाल देंगे। कन्याका हो सकता है—यहीं विवाह हो जाय। सुना है, भूधर बाबू खूब धनवान् हैं। उनकी एक मात्र कन्याके विवाहकी चिन्ता करनेकी आवश्यकता नहीं।"

५

मेरी अवस्था पचीस वर्षकी है। इसमें अनेक घटनायें हुई हैं, पर आजकी जैसी विचित्र घटना किसीके भी जीवनमें हुई हो—मैं नहीं कह सकता। जिनमें मेरी संसार भरमें सबसे अधिक भक्ति थी, जिनका धीर गभीर ज्ञानसे भरा स्वभाव मेरे हृदयमें धीरे धीरे जगह करता जाता था, जिनकी परहितार्थता और पवित्रतामें मुझे महान् स्वर्गीय भाव दिखाई देता था, मतलब यह कि जिनको मैं इस शोकताप परिपूर्ण हिंसाद्वेषमय पापपृथ्वीमें देवता समझता था, उन्हींके विषयमें ऐसी बुरी बात सुनकर हृदयमें जो पीड़ा उत्पन्न हुई, उसको लिखकर बताना निरा पागलपन है। प्रातःकाल सोकर उठनेसे पहले ही कई यमदूत सदृश पुलीसके कर्म्मचारी हमारे कुञ्जमें आपहुँचे। उनके दलपति दारोगाने कहा—"नरोत्तम स्वामी किसका नाम है?"

स्वामीजीने मुस्कराकर कहा—"तुम पकड़नेके लिए आये हो, पर पहचानते तक नहीं।"

दारोगाने झेंपपर कहा—मुझे सिर्फ कलकत्तेसे हुलिया मिला है। गिरफ्तार करके कलकत्तेको भेजना है।"

गिरफ्तारीका नाम सुनकर हमने बड़े क्रोधके साथ कहा—"गिरफ्तार ? हम साधु लोगोंने किसीका क्या बिगाड़ा है, जो हमें गिरफ्तार किया जायगा ?"

स्वामीजीने कहा—"साधुओंको गिरफ्तार होनेमें भी क्या आपत्ति है ? मेरा नाम ही नरोत्तम स्वामी है।"

दारोगाने कहा—"आपका हाथ नहीं पकड़ेंगे; आप हमारे साथ आइए। आपने तीन वर्ष पहले कलकत्तेमें जाली नोट चलाये थे। आपका दूसरा नाम नरेन्द्रकुमार राय है ?"

अपनी स्वाभाविक धीरतासे स्वामीजीने उत्तर दिया—"यह बात आपको मालूम नहीं है, तो क्या वैसे ही किसीको गिरफ्तार करनेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर लेते हैं ? बताइए कहाँ जाना होगा ?"

दारोगा साहबने कहा—"आइए।"

स्वामजीने कहा—"बहुत अच्छा। चिदानन्द तुम घबराना नहीं। यदि भूधर बाबू कहें तो उनकी कन्या सुलोचनासे विवाह कर लेना।"

स्वामीजीकी बातें मैं चित्रवत् खड़ा सुनता रहे। उस समय उनकी बातका अर्थ मुझे कुछ न मालूम हुआ। उनके चले जाने पर अनेक तरहकी सुचिन्तायें और कुचिन्तायें मनमें उत्पन्न होने लगीं; पर भीतरी गोलमालमें, उस मानसिक भावोंके द्वन्द युद्धमें बार बार एक प्रश्न उठता था और वह यह था कि--ये स्वामीजी हैं कौन ?

६

स्वामीजीके सम्बन्धमें मैंने कोई बात भूधर चट्टोपाध्यायके घरके किसी आदमीसे नहीं कहीं। किन्तु पुण्यभूमि वृन्दावनके ऐतिहासिक यमुनातटपर एक बार स्नान करनेके लिए जानेसे ही पाँच संवाद-

पत्रोंके पढ़नेका पुण्य मिल जाता है। इस लिए नित्य स्नान करनेवाले चट्टोपाध्यायकी स्त्रीको दूसरे दिन ही सब बातें मालूम हो गईं।

चट्टोपाध्यायको सोता हुआ देखकर मैं बाहर बरामदेमें बैठा हुआ था। बन्दरोंके उपद्रवको रोकनेके लिए बरामदेमें परदा पड़ा हुआ था—इस लिए मैं यमुनाकी शोभाको भले प्रकार नहीं देख सकता था। उस पार कई घड़ियाल रेतमें मुँह छिपाये पड़े थे और बन्दर उनको नोचकर जगानेका प्रयत्न कर रहे थे।

चट्टोपाध्यायकी कन्या सुलोचनाने वहाँ आकर मुझसे कहा-"स्वामीजी, बड़े स्वामीजीके सम्बन्धमें जो सुना है, क्या वह सत्य है?"

मैंने पूछा—"क्या सुना है?"

"यही कि वे साधु नहीं हैं, नोट बनाते थे और साधुओंके वेशमें छिपे फिरते थे। पुलीसने उनको पहचान लिया है और गिरफ्तार कर लिया है।"

"पुलीस उनको गिरफ्तार करके जरूर ले गई है; पर वे अपराधी हैं या नहीं, यह मैं नहीं कह सकता।"

बालिकाने कहा—"स्वामीजी अपराधी हैं--यह विश्वास नहीं होता, सभी कहते हैं, कोई भूल हो गई है।"

उसकी इस बातसे मेरे हृदयका बोझसा उतर गया। स्वामीजीकी गिरफ्तारीके बाद मेरे दिमागमें कुछ खराबीसी आगई थी और इसी लिए अनेक बुरी चिन्तायें मुझे दिन रात सताती रहती थीं। यह बात प्रसिद्ध होनेपर चट्टोपाध्याय-परिवार मेरे ऊपर भी भारी सन्देह करेगा—इस बातकी भी मुझे बहुत चिन्ता थी। और विपत्तिके समय उनकी प्रातःकालके फूलकी तरह उज्ज्वल बालिका और साध्वी स्त्रीको विदेशमें विपत्तियोंके साथ युद्ध करनेके लिए निस्सहाय छोड़

जाना भी मुझे पसन्द नहीं था। जब सुलोचनाने कहा कि स्वामीजीपर लगाया हुआ कलंक मिथ्या है, तब मुझे कुछ आश्वासन मिला। मैंने बड़े आग्रहके साथ उससे कहा—"बेशक, उनका चरित्र देवताओंकी तरह पवित्र है।"

सुलोचनाने कहा—"उन्होंने स्वयं क्या कहा था?"

वास्तवमें स्वामीजीने तो अपने सम्बन्धमें कोई बात नहीं कही थी। मुझीको एक निरर्थकसा उपदेश जरूर दिया था। छिः! छिः! क्या वह हो सकता है? एक बार मैंने उसके स्निग्ध रूपपर दृष्टि डाली। उस समय उसकी किशोरी अवस्था समाप्तप्राय थी और यौवनावस्थाका प्रारम्भ था। उसी समय मृत्युशय्यापर सोती हुई अपनी प्रियाके मुखका मुझे स्मरण हो आया। मुझे चुप देख कर चञ्चललोचना सुलोचनाने कहा—"क्या उन्होंने कोई भी बात नहीं कही?"

इस बार मैंने क्यों झूठ बोल दिया, मालूम नहीं। मैं शपथपूर्वक कह सकता हूँ कि वह झूठ उसकी परीक्षाके लिए मैंने नहीं बोला था। मैंने कहा—"स्वामीजीने कहा है कि आजसे चट्टोपाध्यायबाबूके घर जाना बन्द कर देना।"

बालिकाका मुख गभीर हो गया, उसके दोनों नेत्र स्थिर हो गये। उसने कहा—"नहीं, ऐसा न कीजिए। ऐसा करनेसे हमारे पिताकी क्या दशा होगी?"

मैंने कहा—"अब तो वे कुछ कुछ अच्छे हो चले हैं, इसलिए हमारी परिचर्य्याकी अब जरूरत नहीं है। अब तुम स्वयं उनकी परिचर्य्या कर सकती हो।"

कुमारीने कहा—"नहीं, यह नहीं होगा। मैं अभी पितासे कहती हूँ।"

७

स्वप्न भी नहीं था और घटना भी सच्ची नहीं थी। स्वप्न कितना ही सच्चा क्यों न हो, फिर भी उसमें कुछ न कुछ अवास्तविकता रहती ही है। उसमें दिखाई देनेवाले नर नारी छायामय ही होते हैं और आँख खुलते ही माळूम हो जाता है कि जो देखा था सपना था। आजकी घटना यदि सच्ची होती, तो हमें फिर भी स्वामीजीके दर्शन होते या किसी और आदमीसे भी उनके आनेका हाल सुन पड़ता। चाहे सशरीर, चाहे स्वप्नमें, चाहे योगबलसे उन्होंने आज दो पहरको हमें दर्शन दिये—यह बात सत्य है। बहुत दिनों बाद उनकी वही दिव्यकान्तिपूर्ण मूर्ति देख कर, उनका वही स्थिर, धीर गभीर भाव देखकर, उनकी वही संक्षिप्त पर ओजस्विनी वाणी सुनकर हमें जो आनन्द प्राप्त हुआ वह वास्तव जगत्का ही था। उनके विषयमें कुछ पूछते ही उन्होंने हमारी बात काटकर कहा—"तुम्हें कुछ बतानेके लिए आया हूँ—अपनी बात कहनेके लिए नहीं आया हूँ।" यह बात अबतक मेरे कानोंमें मधुर प्रभातसंगीतकी तरह ध्वनित हो रहा है।

मैंने कहा—"आज्ञा कीजिए।"

"मैंने मुगलसरायके स्टेशनपर तुमसे कहा था कि तुम्हारे जीवनमें एक बड़ा परिवर्त्तन होनेवाला है—याद है?"

"हाँ, पर भलाई तो कुछ हुई नहीं आपकी गिर—"

"उस बातको छोड़ दो। परिवर्त्तनको समझते हो?"

"नहीं समझता।"

"तुमको संन्यास छोड़ना होगा। मैंने ही तुमको संन्यासी बनाया था, और अब मैं ही तुमको गृही बनाता हूँ।"

"स्वामीजी, गृहस्थ-जीवनमें तो बहुत कष्ट है।"

"कुछ नहीं है, जो देवबाला तुम्हारे साथ रहेगी उससे तुमको खूब सुख मिलेगा। तुम संन्यासके लिए उपयुक्त पात्र नहीं हो।"

"देवबाला आप किसे कहते हैं।"

"सुलोचनाको। आजसे दस दिनके अन्दर तुम्हारे साथ उसका विवाह हो जायगा।"

"स्वामीजी, मैं तो विपत्नीक हूँ, मेरी स्त्री तो स्वर्गमें—"

"हरे मुरारे! वह स्वर्गमें रहेगी। पृथ्वीके लिए यह स्त्री होगी। मेरी बातकी अवहेला न करना।"

मैंने सिर उठाकर देखा तो स्वामीजी नहीं हैं। बाहर जाकर देखा तो वहाँ भी स्वामीजीका कुछ पता नहीं पाया। इधर उधर ढूँढ़ा, कहीं स्वामीजीका पदचिह्न नहीं मिला। कुञ्जके सब आदमियोंसे पूछा, किसीने नहीं कहा कि स्वामीजीको देखा है। मैं अपने घर लौट आया। स्वामीजी थे, उनकी आत्मा थी, या स्वप्न था—इस विषयको लेकर मनमें अनेक वृत्तियाँ उठने लगीं। कोई भी सिद्धान्त स्थिर न हो सका। मैं 'हरे मुरारे' कहकर गोविन्दजीके मन्दिरकी ओर चल दिया।

८

घरमें हमारे और भूधर बाबूके सिवा और कोई नहीं था। उस दिन उनकी तबीअत अच्छी थी। वे चारपाईपर कई तकियोंके सहारे बैठे हुए थे। आँगनमें लगे हुए ताड़के वृक्षके पत्तोंको हिलाती हुई वायु घरके छोटेसे दीपकको बुझानेकी चेष्टा कर रही थी। यमुनाके उस पार कई मयूर बोल रहे थे। मालूम होता था कि अन्धेरेमें किसी गीदड़ने उनके बच्चोंको चुरा लिया है।

चट्टोपाध्याय महाशयने कहा—" यह पागलपन और कितने दिन रहेगा ?"

मैंने कहा—" पागलपन कैसा ?"

" गेरुए वस्त्र और भिक्षान्नका ?"

मैंने कहा—" साधुओंकी बारहों महीने यही व्यवस्था रहती है।"

उन्होंने कहा—" कल रात नरोत्तम स्वामीको सपनेमें देखा था। उन्होंने कहा-मुझे हाजतसे छुटकारा मिल गया है। मनकी बात चिदानन्दसे कह देना। शीघ्र मिलूँगा।"

मैंने कहा—" मैं आपकी बातका अर्थ नहीं समझा।"

" मैंने तुम्हारे विषयमें सब बातें जानकर एक इच्छा बाँधी है। मैं अपनी एकमात्र कन्या तुम्हें देना चाहता हूँ।"

मुझे उसी समय स्वामीजीकी बात याद आ गई। किन्तु मैंने कई दिनोंतक विचार करके निश्चय किया था कि स्वप्नकी बात नहीं माननी चाहिए। यह बात नहीं कि सुलोचनाके रूपकी ज्योतिने मेरे मनके भीतर प्रवेश न किया हो; पर मैं संन्यास ग्रहण करनेके बाद संयम कर रहा था। इस लिए उनकी बात सुनकर एक बड़ी वक्तृता देकर उनको हरानेकी चेष्टा करने लगा। इसी समय किसीने वीणासम मधुर कण्ठसे कहा—" प्रस्ताव बहुत सुन्दर है।"

पीछे फिरकर देखा, स्वामीजी खड़े हैं। उनको देखकर जो विस्मय हुआ उसका वर्णन करनेकी अपेक्षा अनुभव करना आसान है। मैंने उठ कर उनके चरण छुए। स्वामीजीने पहले जैसी धीरतासे ही मुझे आलिङ्गन करके कहा—' हरे मुरारे।'

भूधर बाबू उनके चरणोंको पकड़कर बोले—" स्वामीजी गिरफ्तारीका क्या रहस्य था।"

स्वामीजीने हँसकर कहा–"पुलीसके आदमी क्या मनुष्य नहीं हैं, जो भूल नहीं करें? असली मुलजिम संन्यासीके वेशमें घूमता था। वह पकड़ा गया और उसने अपना दोष स्वीकार लिया–तब मुझे छुटकारा मिला। हरे मुरारे।"

इतना बड़ा अत्याचार होने पर भी उन्हें अविचलित देखकर मुझे बड़ा विस्मय हुआ। मैंने समझा कि स्वामीजीके चरित्रकी गभीरताका समझना बहुत मुश्किल है। मैंने बड़े आग्रहसे पूछा–"सात दिन पहले आप कहाँ थे स्वामीजी?"

उन्होंने कहा–"मेरा शरीर कलकत्तेमें कैद था। मध्याह्नमें आत्माने तुम्हारे साथ एक वार साक्षात्कार किया था। स्थूल शरीरको छोड़कर सूक्ष्म शरीर द्वारा विचरण करना बहुत थोड़े परिश्रमसे हो सकता है।"

मैं काँप उठा।

स्वामीजीने कहा–"परसों शुभ दिन है, तुम्हारा विवाह होगा।"

कटाक्ष ।

१

घोर शीत पड़ रहा था पर हमें मालूम न होता था। क्यों? खैर, जाने दो। नीतिवादी सुनकर काँप उठेंगे। हम बगीचेमें मौजें उड़ाकर घरको आना चाहते थे। हमारे मित्र हमें रोकना चाहते थे। वे कहते थे, "इतनी रात गये, और फिर इस अवस्थामें पैदल मकान जाना ठीक नहीं। रास्तेमें कोई विपत्ति आ सकती है। मानिकतलेके रास्तेपर दोनों ओर नाला है। ऐसी अवस्थामें लोगोंको थानेमें होकर जाना पड़ता है।" हमने इस बातको नहीं माना। मित्र कहते थे, कोई पहरेवाला भी तुम्हें श्रीघरमें बन्द कर सकता है। मित्रोंकी इन बातोंसे हमें और भी ज़िद हो गई। इसी लिए चादर ओढ़कर हम बर्मा चुरुटका धुआँ उड़ाते हुए अकेले निर्जन रास्तेपर घरकी ओर चल खड़े हुए। बड़ी आफ़त थी। हमें उस समय रत्तीभर भी नशा नहीं था। शरीर जरूर गर्म था, पर मादकता जरा भी न थी।

नशा बिल्कुल नहीं था—इस बातको जोर देकर कहनेका एक कारण है। हमने बगीचेसे निकलते ही घड़ी खोलकर देखा तो बारह बजनेमें ७ मिनट बाकी थे। जेबमें पड़े हुए बटुएमेंसे हमने दाम निकालकर हाथमें लेकर गिने तो सात रुपये तेरह आने थे। हम कसम खाकर कह सकते हैं----हमारी दृष्टिमें सरलता थी---शराबके नशेके कारण दृष्टिमें कुछ भी विकार पैदा नहीं हुआ था। किन्तु फिर भी हमारी घर जानेकी बात सुनकर दो चार मित्रोंने मुँह फेर कर हँस

दिया और बगीचेकी हदसे बढ़ी हुई स्वतन्त्रताको देख कर वे लोग नीतिशास्त्रकी व्याख्या करने लगे--हितोपदेश देने लगे।

नशेमें यदि हम उस दृश्यको देखते तो वह हमें इतना साफ़ याद नहीं रह सकता था। मानिकतलेकी गलीसे बाहर निकलते ही दूसरे रास्तेके एक आदमीने हमारी ओर देखा। निर्जन रास्तेमें उसकी चितवनको देखकर हम वहीं खड़े हो गये। वह कलकत्तेसे शहरतलीको जा रहा था और हम शहरतलीसे कलकत्तेको जानेके लिए पुलकी तरफ जा रहे थे। उस आदमीने पास आकर हमारी ओर देखा। वह साधारण कपड़े पहने था, उसके बाल रूखे थे और उसकी आँखोंमें एक विशेष प्रकारकी चितवन थी। हमने घूमकर उसकी पीठकी तरफ देखा। उसकी चादरमेंसे दो पाँव---नंगे पाँव----गोल गोल छोटे छोटे पाँव---किसी स्त्रीके मेंहदी लगे रक्तहीन पाँव---बाहर निकल रहे थे। हम काँप गये, चीख भी न मार सके, दौड़ कर भाग भी न सके, आँखें भी बन्द न कर सके और आगे भी न बढ़ सके। हम चुप चाप वहीं खड़े हुए, उन दोनों पाँवोंको देखते रहे; और वे पाँव धीरे धीरे हमसे दूर होते गये। जिसके वे पाँव थे वह कपड़ेमें लिपटी हुई उस आदमीकी पीठपर रक्खी हुई थी--इसमें हमें कुछ भी सन्देह नहीं रहा। नहीं तो वे दो पाँव उसके पास कहाँसे आते? ज्यादासे ज्यादा कोई आधे मिनट तक हमने उन रँगेहुए पाँवोंको देखा होगा, पर आज भी वे दोनों पाँव हमारी आँखोंके सामने मौजूद हैं और उस आदमीकी दोनों आँखें जंगली पशुओंकी तरह जल रही हैं।

हमने कोई आधे मिनटतक ही उस ओर देखा होगा। उसने उसी समय अपने हाथसे पीछेकी तरफ उन दोनों पाँवोंको ट-

टोला । उसी समय उसने पीछेकी तरफ देखा । हमें देखकर वह वहीं खड़ा हो गया । इसके बाद उसने हमें उसी चितवनसे देखा । उस चितवनका वर्णन करना मनुष्यकी शक्तिसे बाहर है, उस दृष्टिका चित्र खींचनेवाला चित्रकार भूमण्डलमें नहीं है—उस दृष्टिका अर्थ समझानेवाला पण्डित कलियुगमें तो क्या, सत्य, त्रेता, और द्वापरमें भी पैदा नहीं हुआ होगा । उस चितवनसे हम और भी काँप उठे । उस दारुण शीतकी रातमें भी हमारे माथेपर पसीना आ गया । चार पाँच सेकंडके लिए हमें एक पर्वतसम भीषण मोहने—जड़ताने—आकर दबा लिया । किन्तु उसी समय रजोगुणसे उत्पन्न भयने आकर हमारे हाथपाँवोंमें शक्तिका सञ्चार कर दिया । अबतक हम तामसिक भयके कारण वहींपर खड़े हुए थे । राजसिक भयके आनेपर हम हाँपते हुए वहाँसे भाग दिये । उसी निर्जन पुलके ऊपर होते हुए कलकत्तेकी तरफ हम भागे । एक बार भी पीछे फिर कर नहीं देखा । हेदुआके पास आकर ही हम रुके । इसके बाद हम झपट कर अपने घर पहुँच गये ।

२

दूसरे दिन हमने चार पाँच मित्रोंसे वह बात कही । लोग हमारी दिल्लगी उड़ाने लगे । किन्तु तीसरे दिन संवादपत्रोंमें जब उस घटनाका हाल पढ़ा, तब सब काँप उठे । अँगरेजी और देशी भाषाओंके पत्रोंमें छपा कि मानिकतलेमें किसी स्त्रीकी लाश मिली है । एक देशी संवादपत्रमें इस तरह लिखा था—

"**शवदेह**—मानिकतलेके प्रसिद्ध रईस ....के बागके तालाबमें एक स्त्रीकी लाश मिली है । कल बाबूके उड़िया मालीने—जब कि वह मुँह धोनेके लिए तालाबपर गया था—देखा कि जलमें कोई काली

चीज मालूम होती है। बादको उसे मालूम हुआ कि वह किसी स्त्रीकी लाश है। उन लोगोंने उसी समय मानिकतलेके थानेमें खबर भेजी। मानिकतलेके थानेदारने उस लाशको निकलवाकर वहींके सब लोगोंसे शनाख्त कराया; पर कोई भी आदमी उसे शनाख्त न कर सका। स्त्रीकी अवस्था कोई २४—२५ वर्षोंकी होगी। उसका शरीर खूब मजबूत था, रंग गोरा और पाँवोंपर लाखका रंग लगा हुआ था। शरीरपर किसी तरहके घावका निशान न था। पुलिसका विश्वास था कि उसने आत्मघात किया है। किन्तु वह कहाँसे आई, उसके सम्बन्धी कौन हैं—जबतक इन बातोंका पता न लगे, उस समय तक मृत्युका ठीक कारण स्थिर नहीं हो सकता है।"

कहनेकी जरूरत नहीं, इस संवादको पढ़कर हम बहुत विचलित हुए। उसी आदमीने इस स्त्रीकी हत्या की है, इस विषयमें हमें कुछ भी सन्देह नहीं रहा। उसकी आँखसे इस बातका पता लगता था।

यदि यह बात न होती, तो वह उस लाशको इस तरह पीठपर लादकर क्यों ले जाता? किन्तु हमने जिस समय उसे देखा था, उस समय स्त्री जिन्दा थी या मुर्दा, यह सोचकर हमें अपने ऊपर ग्लानि होने लगी। हतभागिनी जरूर उस समय मर चुकी थी—इस बातका एक तरहसे हमें निश्चय हो गया था। कभी कभी यह भी ध्यान आता था कि शायद उसे विष देकर ही मारा गया हो। उस समय भी सम्भव है, उसके शरीरमें थोड़ा बहुत साँस हो और इलाज करनेसे शायद हम उसे बचा सकते। इस आख़िरी बातसे हमें बहुत दुःख पहुँचा। अपनी कायरताको याद

करके हमें बहुत दुःख होने लगा। हम जरा भी साहस करते, तो वह दुष्ट हत्याकारी लाशसहित पकड़ा जा सकता था। हमें याद पड़ती है कि उस समय नहरमें अनेक महाजनी नौकायें बँध रही थीं। जरा चिल्ला देनेसे ही मल्लाह लोग आ सकते थे। पुलसे थोड़ी ही दूर मानिकतलेका थाना था। उस तरफ़ दौड़कर पुलिसकी सहायता भी पा सकता था। किन्तु उस समय मृताके पाँव और हत्याकारीकी आँखोंकी चितवन देखकर हम बहुत डर गये थे, किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर और बंगालियोंकी स्वाभाविक वृत्तिके वशीभूत होकर हम वहाँसे चम्पत हो गये थे। हमारी कायरताके कारण ही एक स्त्रीघातक आज समाजमें स्वच्छ-न्दतासे घूम रहा होगा और बहुत मुमकिन है कि वह हमारा स्मरण करके हमारी कायरतापर हँसता भी होगा।

फिर दो दिन बाद संवादपत्रमें निकला—

"**कारणनिर्णय**—गत सोमवारको मानिकतलेके तालाबमें जिस हतभागिनीकी लाश मिली थी, उसकी अब परीक्षा करके डाक्टरोंने निश्चय किया है कि किसी दुष्टने उसकी हत्या की है—उसने आत्महत्या नहीं की। किसी दुष्टने उसका गला घोंट कर उसे मारा है। साँसके रुक जानेसे ही स्त्रीकी मृत्यु हुई है। हत्यारेका पता लगानेके लिए पुलीस-कमिश्नरने पाँच सौ रुपयोंके इनामकी घोषणा कर दी है। किन्तु सबसे अधिक आश्चर्य्य की बात यह है कि उस रमणीको कोई भी शनाख्त नहीं करता। वह कहाँ रहती थी, किसकी स्त्री या कन्या है—इन बातोंका कुछ भी पता नहीं लगता। पुलीसको विश्वास है कि स्त्री हिन्दू बंगालिन है।"

दो एक मित्रोंसे हमने पूछा कि हमें ऐसी दशामें क्या करना चाहिए। उन सबने हमें पुलीससे दूर रहनेकी ही सलाह दी। किन्तु हमने किसीकी बात नहीं मानी। मानिकतलेके थानेदारके पास जाकर हम अपना इजहार लिखा आये। उन्होंने सब बातें लिख लीं। अन्तमें उन्होंने कहा---जरा ध्यान रखिएगा। यदि आप उस आदमीको रास्तेमें देखें, तो जरूर पकड़ लें। डरनेकी कोई बात नहीं है।

हमारे मित्र दिल्लगी उड़ाकर कहने लगे---अब थैलिया सिलवा-कर तय्यार रखो, पुलीससे जो इनामके रुपये मिलेंगे, उनके रखनेके लिए पहले ही पक्का इन्तजाम कर लेना चाहिए।

३

उस समय फागुन मासकी हवा खूब चल रही थी। समय भी ज्यादा हो गया था। लाट साहबकी कोठीमें लगे आमके पेड़ोंपर मौल खूब फूल रहा था। उसकी खुशबूसे चारों दिशायें महक रही थीं। लाट साहबकी कोठीकी कृष्णचूडापर बैठी हुई एक कोयल बोल रही थी। ईडन-उद्यानमेंसे दूसरी कोयल उससे प्रतियोगिता कर रही थी। गोधूलिके आलोकमें वहाँकी वृक्षश्रेणी बहुत ही भली मालूम होती थी। हम आफिससे निकल कर लाट साहबकी कोठीके पश्चिमवाले फुट-पाथपर मैदानकी ओर जा रहे थे। उस तरफ गाड़ी, घोड़े और मोटरोंकी भीड़ कम होती है। तो भी हर मिनटमें तीन चार मोटरें अनेक तरहकी बाँसुरी बजाती हुई निकल जाती थीं, और अनेक रंग और अनेक आकारकी घोड़ा-गाड़ियाँ भी जा रही थीं। रास्तेमें आदमियोंकी भीड़ न होनेपर-भी यदि चीख मार देते तो एक सेकण्डमें कोई तीन सौ आदमी

इकट्ठे हो सकते थे। तो भी हमने चीख मारकर आदमियोंको क्यों नहीं इकट्ठा किया? सुनिए---

हम लाट साहबकी कोठीके दक्षिण पश्चिमवाले फाटकसे कोई दस हाथ ही आगे बढ़े होंगे। वह फाटक प्रायः बन्द रहता है। सामने गोधूलिके प्रकाशमें मैदानकी म्लान मूर्ति दिखाई देती थी। पश्चिमके मैदानकी मूर्ति और भी म्लान थी। उस जगह पहरेवाले रोज कवायद करते थे। इस समय वे लोग कवायद करके चले गये थे। रास्तेके ठीक ऊपर उसी मैदानमें हमने देखा कि एक और आदमी जिस ओरको हम जा रहे हैं जा रहा है। वह भले मानस बंगालियोंकी पोशाकमें था, पर उसके कपड़े बहुत अच्छे न थे। हमने पहले तो उसका मुँह नहीं देखा; पर वह एक साथ हमें देखने लगा। हमने भी उसे देखा। सर्वनाश! हम दोनों ही एक दूसरेके मुँहको देखकर निश्चेष्ट हो वहीं खड़े हो गये। दोनों ही किंकर्त्तव्यविमूढ़ थे, दोनों ही विस्मित थे। हमें कोई सन्देह नहीं था। हम उस चेहरेको जीवनमें कभी नहीं भूल सकते। यह वही लाशवाला था--मानिकतलेका वही आदमी था।

हमने सोचा दौड़ कर उसे पकड़ लें, चीख मारें, पहरेवालेको पुकारें, सार्जेंटको आवाज दें। कह नहीं सकते, हम कितनी देरतक उसकी ओर देखते रहे। हम दोनोंके बीचमेंसे अनेक मोटरें और गाड़ियाँ निकल गईं, खूब याद है। मोह कम होनेपर ज्यों ही हम उसकी तरफ बढ़ने लगे, त्यों ही उसकी आँखोंमें वही चितवन दिखाई दी। अबतक वह साधारण तरहसे देख रहा था; किन्तु अब उसकी आँखोंमें वही चितवन आ गई। हम काँप उठे। मैं जिस अवस्थामें था, उसमें मुश्किलसे खड़ा रह सका। न मालूम उसकी चितवनमें क्या

शक्ति थी कि हम वृक्षकी तरह उसी जगह खड़े रहे—मालूम होता था कि हमारे पाँव जमीनमें गड़ गये हैं—हम हिलतक भी नहीं सकते। हमने सुन रक्खा था कि सर्प, दृष्टिसे ही अपने शिकारको खींच लेते हैं, शेर भी अपनी दृष्टिसे ही हिरनीकी चालको कम कर देते हैं। उस आदमीने भी हमपर कुछ ऐसा ही जादू कर दिया। इसके बाद वह धीरे धीरे गंगाकी तरफ जाने लगा। अब हमारा मोह बिल्कुल दूर हुआ। हम उसके पीछे दौड़े। रास्तेको पार करके मैदानमें दौड़ने लगे। हमने जोरसे कहा—"खड़े रहो।" वह खड़ा हो गया; पर हमारी तरफको मुँह करके। उसकी आँखमें वही चितवन थी। लोग कहते हैं कि राक्षसीने किसी राजपुत्रको दृष्टिसे ही पत्थर कर दिया था। उस आदमीने भी हमें दृष्टिसे ही पत्थर बना दिया। हम भी स्थिर होकर वहीं खड़े रहे। वह धीरे धीरे चला गया। कभी कभी फिर कर हमें देख लेता था। हममें इतनी शक्ति नहीं थी कि दौड़कर या चिल्लाकर उसे पकड़वा सकें। अपनी दृष्टिसे हमपर जादू करके, वह नारीघातक दुष्ट सबके सामने लाट साहबकी कोठीके नीचे टाउन हालके सामने होता हुआ, विचार-प्रिय अँगरेजजातिद्वारा प्रतिष्ठित प्रान्तकी सबसे बड़ी अदालतके सामने हो कर, अँगरेजोंके दोर्दण्ड प्रतापके केन्द्र स्थलमें जाने लगा। हमारे मोहसे उसको पापका दण्ड नहीं मिला—अभागिनीके जीवनका बदला नहीं लिया जा सका।

४

घर आकर हम उस सम्मोहिनी चितवनका अर्थ समझनेकी चेष्टा करने लगे। उसमें ऐसा कोई उपादान नहीं था, जिससे हमारी क्षति हो—यह तो पहली बात हुई। उसे पकड़ लें, तो वह

हमें मार डालेगा या हमारे अङ्गकी हानि कर देगा—इस तरहका कटाक्ष भी उसकी चितवनमें नहीं था। कटाक्षमें बड़ी भारी कातरता थी—उसमें छिपा हुआ कातर भाव था; जिस को देखकर मनुष्यके मनमें दया या सहानुभूति हो—वैसी कातरता उसकी दृष्टिमें नहीं थी। जिस तरहकी कातरता मनुष्यको किंकर्त्तव्य-विमूढ़ कर देती है, मनमें उपस्थित कर्त्तव्योंके विषयमें बड़ी भारी समस्या सृष्ट कर देती है—उसकी दृष्टिमें उसी तरहकी कातरता थी। उस कातरताके साथ आत्मबोधकी चेष्टा भी शामिल थी। साथ ही उस कातरतामें अव्यवस्थित चित्तकी छाया भी थी। वह स्वयं भी न समझ सका था कि उसे क्या करना चाहिए, कौन पथपर चलना चाहिए। दृष्टिका तीसरा उपादान था—विस्मय----बड़ा भारी विस्मय। अपने कामपर विस्मय, संसारमें चारों तरफ विस्मय और मनके भीतर बड़ा भारी विस्मय। इन उपादानोंके सिवा उस चितवनमें आत्मग्लानि और अनुतापका भाव भी शामिल माॡम होता था। इस विषयमें हम ठीक ठीक कुछ नहीं कह सकते। यह भी हो सकता है कि वह कातरता ही हमें अनुताप माॡम पड़ती हो; किन्तु हमारा विश्वास है कि उसकी चितवन उसके मनके अनुतापको प्रकाशित करती थी। किन्तु उस चितवनमें एक तरहका डर जरूर था। वह हमको जिस चितवनको दिखाकर मोहमें डालता था, माॡम होता था, उसके मनपर भी किसीकी वैसी चितवन पड़ रही थी और छोटी मोटी बातें इकट्ठी होकर उसे जरूर भय दिखा रही थीं।

उस दिनके बाद वह हमें फिर दो सप्ताहों तक दिखाई नहीं दिया। इन दो हफ्तोंमें हमने विचार कर लिया था कि इस बार

दिखाई पड़नेपर वह हमसे बचकर नहीं भाग सकता । इस बार उसे जरूर पकड़ूँगा, नहीं तो चिल्लाकर उसे पकड़वानेकी चेष्टा करूँगा--इस बातकी मैंने मनमें प्रतिज्ञा कर ली थी ।

कोई पन्द्रह दिनोंके बाद एक दिन हम आफिससे आकर कपड़े उतार रहे थे कि हमारे नौकरने आकर कहा कि पुलीसका कोई आदमी हमसे मिलना चाहता है । हमें यह बुरा लगा । झटपट बाहर जाकर देखा कि एक बंगाली जमादार हमारी बैठकमें बैठा हुआ हमारा इन्तजार कर रहा है । हमें देखते ही उसने कहा--बाबू, आपको कष्ट करके मानिकतलेके थानेतक चलना होगा ।

हमने कहा--किसलिए ?

उसने कहा--वह खूनी आदमी पकड़ा गया है--आपको शनाख्त करना होगा ।

यह बात हमें और भी बुरी लगी । उसे अनेक तरहके प्रश्न करके हम दिक करने लगे । जमादारने कहा--बाबूजी, थानेमें चलकर ही आपको सब बातें मालूम हो जायँगी । वह आदमी पकड़ा गया है--मुझे इतनी ही बात मालूम है ।

हम झटपट कपड़े पहनकर जमादारके साथ थानेको चल दिये ।

५

सब-इन्स्पेक्टर बाबूने कहा--वह आदमी पागल बन गया है । आँखें भी पागलोंकी तरह ही घुमाता है । वह दिखाता तो अपनेको पागल ही है, पर हमारी समझमें वह जरूर दोषी है ।

हमने कहा--कहाँ है ? मैं भी देखूँ ।

सब-इन्स्पेक्टरने कहा—उसके ऊपर बहुत बड़ा चार्ज लगाया गया है। यदि वह वास्तवमें दोषी है, तो उसको जरूर फाँसी होगी--ऐसी हालतमें जरा होशियारीकी जरूरत है।

हम उनकी बातका मतलब नहीं समझ सके। उन्होंने कहा—हमने कुछ आदमी उसकी सूरतसे मिलते जुलते बुलाये हैं। हम उस आसामीको उन आदमियोंके साथ मिलाकर आपको दिखावेंगे। उस समय यदि आप उसे पहचान सकेंगे, तब हमें कोई सन्देह नहीं रहेगा।

हमने कहा—महाशय, उस आदमीको हम लाख आदमियोंके अन्दरसे बाहर कर सकते हैं। जीवनमें हम उसके चेहरेको कभी नहीं भूल सकते, खासकर उसके कटाक्षको।

आसामी किस तरह पकड़ा गया—इस विषयमें सब-इन्स्पेक्टरसे हमने प्रश्न किया। उसने कहा कि आसामियोंका यह दस्तूर है कि वे जहाँ घटना होती है, उस स्थानको रोज देख आते हैं। विलायतमें जिन लोगोंने इस विषयका विशेष रूपसे अनुसंधान किया है उनकी यह राय है। विलायतमें अनेक आसामी इसी तरह पकड़े गये हैं। इसीलिए हम लोगोंने उस तालाबपर नजर रक्खी थी। यह आदमी एक दिन धीरे धीरे दो पहरके समय उस बागमें गया। इधर-उधर देखकर वह तालाबके पास बैठकर रोने लगा। पुलीसका जो आदमी वहाँ छिपा हुआ पहरा दे रहा था, उसके बाहर होते ही यह आदमी वहाँसे भाग खड़ा हुआ। बहुत दूर भागकर पुलीसके आदमीने कहीं उसे पकड़ पाया।

हमने कहा—उसने कुछ कहा भी? दोष स्वीकार किया या नहीं?

सब-इन्स्पेक्टरने कहा—ऐसा होनेपर आपको कष्ट देनेकी क्या जरूरत थी? वह पागल बन गया है। किसी बातका भी जवाब नहीं देता।

कुछ देर बाद एक जमादारने आकर कहा कि सब इन्तजाम हो गया। हम उसे देखनेके लिए गये। कुछ आदमी एक ही श्रेणीमें दल बाँधे खड़े हुए थे। सभी बंगाली थे, पर थे भिन्न भिन्न आकृतिके। हमने झटपट एक तरफसे दूसरी तरफ तक देखा, दूसरी बार देखा, तीसरी बार देखा, वह आदमी उस लाइनमें नहीं था। इसके बाद फिर हर एक आदमीके मुँहको देखा—पर वह दिखाई नहीं दिया।

सब-इन्स्पेक्टरसे हमने कहा—महाशय, वह आदमी इनमें नहीं है। उन्होंने हमें फिर एक बार अच्छी तरह देखनेके लिए कहा—हमने कहा—महाशय, आपने जरूर भूल की है। किसी हतभाग्यको पकड़ लिया है--उसे छोड़ दीजिए।

सब-इन्स्पेक्टर नवीन बाबूने मुस्कराते हुए हमसे कहा--हम दोनोंमेंसे किसी एककी जरूर भूल है। अच्छा देखिए, यही तो वह आदमी नहीं है?

नवीन बाबूने उन्हीं आदमियोंमेंसे हमें एक आदमीको दिखाया। उस आदमीकी चितवन खास तरहकी जरूर थी, पर उस चितवनके साथ उसकी तुलना नहीं हो सकती थी। उसका कटाक्ष पागलों जैसा था और वह कटाक्ष तो तुलनातीत था।

हमने कहा—महाशय, हम ईश्वरका नाम लेकर कह सकते हैं कि इस आदमीको हमने पहले कभी नहीं देखा है। उसकी

आकृति और प्रकृतिके साथ इसकी आकृति और प्रकृतिका जरा भी सादृश्य नहीं है । इसे छोड़ दीजिए ।

शनाख्त करानेके लिए बाहरके जो लोग आये थे, वे भी हँसने लगे । दो चार आदमियोंने कहा—आसामी जरूर पागल मालूम होता है ।

हमने सुना कि कानूनकी खातिर उस आदमीको छोड़नेमें कुछ देर लगेगी । वह पागल था, इस कारण बिना वारिसका पता लगाये उसे छोड़ देना उसके लिए भी ठीक नहीं था ।

६

उस दिन मकर संक्रान्ति थी । छातू बाबूके बाजारमें बड़ी भीड़ थी । बाज़ारको जानेके जितने रास्ते थे उन सबपर आदमियोंकी भीड़ थी । हेदोंके बागमें भीड़ कम थी, पर बीडन स्ट्रीटमें लोग मुश्किलसे निकल पाते थे । हम भीड़से बचकर हेदोंके एक कोनेमें घासपर बैठे विश्राम कर रहे थे । शाम हो चुकी थी । नवमीके चन्द्रमाका प्रकाश जलके ऊपर पड़ रहा था । हम जलकी ओर देख रहे थे । पीछेसे आकर किसीने हमारा कन्धा छुआ—हमने मुड़कर देखा तो--वही था ।

हम फौरन खड़े हो गये । उसका हाथ पकड़कर चिल्लाना चाहते ही थे कि उसकी आँखोंमें वही कटाक्ष दिखाई दिया, वही कटाक्ष ! इतने दिनोंमें उसमें कुछ भी परिवर्त्तन नहीं हुआ था । हमारी जुबान रुक गई । हमने उसका हाथ छोड़ दिया ।

उसकी दृष्टि फिर सरल हो गई, फिर कातर हो गई । उसने हमसे कहा——मुझे बचाइए । तुम्हारे सिवा मेरे कष्टको कोई दूर नहीं कर सकता ।

उसकी कातर दृष्टिको देखकर हमें कुछ कुछ साहस हुआ। उससे कहा--तूने नारीहत्या की है, कापुरुष, तुझे मैं किस तरह बचा सकता हूँ। तेरे लिए एक निर्दोष आदमी पकड़ा गया है।

उसने कहा--इस बचानेसे मेरा मतलब नहीं था। मुझे पुलीसमें दे दीजिए। ओः! कैसी यन्त्रणा है, कैसी ज्वाला है, कैसा दण्ड है--ओः!

कहते कहते उसकी आँखोंमें फिर वही कटाक्ष आ गया। हमने उससे बैठनेके लिए कहा। वह हमारे सामने दोनों हाथोंपर मुँह रखकर बैठ गया। इस बार हमने साहस करके उसकी आँखोंकी तरफ देखा। उसकी अब वह चितवन नहीं थी।

उसने कहा--ओः! कैसी ज्वाला है, कैसी यन्त्रणा है! तुमने कभी पाप किया है?

हम समझते थे कि अब शिकार हमारे हाथमें है। उसकी बात सुननेमें हर्ज भी क्या है? इस समय एक आवाजमें हजार आदमी इकट्ठे हो सकते हैं। हेदोंके मोड़पर मानिकतलेका जमादार पहरा दे रहा था। हमने कहा--संसारमें जिसने पाप न किया हो, ऐसा कोई आदमी नहीं।

उसने कहा--उस पापकी बात नहीं कहता--मेरा जैसा पाप! जानते हो? मालूम होता है, जान गये हो! तुम्हें घूरता हुआ देखकर मैंने हाथसे टटोला था। पाँव खुल रहे थे। तुम मेरे पापको जानते हो।

उत्तेजित होनेपर फिर कहीं इसकी आँखोंमें वही कटाक्ष दिखाई देने लगे, इसी डरसे चुप करनेके लिए हमने कहा--हाँ, हाँ, समझ गया--नारीहत्या!

उसने कहा—हाँ, नारीहत्या । बड़ी यन्त्रणा है, बड़ा कष्ट है, बड़ा भारी दण्ड है। जानते हो? पकड़े जानेपर नहीं—नहीं पकड़े जानेके कारण ।

हमने कहा—हाँ, कब पकड़े जाओ—सदा इसी बातका खटका लगा रहता होगा—

उसने कहा—नहीं, मुझे इस बातका डर नहीं है । मैं वकीलका मुहर्रिर रह चुका हूँ, कानूनको समझता हूँ । सिर्फ तुम्हारी शहादतसे मुझे फाँसी नहीं हो सकती । जूरी लोग मुझे सन्देहका लाभ Benefit of doubt देंगे । और फिर तुम तो उस समय 'टिपसी' थे ।

हमने कहा—तुमसे किसने कहा ?

उसने कहा—मैंने खून किया है । बचनेके लिए मैंने सभी बातोंका पता लगा लिया है । तुम्हारी आँखें लाल थीं, दौड़ते समय तुम्हारी टाँगें टेढ़ी पड़ती थीं और पाँवके दोनों मोजे विभिन्न रंगके थे ।

अन्तिम बात सच्ची थी । उस आदमीकी पर्य्यवेक्षणशक्ति धन्य थी । उसने कहा—अँग्रेजोंके विचारसे मुझे कोई हानि नहीं पहुँच सकती । उसका इन्तजाम ठीक कर दिया है । पन्द्रह दिन सोचनेके बाद खून किया था, और फिर सोच देखिए कोई प्रमाण नहीं है । सिर्फ पाँव खुले रह गये थे । खून करनेके बाद बे अख्तियार हो गया था—पागल हो गया था । किन्तु मनमें बड़ी अशान्ति है । मनकी अदालतका दण्ड बहुत बड़ा है । ओः !

उसने छातीपर हाथ रखकर, आँखें बन्द करके मुँहकी नसों और मांसपेशियोंको सिकोड़ा । हमने शूलके रोगी देखे हैं, मृत्युके

समय लोगोंको छटपटाते देखा है, एक बार एक आदमीको सर्पाघातसे भी मरते देखा है, पर इस तरह तकलीफके मारे मुँह बिगाड़ते किसीको नहीं देखा। वास्तवमें उसपर हमें दया हो आई। उसे पापी जानकर फिर हम घृणा न कर सके। उसे पापी जानकर उससे सहानुभूति हो गई। उससे कहा—जहाँ जीमें आये तुम जाओ, हम तुम्हें पकड़ना नहीं चाहते।

उसने कहा—यह नहीं हो सकता। अभी सुनिए, उसके बाद पुलीसके हवाले कर देना। तुम्हें क्यों सुना रहा हूँ—जानते हो?

हमने अनमने होकर कहा—क्यों?

उसने कहा—तुम यदि हमारा सब इतिहास सुन सकोगे, तो जूरी तुम्हारा विश्वास कर लेंगे। तुम्हारे सामने मैं अपना दोष स्वीकार करता हूँ, इससे तुम्हारा इजहार जोरदार हो जायगा। यदि उस समय मैं हाकिमके सामने अपनेको निर्दोष भी कहूँगा, तो भी फिर नहीं बच सकता। समझ गये?

हम उस समय कुछ विशेष नहीं समझ सके, हमने अनमने हो कर कहा—हाँ।

उसने कहा—अच्छा तो सुनिए।

७

"बात पुरानी है—जैसी नाटक और उपन्यासोंकी होती है। प्रेमके सन्देहमें प्रेमिकाको जानसे मार डालना। पर एक बात है। सिर्फ पुरानी बात है, इतनी हमें शान्ति है।"

उसके बाद उसने अपनी कहानी कहनी शुरू की। वह किसी वकीलका मुहर्रिर था। हमारी तरह कभी कभी सुरा देवीकी उपासना भी

कर लेता था। उसके मकानके पास किसी जमींदारके कारिन्देकी सुन्दर स्त्री रहती थी। उसके प्रेममें फँसकर वह उसे कलकत्ते भगा लाया। लोकलज्जाके भयसे उस स्त्रीके रिश्तेदारोंने उसकी कुछ खोज न की। पाँच साल तक उस स्त्रीको उसने पत्नीकी तरह कलकत्तेमें अनेक जगहोंपर रक्खा। वह दलाली करके अपना और उसका खर्च चलाता था।

यहाँ तक सुनानेमें उसे एक घंटा लग गया। पहले तो वह दूसरेकी स्त्रीको लेकर भागनेमें पाप समझता था, पर फिर उसके मनमें दिन दिन प्रेम बढ़ता गया। उस समय उसकी अवस्था सिर्फ २३ वर्षकी थी। उसकी बातोंका अभी तक स्मरण है। उसने कहा था—क्या करता? मन नहीं मानता था। उसको भूलनेकी जितनी चेष्टा करता था; उसका चेहरा, उसकी मधुर मूर्त्ति, उसके हाथ-पाँव, मेरे मनमें उतने ही अधिक उदय होते थे; मुझे उन्मत्त करते थे, कर्त्तव्यज्ञानको लोप किये देते थे, संसारको भुलाये देते थे और संसारको ही स्वर्ग साबित करते थे। उसकी दृष्टिसे मुझे रोज ही उत्साह मिलता था। वह मुझे इशारेसे बताती थी कि मेरी पूजा ग्रहण करनेमें उसे कुछ आपत्ति नहीं है। उसे देखकर मुझे कैसी खुशी होती थी—यदि तुम किसीके प्रेममें पड़े होगे, तो जानते होगे। उसके कण्ठस्वरको सुनकर मेरा मन नाच उठता था। मेरे और उसके घरमें एक दीवारका ही व्यवधान था, इसलिए उसके गहनेकी आवाजको सुनकर मैं काँप उठता था, उसके नये कपड़ोंके खस खस शब्दसे मेरा मन मत्त हो जाता था। ओः! कैसा सुख था!

इसी तरहकी आवेगमयी भाषामें उसने अपनी कहानी सुनाई।

हम मन्त्रमुग्धकी तरह उसकी बातोंको सुन रहे थे। कभी कभी जीमें आता था कि यह आदमी पागल है।

वह पाँच वर्ष तक खूब अच्छी तरह कलकत्तेमें रहा। अन्तमें एक युवकके ऊपर उसे सन्देह हुआ। वही पुरानी बातें। इसके बाद उसने अपनी आँखसे उस स्त्रीको व्यभिचार करते देखा।

उसी दिनसे वह बदला लेनेके लिए तरकीबें सोचने लगा। वह भावुक था, स्त्रीको मार डालनेका उसने पक्का संकल्प कर लिया। वह सोचने लगा कि किस तरह हत्या करनेसे पुलिसके हाथसे बच सकता हूँ। उसने स्त्रीको यह न बताया कि वह उसकी दुष्टताको समझ गया है। उसने घर चलनेकी बात चलाई और स्त्रीको एक खाली मकानमें ले जाकर गला घोंटकर मार डाला।

हमने कहा--यदि वह युवक चाहे तो तुम्हें पकड़वा सकता है।

उसने कहा--असम्भव है। मैं सचमुच गाड़ी करके स्टेशन तक गया था। उस युवकने दूरसे देखा था और मोहिनीने भी उसे देखा था। इसके बाद स्टेशनसे मोहिनीको बहका कर मैं सर्कुलर रोडके एक खाली मकानमें ले गया। वहाँ उसको मार कर और चार दिनतक उसी मकानमें रह कर फिर अपने मकानपर वापिस आ गया। वहाँके किसी आदमीको कुछ भी सन्देह नहीं हुआ; और उसके घरके आदमी तो पहलेसे ही उसकी खबर नहीं रखते थे। इन सब बातोंका पहलेसे ही इन्तजाम कर लिया था।

हम थोड़ी देर तक चुप बैठे रहे। अभागिनी मोहिनीकी दशापर हमें दुःख होने लगा। उस आदमीके मुँहको देखकर भी दुःख होता था। वह आदमी कष्टके मारे काँप रहा था, उसका मुँह बिगड़ा

जाता था । हम सोच रहे थे कि अब वह और कुछ न कहेगा; जो कुछ कहना था कह चुका ।

उसने कहा—क्या कहूँ, पहलेसे ही अनुताप, भय, विस्मय, मर्म्मदाह, सभी कुछ हो रहा है ।

उसकी आँखोंमें फिर वही कटाक्ष प्रकट हुआ । वह कहने लगा—पहले तो मैं समझ नहीं सका । उसको मारकर अब जान सका हूँ । जिस स्त्रीने अपने पतिके साथ विश्वासघात किया, वह उपपतिके साथ क्यों विश्वासघातिनी न होगी ? मुझे उसको मार डालनेका क्या हक था ? मैंने उसे क्यों मारा ? मैंने जो मार्ग दिखाया था, वह उसीपर तो चली थी ! हा ! हा ! गुरुको मारनेवाली विद्या इसे ही कहते हैं । इसीलिए नारीहत्या की । इसीलिए इतनी ज्वाला, इतने कष्ट, इतनी यन्त्रणायें उठा रहा हूँ । उस समय यह सुबुद्धि क्यों न हुई ? ऐसा होता तो इस समय क्यों जलता ! अब मुझे पकड़वा दीजिए । ओः !

उस आदमीके दाँत आपसमें मिलकर कटकट शब्द करने लगे । उसके चेहरेकी मांसपेशियाँ बुरी तरह सिकुड़ने लगीं । नसें फूल गईं । वह काँपने लगा ।

उसने कहा—ओः ! कैसी यन्त्रणा है, कैसा दण्ड है, हे भगवन् !

थोड़ी देर बाद ही उसकी दृष्टि सरल हो गई । मुँहका आकार भी साधारण हो गया, और वह भी शान्त हो गया । अनमना होकर उसने कहा—भगवन् ! हरि ! उस दिनके बाद आज ही आपका नाम लिया है । हत्या कर चुकनेपर भी 'भगवान् हरि' कहनेसे कुछ कुछ शान्ति मिलती है । जो प्रचण्ड आग जल रही थी, उसमें कुछ कमी मालूम होती है । हाँ, कुछ कुछ शान्ति मालूम होती है । शायद अनुताप करते—

वह अपने आप बक रहा था। हमने देखा मानिकतलेके सब-इन्स्पेक्टर अपने किसी मित्रसे बातचीत करते हुए हमारी तरफको आ रहे हैं। हमारे मनमें संग्राम होने लगा। इस आदमीको किसकी अदालतमें देना चाहिए, अँग्रेजोंकी या विवेककी? वह अपने आप बके जाता था—"बड़ी ज्वाला है—बड़ा कष्ट है! इस कष्टमें भी भगवान्का नाम मेरे मुँहसे निकला! मेरे मुँहमें उनका नाम! पापीके मुँहमें—आश्चर्य है—अच्छा अब पकड़वा दीजिए।"

ठीक इसी समय नवीन बाबू हमारे पास हो कर निकल गये। पाँच हाथकी दूरीपर थे। हम किंकर्त्तव्यविमूढ हो गये। उसने कहा—अब शेष कर देना ही अच्छा होगा—चलिए।

वह उठ खड़ा हुआ। मन्त्रमुग्धकी तरह हम भी उठ खड़े हुए। उसने कहा—अन्त हो जाना ही अच्छा है। दिनरात मिनट मिनटपर फाँसी है। एक बारकी फाँसीसे ही—किन्तु—

हमने कहा—किन्तु कैसा?

जान तो एक तरहसे जा चुकी है। किन्तु क्या मैं मनुष्योंकी सेवा करके पृथ्वीका उपकार नहीं कर सकता? क्या प्रायश्चित्त नहीं हो सकता? यदि भगवान्—इसी नामसे मुझे शान्ति मिल जाय। अच्छा तो बचाइए।

वह हमारे पाँवोंपर गिर पड़ा। कहने लगा—प्राणोंकी भिक्षा दीजिए। जलने दीजिए। खूनीके मुँहसे भगवान्का नाम निकला है, तो शायद शान्ति मिल जाय। बचाइए। प्राणभिक्षा दीजिए। जलने दीजिए। डूबने दीजिए। अनुताप करने दीजिए।

हमने मन्त्रमुग्धकी तरह कह दिया—जाओ, भगवान्की अदालतमें।

उसने हमारे मुँहकी ओर न देखा । वह चला गया—इन्स्पेक्टरके करीब हो कर चला गया ! हम थोड़ी देर तक वहीं खड़े रहे । उसके बाद मकान गये । क्या किया, मालूम नहीं । मकान आकर आध बोतल व्हिस्की पी कर निद्रादेवीकी गोदमें सो गये ।

८

हम फिर उसी बागमें बैठे हुए थे, जहाँसे वापिस आते हुए वह कटाक्ष देखा था । उस दिन जैसा शीत था आज वैसी ही कड़ी धूप थी । दिनभर घरमें बन्द रहे थे । घरमें जैसा आमोद हो रहा था, उसे बताकर हम बंगालियोंके घरकी पोल नहीं खोलना चाहते । गान होता था, पर कौन गाता था—यह बात बताना नहीं चाहते । प्यास दूर करनेके लिए क्या चीज पी जाती थी—इस बातको भी हम बताना नहीं चाहते । पर उस समय हम यह बात नहीं जानते थे कि आमोद या स्फूर्तिके लिए कैसी पाशववृत्तिमें फँसे हुए हैं ।

शामके समय हम सब बागमें गये । कुछ लोग तो तालाबके किनारे बैठ गये और दो चार आदमी लताओंमें बैठ कर कोमल वृत्तिओंका प्रसार करने लगे । एक वकील साहब नशेमें बेहोश होकर संगमरमरके बरामदेमें चित हो गये और दूसरे मित्र उनकी खोपड़ीमें बरफ मलने लगे । हमें यह जीवन अब अच्छा मालूम नहीं होता था, पर अभ्यासके कारण उन लोगोंका साथ भी नहीं छोड़ सकते थे ।

दो मित्र बाहर गये हुए थे । वे लोग लौटते समय गेरुए वस्त्र पहने हुए किसी साधुको साथ लेते आये । तालाबके किनारे बैठकर वे लोग उसके साथ खूब दिल्लगी करने लगे । सभी उसके आगे हाथ फैलाये अपने अपने भाग्यकी परीक्षा कराना चाहते थे । साधु कहता था—मैं भिखारी हूँ—इन बातोंको नहीं जानता ।

हम भी उस मजेको लूटनेके लिए वहाँ पहुँचे। आँखसे आँख मिली। सर्वनाश! वही था!

मित्रोंके पाससे उसे बहुत मुश्किलसे उठाकर हम जहाँ घासपर बैठे थे वहाँ ही ले गये। हमने उससे कहा--यह क्या?

उसने कहा--कोशिश करता हूँ। आग बुझती नहीं है, पर कुछ कुछ शान्ति मिलती है। उस बातका ख्याल आते ही हरिनाम जपने लगता हूँ। ऐसा करनेसे कुछ कमी हो जाती है---किन्तु---

उसने गहरी साँस ली। हम घासपर बाईं करवटसे लेटे हुए थे। वह हमारे सामने बैठा हुआ था। हमने उससे कहा--अच्छी बात है, यदि हरिनाम लेनेसे सुख मिलता है--

हम उसके चेहरेको देखने लगे। वह अनमना हुआ हमारी पीठकी ओर देख रहा था। इस बार उसकी आँखोंमें कुछ कुछ भयकी विभीषिका दिखाई पड़ी। एक साथ उसने हमारे कन्धेपर लेट कर पीछेसे किसीको पकड़ लिया। ऐंजिनकी सीटीकी तरह एक शब्द सुनाई दिया। हमने भी डरते हुए पीछेकी ओर देखा। सर्वनाश! उस आदमीने एक बड़े काले साँपके मुँहको हाथसे दबा रक्खा था। साँप जुबान निकाल रहा था और उसके हाथको लिपटा जाता था।

डरके मारे हमारा मन सूख गया। उसने कहा--डरो मत। मैंने इसके मुँहको खूब अच्छी तरह पकड़ लिया है। बहुत करीबसे मुँह पकड़ लेनेसे फिर साँप भाग नहीं सकता।

सब बात हमारी समझमें आ गई। हमारा सिर घूम रहा था। उससे कहा--आज आपने हमारे प्राण--

उसने कहा—आपने भी तो मेरे प्राणोंकी रक्षा की है। इसीलिए तो यह वेश धारण किया है। उस दिन भीड़-मेंसे एक बालकको बचाया था। दूसरे दिन एक बुढ़ियाको जलमेंसे निकाला था और आज यह काम बन गया है। इन्हीं हाथोंसे एकके प्राण लिये हैं, पर तीन आदमियोंके प्राण बचा चुका हूँ। पर अब भी कैसी यंत्रणा है! ओः कैसी भीषण—

हमारे मित्र भी वहाँ आ पहुँचे। सबने उसे घेर लिया। उस समय सबने चन्दा करके उसे पाँचसौ रुपये देनेका विचार किया। किसीने उसका नाम पूछा, किसीने साँपकी जाति पूछी। किन्तु सभी उसके कृतज्ञ थे, सब उसे मूर्त्तिमान् देवता समझते थे।

उसने कहा—अच्छा, पहले साँपको फेंक आऊँ, बादको सबकी बातोंका जवाब दूँगा।

वह चला गया और फिर लौट कर बागमें नहीं आया।

हम कभी कभी उसकी उस बातको सोचा करते थे—जिन हाथोंसे एकको मारा है, उन्हींसे तीनको बचाया है। क्यों? इस बातका उत्तर नहीं मिलता था। जब कोई उत्तर नहीं मिलता था तब मनको समझानेके लिए हम कह देते थे कि यह लीलामयकी लीला है।

प्रत्यावर्त्तन।

१

दीनानाथ काबुलियोंका मुंशी है। शत्रुपक्षके आदमी उसे चामचिक (?) कहते हैं और इस हिसाबसे उसके मालिक गुर्बनखाँ, कोर्निशखाँ आदि पठान लोग छछून्दर हुए। परन्तु पठानोंके सुनते हुए, लोग यह बात कह सकते या नहीं, इसमें भारी सन्देह है। दीनानाथ भी यदि अपना उपनाम सुन पाता, तो भी शहरमें शान्तिभंग होनेकी पूरी सम्भावना थी। दीनानाथका बंगालियोंसे द्वेष था, इसीलिए उसने और सब कामोंको छोड़ कर काबुलियोंकी नौकरी कर ली थी।

बंगाली दीनानाथ बंगालियोंका द्वेषी था, इस बातमें विस्मयका कोई कारण न था। ऐसे अनेक देशसेवक, धनाढ्य बंगाली, जज, वकील, खिताबवाले, ठीकेदार आदि मौजूद हैं, जो पापसे तो घिन नहीं करते; पर बंगालियोंसे घिन करते हैं। लोग जिन अनेक कारणोंसे जातिद्वेषी हो जाते हैं, उनमें प्रधान कारण कमलाकी कृपा और अँग्रेज समाजभक्त बननेका विफल प्रयास है। यह कोई नहीं समझ सका कि दरिद्र दीनानाथ बंगालियोंकी जैसी पोशाक पहनता हुआ भी किस तरह जातिद्वेषी हो गया। नीमतलेके एक टूटे हुए मकानमें कोई तीस काबुली रहते थे। वे लोग एक एक रुपया महीनेके हिसाबसे तीस रुपये महीना उसे देते थे। दीनानाथ अँग्रेजीमें उनके हैंडनोट लिख दिया करता था, अनेक विषयोंमें उन्हें परामर्श देता था और जरूरत होनेपर अदालतमें उनके मुकदमोंकी पैरवी किया करता था। इन कामोंमें दीनानाथका खूब उत्साह था। क्यों कि

उसे वकीलोंसे कमीशन मिलता था। जरूरत होनेपर काबुलियोंकी झूठी गवाही भी वह देता था और इससे जो कुछ लाभ होता था, उसका अंश भी वह पाता था।

जब काबुलियोंके विपक्षमें कोई बंगाली होता था, तो दीनानाथका उत्साह और भी बढ़ जाता था। काबुलियोंको दीनानाथके इस बंगाली-विद्वेषका हाल मालूम था। इसीलिए गुर्बनखाँ उसकी दिल्लगी उड़ाते हुए कहता था "दीनू बाबू, देखो, यह आसामी बंगाली है। तुम्हारा जातभाई है। मिलमिलाकर कहीं काबुलियोंकी गर्दनपर छुरी मत चला देना।"

पठान मालिकोंके साथ बातचीत करते समय दीनानाथ उन्हें 'वन्ध्यापुत्र' कहकर पुकारा करता था। वह काबुलियोंकी बात सुनकर क्रोधमें भर कर कहता—नहीं वे बाँझके बेटे, नहीं। बंगालियोंसे मेरा सम्बन्ध होता, तो मैं तुम्हारे पास भी खड़ा न होता। दुनियाँमें मेरा कोई भाईबन्धु नहीं है। जो रुपया देता है, वही मेरा बाप है।

गुर्बनखाँ हँस कर शानबाजखाँसे पश्तो भाषामें कहता—"काफ़िरोंमें एक यही ईमानदार आदमी देखा है।"

२

दीनानाथ पथुरिया घाटके एक मकानमें रहता है। वह सदा अकेला रहता था। उसे किसीके साथ मिलना-जुलना पसन्द नहीं था। उस घरकी मालकिन बुढ़िया कादम्बरी उसका भोजन बन देती थी और एक दूसरी बुढ़िया उसका कमरा साफ कर देती थी। इन्हीं दोनों बुढ़ियोंसे दीनानाथ कभी कभी बातचीत कर लेता था। घरके अन्य रहनेवालोंसे वह कुछ वास्ता न रखता था। जाड़ेके दिनोंमें एक दिन

उसके पास चिलम सुलगानेके लिए दियासलाई नहीं थी। उस समय उसके जीमें एक बार आया था कि "पास रहनेवाले हेम बाबूसे दियासलाई माँग लूँ। " पर उसके मनने उसी समय उसे सचेत कर दिया—" क्या करता है? बंगाली—हतभाग्य जात है। अभी पिछली तीन पुश्तोंका इतिहास पूछेगा—तब कहीं एक दियासलाई देगा।" दीनानाथने उस दिन तम्बाकू नही पिया, पर वह बंगालीके दर्वाजेपर नहीं गया।

एक दिन दीनानाथ शामके समय अपने मकानको आ रहा था कि किसीने धीरेसे आकर उसके कन्धेपर हाथ रख लिया। शीतकाल था--खूब ठण्ड पड़ रही थी। उस आदमीका मुँह शालसे ढका हुआ था। दीनानाथने उसकी ओर देखकर कहा--कौन?

उस आदमीने मुँह खोला। दीनानाथसे उसका मुँह नही देखा गया। दोनोंके मुँहकी आकृति एकसी थी। हाँ, दीनानाथके मुँहपर जो कठोर भाव था वह उसके मुँहपर नहीं था। आगन्तुकने दीनानाथका हाथ पकड़ लिया—और कहा—" दीनू, एक बात सुन—"

दीनूने झटका मार कर हाथ छुड़ा लिया और उसकी बातका उत्तर दिये बिना ही वह चलने लगा। उसने इस बार दीनूका कन्धा पकड़ा और कहा—दीनू, अपने बड़े भाईकी बात सुन ले, जो होना था हो गया, अब कुछ---

इस बार दीनू लौटा और बात कहनेके लिए सामने आकर खड़ा हो गया। उसने बड़े भाई काशीनाथकी आँखसे आँख मिलाकर दृढ़ भावसे पूछा--क्या कहते हो?

काशीनाथने कहा--जो होना था हो गया। अब घर चल। मैं लोगोंको मुँह नहीं दिखा सकता।

दीनानाथ भौंहें चढ़ाकर बोला--क्यों ?

काशीनाथने कहा--वे बहुत बुरी बुरी बातें कहते हैं। कहते हैं कि नीमटोलेके सेन-परिवारका लड़का काबुलियोंका---

दीनानाथने गरज कर कहा--"कौन कहता है ?" इसके बाद उसने बहुत बुरी बुरी गालियाँ दे डालीं। फिर कहा--तुमने जिस समय श्रीचरणसे जूता खोल कर इस मुखपर---

दीनानाथकी आँखोंसे आगकी चिनगारियाँ निकल रही थीं। भयसे काशीनाथ दो क़दम पीछे हट गया। दीनानाथने कहा--डरो मत। मेरे जीमें उस बातका ख्याल होता, तो अबतक तो---

काशीनाथने साहस पाकर कहा--अच्छा, मैं तेरा बड़ा भाई हूँ। तेरे पाँव छूता हूँ। पिताने तुझे सम्पत्तिमेंसे कुछ नहीं दिया, मैं तुझे आधी सम्पत्ति देता हूँ। अब वंशका नाम मत डुबा।

"वंशका नाम? बड़ा भारी वंश है! वंशकी---" इसके बाद बुरी भाषामें गाली देकर दीनानाथ घरकी ओर न जाकर दूसरी तरफ़ चला गया। किंकर्त्तव्यविमूढ़ हुआ काशीनाथ पहले तो कुछ देरतक वहीं खड़ा रहा, उसके बाद धीरे धीरे घरकी ओर चल दिया। मनमें मानकी आग जल रही थी और साथ ही साथ यह भी भय था कि दुष्ट भाई कहीं पीछेसे आकर छुरी न भोंक दे।

३

इसके बाद एक साल तक दीनानाथको काशीनाथ नहीं दिखाई दिया। उसके मनमें कभी कभी यह डर होता था कि कहीं बड़ा भाई आकर फिर पुरानी बातोंका उल्लेख न कर बैठे। वह अपने कुटुम्बियोंको भूलनेकी जितनी चेष्टा करता था, कुटुम्बी लोग

उतना ही उसके स्मृतिपटपर अपना प्रतिबिम्ब डालते थे। कभी कभी वह सोचता कि उन्हें क्षमा ही कर देना चाहिए और फिर सोचता कि उन्हें यदि दण्ड न दिया, तो फिर इस तरहके जीवनसे लाभ ही क्या हुआ? वह कभी कभी पुरानी बातें भी सोचा करता था। जब कभी वह उन बातोंको भूलने लगता था, तब उसका मन पुरानी बातोंके अनेक चित्र उसके सामने रख देता था। दीनानाथ फिर उन घटनाओंपर विचार करने लगता था। वह जवानीमें दुर्वृत्त था, पढ़ता लिखता न था, शराब पीता था—इन्हीं कारणोंसे पिताका विरक्तिभाजन बन गया था। अच्छी बात है। तो क्या सब दोष मेरा ही है? पिता ठीक तरहसे शासन करते, तो मेरे उक्त दोष न बढ़ने पाते। पिताकी बीमारी—अन्तिम बीमारीके समय मैं न कभी उनके पास बैठकर रोया और न चिल्लाया। उस समय भी मैं अपनी मौजमें रहता था। बहुत ठीक तो था। पिताकी परिचर्य्या करनेवालोंकी कमी भी तो नहीं थी। काशीनाथ पिताके पास बैठा रहता था। दीनानाथ अच्छी तरह जानता था कि वह केवल शोक करनेका ढोंग करता है। उसी समय पिताने वसीयतनामा लिखकर अपनी कुल सम्पत्ति काशीनाथको दे दी। काशीनाथ भी कैसा झूठा और नारकी है! कहता है, वैसा करनेके लिए उसने पितासे जब निषेध किया, तब वे सारी सम्पत्ति किसी शुभकर्म्मके लिए गवर्नमेण्टको देनेके लिए तैय्यार हो गये! बिल्कुल झूठ! सोलह आने झूठ! अच्छा, बापकी सम्पत्ति पाकर काशीनाथने ही दीनानाथके नाम उसमेंसे आधी क्यों न लिख दी? और झूठा काशीनाथ उसे समझानेकी चेष्टा करता है कि मृत्युशय्यापर पड़े हुए पिताने वैसा न करनेके

लिए उससे शपथ ले ली है । वह बालक था, अज्ञान था । काशीनाथने उसे घरमें रहनेके लिए कहा था । कहा था--" भाई, जैसा मैं खाऊँ, पिऊँ, वैसा ही तुम भी खाओ, पिओ । " कैसे अहंकारकी बात थी ! उसे भिक्षुककी तरह रखना चाहता था ! क्या उसके हाथ-पाँव नहीं हैं ? वह शराबी है, तो क्या रुपया पैदा नहीं कर सकता ? सभीने बड़े भाईका पक्ष लिया, किसीने पिताका दोष नहीं देखा । हायरे बंगाली, हायरी गुलाम जाति, यही तेरा न्याय-विचार है !

दीनानाथको आखिरी कलहका दिन भी याद आगया । उसकी धमनीका खून गर्म होता जाता था । उस दिन दीनानाथ कुछ नशा करके आया था । उसने जैसा कि वह प्रायः कहा करता था अपने भाईसे कहा—"मैं कुछ नहीं जानता, बापकी सम्पत्तिको, आधा बाँट दो, नहीं तो अभी जानसे मार डालूँगा । " पहले तो काशीनाथने बहुत कुछ मिन्नत की, नौकरोंके सामने झगड़ा करनेके लिए मना किया, अन्तमें कुछ क्रोध भी दिखाया, परन्तु दीनानाथ छोड़ने-वाला नहीं था । उसने भाईको गाली दी । फिर भी काशीनाथने कुछ नहीं कहा । कहता भी किस मुँहसे ? भाईकी सम्पत्तिको हजम करके वह किस मुँहसे गालीका उत्तर दे सकता था ? अन्तमें दीनानाथने पिताको गाली दी । क्यों न देता ? जो पिता अपने पुत्रको घर घरका भिखारी बना जाय—उसकी क्या कोई स्तुति करेगा ? दीनानाथको मन ही मन गर्व होने लगा । भाईके उस दिनके व्यवहारसे क्रोधके मारे दीनानाथको चारपाईपर पड़ा रहना मुश्किल हो गया । उसको शान्त करनेके लिए पहले तो काशी-नाथने बहुत कुछ विनय की और फिर क्रोध किया । अन्तमें

उसकी आज्ञासे भोजपुरी दरबानने उसे पकड़ लिया और काशी-नाथने अपने हाथसे एक एक गिनकर उसके सिरपर पचीस जूते जमा दिये !

दीनानाथ ये बातें सोचकर चारपाईपर बैठ गया। इस बातको आज सात साल हो गये। उस दिनसे दीनानाथने पिताके घरमें प्रवेश नहीं किया। उसकी भावज आकर यदि काशीनाथको न रोकती, तो दीनानाथको और भी मार खानी पड़ती। भावजपर उसे कुछ भी क्रोध नहीं था। उसका क्या दोष था? उसकी तो बड़ी ही ज्योतिर्मयी और शान्तमूर्त्ति है। वह यदि विवाह करता, तो उसके घर भी ऐसी ही लक्ष्मीस्वरूपिणी स्त्री होती! दीनानाथ और न सोच सका। वह चारपाईसे उठकर एक ग्लासमें शराब भरकर बिना जल मिलाये ही पी गया।

४

"दीनू बाबू, सुना?" दमबाज खाँने कहा—"दीनू बाबू तुमने सुना?"

"क्या कहता है बे?"

दमबाज़ खाँ उसे यथासाध्य हिन्दीमें समझानेकी कोशिश करने लगा। उसने कहा—मारवाड़ी हिन्दू उनके धर्ममें बाधा डालना चाहते हैं। मुसल्मान लोग अमरतला नामकी गलीमें बक़र ईदपर गोवध करना चाहते हैं। मारवाड़ी उस काममें विघ्न डालते हैं। हर रोज़ खानेके लिए शहरमें न जाने कितनी गायें काटी जाती हैं—उसका प्रतिवाद कोई नहीं करता; किन्तु धर्मके नामपर गोवध होगा—यह सुनते ही हिन्दू लोग उसमें बाधा डालते हैं। यह ठीक है कि उनके देशमें इतना गोवध नहीं होता है; किन्तु वे काबुलनिवासी

हिन्दुओंके किसी धर्म्मकार्य्यमें कभी बाधा नहीं डालते हैं । अमीर साहबका इस विषयमें बहुत कड़ा हुक्म है ।

बंगाली-द्वेषी होनेपर भी दीनानाथ इस विषयमें काबुलियोंकी बातका समर्थन नहीं कर सका । बंगालियोंसे उसका कोई सम्बन्ध न था; पर फिर भी यह संस्कार उसके खूनमें मिला हुआ था । उसने बात बदलनेके लिए कहा—तुम्हारे काबुलमें क्या बहुत हिन्दू हैं ?

दमबाज़खाँने कहा—हाँ हैं । ख़ज़ानेके विभागमें बड़े बड़े पदोंपर सब ब्राह्मण या खत्री ही हैं । मोदीकी दूकानोंके मालिक भी बनिये ही हैं । उनकी भाषा पश्तो और वेश काबुलियों जैसा ही है; सिर्फ़ उनकी पगड़ी पीली होती है । काबुलमें हिन्दू-मुसलमानोंमें बस यही भेद है ।

दीनानाथने कहा—वहाँ मन्दिर भी हैं ?

शाहबाज़खाँने कहा—काबुल शहरके अन्दर अनेक मन्दिर हैं । कन्दहार और ग़ज़नीमें भी हैं । किन्तु तुम्हारी तरह वे लोग—

फ़क़ीर शाह काबुलीने कहा——शैतान नहीं हैं ।

घरमें जितने काबुली रहते थे सभी बेतरह उत्तेजित हो रहे थे । दीनानाथको उस समय वहाँ बैठना अच्छा नहीं मालूम हुआ । उसने घरमें चारों तरफ़ दृष्टि घुमाकर देखा कि काबुलियोंका भोजन तय्यार है । चर्म्म और शृङ्गरहित बकरेका सिर और ढालकी तरह बड़ी बड़ी रोटियाँ । काबुलियोंको यही भोजन बहुत प्यारा है । उसने कहा—"अच्छा यह तो बताओ, तुम लोग यह मूँड़ क्यों खाते हो ?"

जुल्फिकारखाँने कहा—हमारी आदत । मगर इन काफ़िर मारवाड़ियोंको हम जानसे मार डालेंगे ।

उनकी उत्तेजना क्रमशः बढ़ती जाती थी। एक आता था और एक जाता था। समाचार पाकर पठान लोग बेतरह उत्तेजित हो रहे थे। बातचीत पश्तो भाषामें होने लगी। दीनानाथको उनकी बातोंका मर्म न मालूम होता था। पर वह इतना समझ गया कि बक़र ईदके दिन कलकत्तेमें शान्ति नहीं रह सकेगी।

दो पहरका समय था। उस समय तक काबुली खूब उत्तेजित थे। ईदके विषयमें बातें हो रही थीं। उस दिन कुछ काम नहीं था। दीनानाथ एक टूटी हुई चारपाईपर पड़ा हुआ किसी अखबारको पढ़ रहा था। इतनेमें एक दुबला पतला बड़ी लम्बी दाढ़ीवाला मुसलमान वहाँ आया। उसीकी लकड़ीके दस्तेपर अर्द्ध-चन्द्रका आकार बना हुआ था। घरमें आते ही उसने अरबी भाषामें कुछ वाक्य कहे और बादको उन्हें सलाम किया।

गुर्बनखाँने कहा—सलाम। भाई, तुम कौन हो?

उस आदमीने अपना परिचय दिया। मैं धर्म्मप्रचारक हूँ। किसी मुसल्मानके मरनेपर मैं उसके शवदेहको यथाविधि स्नान कराता हूँ। दीनानाथने उसे गौरसे देखा--वास्तवमें वह यमदूतसा मालूम पड़ता था। दीनानाथ निश्चय नहीं कर सका कि उसकी यह जीविका मौरूसी है या किसी दिल्लगीबाज़ने उसकी सूरत देखकर ही यह काम उसके सिपुर्द कर दिया है। उसने अपने आनेका कारण बताया। किसी मसजिदके मौलानाने उसे भेजा है। इसलामपर घोर विपत्ति आई है। काबुली धर्म्मपरायण हैं। इस विपत्तिमें देशी मुसल्मानोंको काबुलियोंकी सहायता मिल सकती है या नहीं, यही बात मौलानाने इस दूतके द्वारा जानना चाही है।

काबुलियोंने एक वाक्यसे अपनेको धर्म्मके लिए प्राण देनेको तैय्यार बताया । वाग्मी यमदूतने अपनी ज़ोरदार भाषामें मारवाड़ि-योंपर क्रोध प्रकट किया । निस्सन्देह उसकी उर्दूभाषाको काबुली बारह आने नहीं समझ सके । दीनानाथको देखकर कहा—क्या यह हिन्दू है ?

जुल्फिकारने कहा—बंगाली है, यह हम लोगोंका भाई है ।

मुर्दोंको स्नान करानेवालेने कहा—बंगाली तो हमारे भी भाई हैं। बंगाली विद्वान् और बुद्धिमान् जाति है । वे लोग हमारी मुख़ालफत नहीं करते । सिर्फ मारवाड़ी—कमबख्त काफ़िर मारवाड़ी—

उसने फिर मारवाड़ियोंपर ज़हर उगलना शुरू कर दिया । काबुलियोंने वादा किया कि वे इस्लामके लिए प्राण देनेको तैयार हैं ।

५

कलकत्तेके इतिहासमें सन् १९११ ई० की बक़र ईद एक कलङ्क है । दो तीन दिनके लिए शहरमें अराजकता हो गई थी । मारवाड़ियोंके हिन्दू भृत्यों, गुण्डों और नीचे दर्जेके मुसल्मानोंमें खूब झगड़ा हुआ । दोनों दलोंके विचारवान् और विद्वान् पुरुष चेष्टा करनेपर भी इस झगड़ेको न निबटा सके । बंगा-लियोंने भी दोनों दलोंको समझानेकी चेष्टा की, पर फल कुछ नहीं हुआ । राजपुरुषोंकी चेष्टा भी विफल हुई । अग्नि तेजीसे जलने लगी । नीच दर्जेके मूर्ख मुसल्मानोंको खूब सुयोग हाथ लगा । उन्होंने धनाढ्य मारवाड़ियोंके मकानोंको लूटना शुरू कर दिया । दो दिन तक खूब लूटमार जारी रही । राजपुरुष भी शान्तिरक्षा नहीं कर सके । अनेक विवादी जख्मी होकर अस्पताल पहुँचे । दोनों पक्षोंके सैकड़ों आदमी मारे गये ।

लूटके काममें काबुलियोंने खूब उत्साह दिखाया। लूटकी पहली रातमें दीनानाथको नींद नहीं आई। वह शय्यापर पड़ा हुआ चिन्ता करता रहा और प्रातःकाल होते ही काबुलियोंके मकानकी ओर चल पड़ा।

काबुली खूब प्रसन्न थे। दस वर्ष लाठी घुमा घुमाकर सूद वसूल करनेसे जितना लाभ होता, उतना एक ही दिनमें हो गया था। दीनानाथको उन्होंने सब बातें कह सुनाईं और पुलीसके हाथसे बचनेका उपाय पूछा।

आज दीनानाथ खूब गभीर और चिन्ताशील था। उसने कहा—मैं सब बन्दोबस्त कर दूँगा। चोरीका माल कहीं छिपा दो।

एक काबुलीने कहा--हाँ, बाबू, बन्दोबस्त कर दो। उसमें तुम्हारा भी हिस्सा है।

दीनानाथने कहा--मेरा हिस्सा उसमें नहीं है। पर जो काम आजका होगा, उसमें मेरा हिस्सा रहेगा। सब लोग मेरे साथ आओ।

जुल्फिकारने पूछा--कहाँ?

दीनानाथने कहा--सरदारकी बाड़ीमें। काफिरोंका जो प्रधान नेता है, और जिसके परामर्शसे तुम्हारे धर्म्ममें विघ्न पड़ा है, उसके यहाँ। वहाँ बहुत माल है।

रक्तलोलुप शेरोंके लिए यह कुछ कम उत्तेजनाकी बात नहीं थी। धर्म्मका नाम आते ही विवेककी आँख मुँद जाती है। वे लोग सम्मत हो गये। 'अल्लाहो अकबर' और 'दीन--दीन' कहता हुआ पिशाचोंका दल चल खड़ा हुआ। उनमें सबसे आगे दीनानाथ था।

६

प्रातःकाल होते ही काशीनाथकी आँख खुली थी। शय्यापर लेटा हुआ वह भगवान्‌का नाम ले रहा था। उसकी साध्वी स्त्री मनोरमा

प्रातःकाल ही स्नान करके मन्दिरका द्वार खोल रही थी। उसके तीनों पुत्र उस समय तक निद्रामग्न थे। सबसे बड़े लड़केकी अवस्था सोलह वर्षकी थी; मझलेकी तेरहकी और छोटेकी पाँच वर्षकी। सदर दर्वाज़ेका दरबान भी उठ बैठा था।

दीन दीन कहते हुए काबुली आगे बढ़े जाते थे। आगे आगे विभीषण दीनानाथ था। सारी रात जागकर उसने यही नृशंस कार्य्य करनेका निश्चय किया था। डाकुओंका दल सदर दर्वाज़ेपर आ टूटा। दरबानने बाधा दी। जिस दरबानने दीनानाथको पकड़-कर घरसे बाहर निकाला था, उसे देखकर दीनानाथका उत्साह और भी बढ़ गया। पिशाचोंके दलके साथ वह भी नाचने लगा। उधर अकेला रामसिंह था, वह कबतक लड़ सकता था? खूनसे लथ-पथ होकर वह ज़मीनपर गिर पड़ा। दीनानाथको बड़ी खुशी हुई। वह आगेको बढ़ा। काशीनाथ भी गड़बड़ सुनकर बाहर आ गया। काबुली लोग कुछ झिझके। मौलानाका हुक्म था कि 'बंगालियोंपर अत्याचार न किया जाय।' दीनानाथने कहा—कुछ डर नहीं, बंगाली होनेपर भी यह शैतान है। इसीके परामर्शसे मारवाड़ियोंका दल—

पिशाचोंके लिए इतना कहना ही काफी था। वे लोग आगे बढ़ने लगे। काशीनाथ भी समझ गया कि क्या होने वाला है। उसने मन-ही-मन कहा—हे भगवन्, बदला लेनेके लिए क्या यही बात बाकी रह गई थी?

उसने भाईका हाथ पकड़ा, पाँव छुए और कहा—तेरे मनमें जो हो, कर; पर अपने पिताका घर इन गोभक्षकोंसे मत लुटा। ये लोग बड़ा ऊधम करेंगे। देवताके स्थानको अशुद्ध करेंगे—वहाँ भी लूटपाट करेंगे। भाई, क्षमा कर! क्षमा कर!

दीनानाथने बड़े ज़ोरसे हँस दिया और कहा—पैतृक सम्पत्ति—और पैतृक देवता ! एक आँखका बाप और एक आँखके देवता ! सोच तो सही, सात सालसे किसका अन्न खा रहा हूँ ? पैतृक सम्पत्तिका या म्लेच्छ काबुलियोंका ?

काबुली बाहरका घर लूट रहे थे । वहाँ कुछ विशेष चीजें नहीं थीं । चाँदीके हुक्केका नारियल तोड़कर उन्होंने उसकी चाँदी निकाल ली । एक आदमीने वहाँपर टँगा हुआ एक बढ़िया झाड़ तोड़ डाला।

गोलमाल सुनकर दीनानाथके भतीजे भी वहाँ आ गये । रमेन्द्रको दीनानाथने पहचान लिया । उसने उसे खिलाया था । अन्दाज़से सत्येन्द्रको भी पहचान लिया । सत्येन्द्रने चचाको नहीं पहचाना । काशीनाथने कहा भाई----पठानोंको मना कर दे और तू सारा घर लेले । मैं बच्चोंको लेकर अभी मकानसे निकला जाता हूँ ।

हँसता हुआ काबुलियोंका दल मकानके भीतरी भागकी ओर बढ़ा । काशीनाथ चीख मारकर रोने लगा । उसकी स्त्रीने भीतरका द्वार बन्द कर लिया । काबुली दर्वाजेपर लातें मारने लगे । रमेन्द्रने भी समझा कि क्या हो रहा है । उसने चचाके पाँव पकड़ लिये । दीनानाथ हँस पड़ा । काबुली दर्वाजा तोड़कर अन्दर दाख़िल हो गए ।

एक दुष्टने रमेन्द्रको लात मारी । काशीनाथको भी मारा और रमेन्द्रसे कहा—काफ़िर, बाबूको छोड़ दे । आओ बाबू, तोशा ख़ाना दिखाओ ।

दीनानाथ उनके साथ अन्दरकी ओर चल दिया ।

७

तमाम दर्वाजे बन्द करके रेशमी वस्त्र पहने मनोरमा ठाकुरजीके मकानकी चौखटपर खड़ी थी । दीनानाथकी आज्ञासे काबुली उसका मकान लूट रहे हैं—यह बात उसे नहीं मालूम थी । हिन्दु-

ओंके घर लुट रहे हैं, इसीलिए धन लेनेके लोभसे काबुली उसके मकानमें भी घुस आये हैं। जो होना है, होगा—उसे कौन रोक सकता है? वह बाहर पति और पुत्रके कण्ठस्वरको सुन रही थी; वे दोनों अक्षत शरीर हैं—यह जानकर मुरलीधर भगवान्‌की ओर देख रही थी। गहनेसे लदी हुई काले पत्थरकी मूर्त्ति उसकी ओर देख रही थी। पाषाण--देवताके मनकी बात कौन समझ सकता है? वह रो रही थी। दुर्बलके अस्त्र आँसू हैं—वह उन्हीं अस्त्रोंसे सज्जित थी।

घरमें तीन काबुली दिखाई दिये। वे वनके भीमदर्शन रक्तलोलुप शेरोंसे भी अधिक भीषण दिखाई देते थे। बाकी घरके दर्वा-जोंको तोड़नेमें लगे हुए थे। उसे देखकर वे लोग हँस उठे। मुरली-मोहनके सोनेके गहनोंको देखकर वे लोग खुशीके मारे चीखें मारने लगे। वनकी नदीके स्रोतकी तरह काबुली देवमंदिरके सामने आकर उपस्थित हो गये। मनोरमाने अपने देवरको देखा। तो क्या दीनानाथ ही उन्हें लाया है?

मनोरमाको खड़ा हुआ देखकर सभी हिचकिचाये। जुल्फि-कारने कहा—बीबी, हट जाओ।

मनोरमाने उसकी बातका उत्तर नहीं दिया। वह पाषाणमूर्ति बनी हुई दीनानाथकी ओर देखती रही। इस बार दीनानाथ काँप उठा। मनोरमाने कहा--क्या तुम ही—

दीनानाथ स्थिर हो गया। मनोरमाने कहा—लाला, तुम्हारी बापसे शत्रुता है, भाईसे शत्रुता है; पर अपनी माँका तो ख्याल करो। वे इसी देवस्थानमें बैठती थीं। एक बार माँकी मूर्तिका ध्यान करो। क्या मेरे बालक भी तुम्हारे शत्रु हैं? काबुली कुछ न समझ सके। सब एक दूसरेकी ओर देखने लगे। मनोरमा मंदिरके सामने पद्मासन

लगाकर बैठ गई। उसने कहा—आप सब घर लूट लीजिए, मैं कुछ नहीं कहती। किन्तु इस मंदिरको छोड़ दीजिए। तुम्हारी माँ इसी घरमें बैठकर पूजा करती थी। जब तक मैं जिन्दा हूँ, तब तक कोई भी इस घरमें——

उसने बड़ी करुण दृष्टिसे दीनानाथकी ओर देखा। यह अस्त्र उसपर किसीने नहीं चलाया था। उसकी मातृमूर्ति उसके सामने आ गई। मानों उसकी नींद टूट गई। उसने काबुलियोंसे कहा—अच्छा, रहने दो, चलो।

गुर्बनखाँने हँसकर कहा—क्या दीनू बाबू खूबसूरत औरतको देखकर—

दीनानाथने लाल लाल आँखें करके कहा—चुप।

एक दूसरे आदमीने कहा—बाबू कुछ हर्ज नहीं, हम इसे भी लिये चलते हैं।

सभी हँस पड़े। दो चार आदमियोंने कहा—अच्छा पहले और घर ही सही।

वे लोग दर्वाज़ेपर लातें मारने लगे। इसी समय दीनानाथकी मोहनिद्रा भंग हो गई। धीरे धीरे उसकी समझमें आने लगा कि वैरके वशीभूत होकर मैंने कैसा बुरा काम किया है। वह यथासाध्य उन दुष्टोंको समझाने लगा। परन्तु हाय अदृष्ट! एक बार आग लग जानेपर क्या वह यों ही बुझ जाती है?

कौन किसकी बात सुनता? उसकी बातपर काबुली हँसने लगे। धड़ाम धड़ाम शब्द होने लगा। दर्वाजोंपर धड़ाधड़ लातें पड़ने लगीं। अन्तमें एक द्वारके किवाड़ टूट गये। हो हो करके वे लोग एक साथ उसमें घुस गये।

दीनानाथ सिरपर हाथ मारता हुआ इधर उधर घूमने लगा और काबुलियोंसे बिनती करने लगा। वे लोग माल असबाब लूटनेमें लग रहे थे। दीनानाथ मनोरमाके पास गया और उससे बोला—भाभी, उस घरमें क्या है? क्षमा करो भाभी, आज मैं अपने प्राण देकर प्रायश्चित्त करूँगा। तुम्हारा रुपया—पैसा किस घरमें है!

मनोरमाने आँखें खोलीं। उसने कहा वह तो बच्चोंका घर है? मेरा घर उसके पास है। यह लो ये चाबी हैं। आज धोखेका दिन नहीं है। माँका ध्यान करो, माँके मुखका स्मरण करो। मैं तुम्हारी बड़ी हूँ, तो भी तुम्हारे पाँव छूती हूँ।

दीनानाथने चाबियोंका गुच्छा कहीं छिपा दिया। इस समय मनोरमाको अपने मनकी बात समझाना उसने असम्भव समझा। अब वह काम करके दिखायेगा। हाय हाय कैसा सर्वनाश है! साध्वी भावज, सुकुमार भतीजे, धर्म्मप्राण भाई—इनके सामने प्राण कुछ भी नहीं हैं। उन्हें खोकर ही प्रायश्चित्त करूँगा।

उसने काबुलियोंकी बहुत खुशामद की। अन्तमें कहा--पुलीस आ रही है, भागो भागो।

यह सुनकर काबुली हँसने लगे। अब दीनानाथ पुलीस पुलीस कहकर पुकारने लगा। एक आदमी लाठी खींचकर कहने लगा—मिलकर धोखा देता है, बदमाश!

अब काबुली भी नाराज हो गये। अब वे समझे कि बंगाली बेईमानी करना चाहता है। उधर काशीनाथ लड़कोंको लेकर मोहल्लेके लोगोंको इकट्ठा कर रहा था। मकानके पास बहुतसे आदमी इकट्ठे हो गये। उनमें दो-चार आदमी पुलीसके भी थे। पुलीसके और सिपाही भी आ रहे थे। इस समय भी भागनेका अवसर है;

किन्तु भागनेसे पहले बेईमानीका दण्ड जरूर देना चाहिए। उन सबने मिलकर दीनानाथपर लाठी चलाई। वह अकेला कहाँ-तक लड़ सकता था? वह खूनमें लथपथ होकर जमीनपर गिर पड़ा और काबुलियोंका दल भाग गया।

मनोरमाने दौड़कर उसे गोदमें उठा लिया। देवस्थानसे गंगाजल लाकर उसके मुँहमें डाला। अपनी रेशमी साड़ीसे वह उसका खून पोंछने लगी और रोने लगी---मुरलीमोहन, प्राण दो भगवन् प्राण दो। हे देव बचाओ।

काशीनाथ भाईके गलेसे लिपटकर रोने लगा। भाई दीनू, उठ उठ। तेरा कुछ भी दोष नहीं था--दोष मेरा ही था।

मनोरमाने कहा--लाला, एक बार तो आँख खोलकर देखो।

दीनूने आँखें खोलीं। उसने भावजको रोते हुए देखा, भाईका रोना सुना, बच्चोंका कातर मुँह देखा। वह रो पड़ा, शरीरकी वेदनासे नहीं, मनकी ज्वालासे; देहकी यंत्रणा उसे तुच्छ मालूम होती थी। उसके मनमें विषमज्वाला जल रही थी। उसने अति क्षीण कण्ठसे कहा--भाई और भाभी, क्षमा---

भावजने अपने आँचलसे उसकी आँखें पोंछीं। भाई रोने लगा, रमेन्द्र भागा हुआ डाक्टरको बुलाने गया। नीचे पुलीसने तीन पठानोंको गिरफ्तार कर रक्खा था, पर उसने उस तरफ नहीं देखा। चाचा घर लौट आये और वह डाक्टरको लेनेके लिए दौड़ा।

समाप्त।